झाँसी की रानी

वृंदावनलाल वर्मा

झाँसी की रानी

वृंदावनलाल वर्मा


प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

परिचय

दीवान आनंदराय मेरे परदादा थे। वह रानी लक्ष्मीबाई की ओर से लड़ते-लड़ते सन् १८५८ में मऊ की लड़ाई में मारे गए थे। जब मेरी परदादी का देहांत हुआ, मैं आठ वर्ष का था। परदादी से रानी के विषय में बहुत सी कहानियाँ सुना करता था। उन्होंने रानी को देखा था।

उन कहानियों की धरोहर मेरी दादी के पास रही। वह समय-समय पर उनसे मुझको मिलती रही। जब दादी का देहांत हुआ, मुझको वकालत आरंभ किए छह वर्ष के लगभग हो चुके थे।

वह धरोहर अद्‌भुत होते हुए भी अस्पष्ट थी और उसकी रूपरेखा धुँधली तथा सत्य के आधार पर कम, भक्ति के ऊपर अधिक थी। इधर इतिहास के अध्ययन और तथ्यों के अनुशीलन ने उस धरोहर के मूल्य को कम कर दिया। सामने केवल पारसनीस की पुस्तक 'रानी लक्ष्मीबाई का जीवन-चरित्र' थी। वह इतिहास का कंकाल मात्र न थी; परंतु दादी-परदादी की बताई हुई परंपरा के विरुद्ध थी। पारसनीस के अन्वेषण काफी मूल्यवान् होते हुए भी उनका विचार कि रानी झाँसी का प्रबंध अंग्रेजों की ओर से 'गदर' के जमाने में करती रहीं, परदादी और दादा की बताई हुई परंपराओं के सामने मन में खपता नहीं था। तो भी मैं सोचता था, शायद ये परंपराएँ जनता के इच्छा-संकल्पों (Wishful thinking) का फल हैं, इसलिए छुटपन से जिस मूर्ति की मन में निष्ठापूर्वक पूजा करता चला आ रहा था, उसके प्रति कुछ नास्तिकता उत्पन्न हो गई।

सुनता रहता था कि रानी स्वराज्य के लिए लड़ी थीं, पारसनीस के ग्रंथ में पढ़ा कि इनका शौर्य विवशता की परिस्थितियों में उत्पन्न हुआ था! मैं जब बोर्डिंग हाउस के जीवन में था, एक रात स्वप्न देखा कि हॉकी-ग्राउंड पर युद्ध हो रहा है और मैं रानी की तरफ से 'स्वराज्य' के लिए लड़ता हुआ घायल हो गया हूँ, तब जागने पर बड़ा अचंभा हुआ, क्योंकि खेल में उस दिन हॉकी का डंडा भी नहीं खाया था।

यह स्वप्न भी मुझको प्राय: दिक किया करता था।

सन् १९३२ तक यह उथल-पुथल अर्द्ध-सुसुप्त रूप में मन के किसी कोने में पड़ी रही।

एक दिन एक साहब ने कहा, 'जजी-कचहरी की एक अलमारी में चालीस-पचास चिट्ठियाँ रखी हुई हैं, जो १८५८ में किसी अंग्रेज फौजी अफसर ने ले. गवर्नर के पास झाँसी को अधिकृत कर लेने के बाद, रोज-रोज भेजी थीं।'

मैंने उन चिट्ठियों की नकल करवाई। उनमें कोई खास बात तो नहीं मिली, परंतु एक विश्वास जगह करने लगा कि रानी का शौर्य विवशता की परिस्थितियों में उत्पन्न नहीं हुआ था।

कचहरी में नवाब बन्ने नाम के एक अर्जीनवीस काम करते थे। वह मुझको प्राय: रोज ही कचहरी में मिलते थे। वह राजा रघुनाथराव के लड़के नवाब अलीबहादुर की लड़की के लड़के निकले! मैंने सोचा, शायद इनके पास रानीसंबंधी कोई सामग्री हो। पूछने पर उन्होंने बताया कि नवाब अलीबहादुर का रोजनामचा इत्यादि घर पर रखे हैं। मैं उत्सुकता के मारे परेशान हो गया। रोजनामचा देखने को मिला। उसको मैंने पढ़वाया। नवाब अलीबहादुर कैसे थे और उनका नौकर पीरअली किस तरह का आदमी था, यह तो उनके रोजनामचे से प्रकट होता ही था; परंतु रानी लक्ष्मीबाई की विलक्षणता और तत्कालीन समाज की प्रगति और रहन-सहन का भी उससे पता चला। रोजनामचा दीमक के हमलों से जर्जर हो चुका था और अब तो उसका शुरू का भाग नष्ट ही हो गया है; परंतु मैंने नोट ले लिये।

१८५८ में नवाब अलीबहादुर ने अपनी राजभक्ति के प्रमाण में कुछ बयान दिए थे। उन बयानों में पीरअली का भी जिक्र किया था। वे बयान मुझको मिल गए।

इससे बढ़कर, मुझको एक व्यक्ति मिले—मुं. तुराबअली दरोगा। यह एक सौ पंद्रह वर्ष की आयु में आठ-दस वर्ष हुए तब परलोकगामी हुए। 'गदर' के जमाने में, तुराबअली साहब अंग्रेजों की ओर से पुलिस के थानेदार थे। इनसे मुझको रानी के विषय में बहुत सी बातें मालूम हुईं—दादी-परदादी की परंपराओं की पोषक! और अंग्रेजों के दरोगा से!!

उन्हीं दिनों झाँसी में एक बूढ़ा और मिला। नाम था अजीमुल्ला। यह रानी के विषय में तुराबअली की अपेक्षा कहीं अधिक बातें जानता था। इसने रानी को देखा था, परंतु वह उस समय छोटा था। तुराबअली ने तो रानी को सैकड़ों ही बार देखा था।

इसके उपरांत मैंने झाँसी के बूढ़े-बूढ़ियों को परेशान करना शुरू कर दिया। परंतु वे जिस उत्साह और भक्ति के साथ रानी की बातें बताते थे, उससे मैं यह सोचता हूँ कि वे परेशान न हुए होंगे।

सवाल था—रानी स्वराज्य के लिए लड़ीं या अंग्रेजों की ओर से झाँसी का शासन करते-करते उनको जनरल रोज से विवश होकर लड़ना पड़ा?

रानी ने बानपुर के राजा मर्दनसिंह को जो चिट्ठी युद्ध में सहायता करने के लिए लिखी थी, उसमें 'स्वराज्य' शब्द आया है। यह चिट्ठी इस प्रश्न का सदा के लिए स्पष्ट उत्तर देती है। खेद है कि मैं इस संस्करण में उस चिट्ठी का चित्र न दे सका—बानपुर के राजा के वंशज ने वह चिट्ठी या उसका फोटो मेरे हवाले नहीं किया।

राजा गंगाधरराव का हस्ताक्षर मुझको राजा साहब कटेरा ने अपनी एक सनद दिखाकर सुलभ करा दिया। कृतज्ञ हूँ। सनद की नकल भी मेरे पास है। उस समय, पिच्चानवे वर्ष पहले, लगभग आज ही की तरह की हिंदी लिखी जाती थी, इस सनद से पता लगता है।

मराठी में विष्णुराव गोडसे का 'माझा प्रवास' एक छोटा सा प्रबंध है। गोडसे रानी के साथ किले में था, जब रोज के मुकाबले में रानी लड़ीं। मैंने अपनी पुस्तक में 'माझा प्रवास' का भी उपयोग किया है।

मोतीबाई ऐतिहासिक है। मुझको उसका पता अकस्मात् ही चला। औरछे दरवाजे पर एक मसजिद है। जमीन का झगड़ा कचहरी में चला। मैं मसजिदवालों की तरफ से वकील था। जमीन का खेवट झाँसी में न था, ग्वालियर में था। वहाँ से नकल मँगवाई। उसमें जमीन की पूर्व स्वामिनी निकली मोतीबाई नाटकशालावाली! स्त्रियों का अभिनय स्त्रियाँ ही करती थीं। इनमें मोतीबाई भी थी। मोतीबाई का पता लगाते-लगाते जूही, दुर्गा और मुगल खाँ भी निगाह में आए। इन सबके संबंध की घटनाओं का सार सच्चा है।

सन् १९३२ से मैं इन अनुसंधानों में लगा।

एक दिन रानी लक्ष्मीबाई के भतीजे मुझको झाँसी में घर पर ही मिले। वह रानी के ऊपर हिंदी में कुछ लिखना चाहते थे। रानी क्यों लड़ीं? इस समस्या पर हम दोनों एकमत थे।

फिर एक दिन डॉ. सावरकर के एक सेक्रेटरी मुझको झाँसी में ही मिले। वह मराठी में 'सत्तावनी' लिख रहे थे। रानी के संबंध की जो सामग्री उनके ग्रंथ के लिए आवश्यक थी, मैंने दी। मैं सोचता था कि रानी के विषय में बहुत लोगों ने कुछ-न-कुछ लिखा है और लिख रहे हैं, मैं क्यों कुछ और प्रयत्न करूँ? कुछ दिन बाद मेरी यह धारणा बदल गई।

कलेक्टरी में कुछ सामग्री मिली। सन् १८५८ में लोगों के बयान लिये गए थे। इनको मैंने पढ़ा। पढ़कर मैं अपने विश्वास में और दृढ़ हुआ—रानी 'स्वराज्य' के लिए लड़ी थीं।

मेरा वह स्वप्न—जिसकी भूमिका हॉकी-ग्राउंड पर थी—फिर ताजा हुआ। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूँगा, ऐसा जो इतिहास के रंग-रेशे से सम्मत हो और उस संदर्भ में हो! इतिहास के कंकाल में मांस और रक्त का संचार करने के लिए मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस साधन को मैं जो रूप दे पाया हूँ, वह पाठकों के सामने है।

यदि आनंदराय ने रानी के लिए गोली खाई और मेरी कलम ने थोड़ी सी स्याही—तो इस अंतर को पाठक अवश्य ध्यान में रखने की कृपा करें।

—वृंदावनलाल वर्मा

उदय

: १ :

वर्षा का अंत हो गया। क्वार उतर रहा था। कभी-कभी झीनी-झीनी बदली हो जाती थी। परंतु उस संध्या के समय आकाश बिलकुल स्वच्छ था। सूर्यास्त होने में थोड़ा सा विलंब था। बिठूर के बाहर, गंगा के किनारे तीन अश्वारोही तेजी के साथ चले जा रहे थे। तीनों बाल्यावस्था में—एक बालिका, दो बालक। एक बालक की आयु सोलह-सत्रह वर्ष, दूसरे की चौदह से कुछ ऊपर। बालिका की तेरह वर्ष से कम।

बड़ा बालक कुछ आगे निकला था कि बालिका ने अपने घोड़े को एड़ लगाई। बोली, 'देखूँ कैसे आगे निकलते हो।' और वह आगे हो गई। बालक ने बढ़ने का प्रयास किया तो उसका घोड़ा ठोकर खा गया और बालक धड़ाम से नीचे जा गिरा। सूखी लकड़ी के टुकड़े से उसका सिर टकरा गया। खून बहने लगा। घोड़ा लौटकर घर की ओर भाग गया। बालक चिल्लाया, 'मनू, मैं मरा।'

बालिका ने तुरंत अपने घोड़े को रोक लिया। मोड़ा, और उस बालक के पास पहुँची। एक क्षण में तड़ाक से कूदी और एक हाथ से घोड़े की लगाम पकड़े हुए झुककर घायल बालक को ध्यानपूर्वक देखने लगी। माथे पर गहरी चोट आई थी और खून बह रहा था। बालिका मिठास के साथ बोली, 'घबराओ मत, चोट बहुत गहरी नहीं है। लहू बहने का कोई डर नहीं।'

मझला बालक भी पास आ गया। उतर पड़ा और विह्वल होकर अपने साथी की चोट को देखने लगा।

'नाना, तुमको तो बहुत चोट लग गई है।' उस बालक ने कहा।

'नहीं, बहुत नहीं है', बालिका मुसकराकर बोली, 'अभी लिये चलती हूँ। कोठी पर मरहम-पट्टी हो जाएगी और बहुत शीघ्र चंगे हो जाएँगे।'

'कैसे ले चलोगी, मनू?' बड़े लड़के ने कातर स्वर में कराहते हुए पूछा।

मनू ने उत्तर दिया, 'तुम उठो, मेरे घोड़े पर बैठो। मैं उसकी लगाम पकड़े तुम्हें अभी घर लिये चलती हूँ।'

'मेरा घोड़ा कहाँ है?' घायल ने उसी स्वर में प्रश्न किया।

मनू ने कहा, 'भाग गया। चिंता मत करो। बहुत घोड़े हैं। मेरे घोड़े पर बैठो। जल्दी नाना, जल्दी!'

नाना बोला, 'मनू, मैं सध नहीं सकूँगा।'

मनू ने कहा, 'मैं साध लूँगी। उठो।'

नाना उठा। मनू एक हाथ से घोड़े की लगाम थामे रही, दूसरे से उसने खून में तर नाना को बिठाया और बड़ी फुरती के साथ उछलकर स्वयं पीछे जा बैठी। एक हाथ से घोड़े की लगाम सँभाली, दूसरे से नाना को थामा और गाँव की ओर चल दी। पीछे-पीछे मझला बालक भी चिंतित-व्याकुल चला। जब ये गाँव के पास आ गए तब घोड़ों पर सवार कई सिपाही इन बालकों के पास पहुँचे।

'चोट तो नहीं लगी?'

'ओफ, बहुत खून निकल आया है।'

'आओ, मैं लिये चलता हूँ।'

‘घर पर घोड़े के पहुँचते ही हम समझ गए थे कि कोई दुर्घटना हो गई है।’ इत्यादि उद्‌गार इन आगंतुकों के मुँह से निकले। इन लोगों के अनुरोध करने पर भी मनू नाना को अपने ही घोड़े पर सँभाले हुए ले आई। कोठी के फाटक पर पहुँचते ही एक उतरती अवस्था के और दूसरे अधेड़ वय के पुरुष मिले। दोनों त्रिपुंड लगाए थे। उतरती अवस्थावाला रेशमी वस्त्र पहने था और उसको कुछ कम दिखता था। उसने अपने अधेड़ साथी से पूछा, ‘ क्या ये सब आ गए, मोरोपंत ?’

‘हाँ, महाराज।’ मोरोपंत ने उत्तर दिया। जब वे बालक और निकट आ गए तब मोरोपंत नामक व्यक्ति ने कहा, ‘अरे, यह क्या ? मनू और नाना साहब दोनों लहूलुहान हैं !’

जिनको मोरोपंत ने ‘महाराज’ कहकर संबोधित किया था, वह पेशवा बाजीराव द्वितीय थे। उन्होंने भी दोनों बच्चों को रक्त में सना हुआ देखा तो घबरा गए।

सिपाहियों ने झटपट नाना को मनू के घोड़े पर से उतारा। मनू भी कूद पड़ी।

मोरोपंत ने उसको चिपटा लिया। उतावले होकर पूछा, ‘मनू, चोट कहाँ लगी है, बेटी ?’

‘मुझको तो बिलकुल नहीं लगी, काका’, मनू ने जरा मुसकराकर कहा, ‘नाना को अवश्य चोट आई है, परंतु बहुत नहीं है।’

‘कैसे लगी, मनू ?’ बाजीराव ने प्रश्न किया।

कोठी में प्रवेश करते-करते मनू ने उत्तर दिया, ‘ऊँह, साधारण सी बात थी। घोड़े ने ठोकर खाई। वह सँभल नहीं सके। जा गिरे। घोड़ा भाग गया। घोड़ा ऐसा भागा, ऐसा भागा कि मुझको तो हँसी आने को हुई।’

मोरोपंत ने मनू के इस अल्हड़पने पर ध्यान नहीं दिया। नाना को मनू अपने घोड़े पर ले आई, वह इस बात पर मन-ही-मन प्रसन्न थे।

बाजीराव को सुनाते हुए मोरोपंत ने पूछा, ‘तू नाना साहब को कैसे उठा लाई ?’

मनू ने उत्तर दिया, ‘कैसे भी नहीं। वह बैठ गए। मैं पीछे से सवार हो गई। एक हाथ में लगाम पकड़ ली, दूसरे में नाना को थाम लिया। बस।’

नाना को मुलायम बिछौने में लिटा दिया गया। तुरंत घाव को धोकर मरहम-पट्‌टी कर दी गई। घाव गंभीर न होने पर भी लंबा और जरा गहरा था। बाजीराव बहुत चिंतित थे। उन्होंने रो तक दिया।

मोरोपंत को विश्वास था कि चोट भयप्रद नहीं है तो भी वह सहानुभूति के कारण बाजीराव के साथ चिंताकुल हो रहे थे।

जब मनूबाई और मोरोपंत उसी कोठी के एक भाग में, जहाँ उनका निवास था, अकेले हुए, मनू ने कहा, ‘इतनी जरा सी चोट पर ऐसी घबराहट और रोना-पीटना !’

‘बेटी, चोट जरा सी नहीं है। कितना रक्त बह गया है !’

‘आप लोग हमको जो पुराना इतिहास सुनाते हैं, उसमें युद्ध क्या रेशम की डोरों और कपास की पौनियों से हुआ करते थे ?’

‘नहीं, मनू ! पर यह तो बालक है।’

‘बालक है, मुझसे बड़ा है। मलखंब और कुश्ती करता है। बाला गुरु उसको शाबाशी देते हैं। अभिमन्यु क्या इससे बड़ा था ?’

‘मनू, अब वह समय नहीं रहा।’

‘क्यों नहीं रहा, काका ? वही आकाश है, वही पृथ्वी, वही सूर्य, चंद्रमा और नक्षत्र। सब वही हैं।’

‘तू बहुत हठ करती है।’

‘जब मैं सवाल करती हूँ तो आप इस प्रकार मेरा मुँह बंद करने लगते हैं। मैं ऐसे तो नहीं मानती। मुझको समझाइए, अब क्या हो गया है?’

‘अब इस देश का भाग्य लौट गया है। अंग्रेजों के भाग्य का सूर्योदय हुआ है। उन लोगों के प्रताप के सामने यहाँ के सब जन निस्तेज हो गए हैं।’

‘एक का भाग्य दूसरे ने नहीं पढ़ा है। यह सब मनगढ़ंत है। डरपोकों का ढकोसला।’

‘तू जब और बड़ी होगी तब संसार का अनुभव तुझको यह सब स्पष्ट कर देगा।’

‘मैं डरपोक कभी नहीं हो सकती। आप कहा करते हैं, ‘मनू, तू ताराबाई बनना, जीजाबाई और सीता होना। यह सब भुलावा क्यों? अथवा क्या ये सब डरपोक थीं?’

‘बेटी, ये सब सती और वीर थीं; परंतु समय बदलता रहता है। बदल गया है।’

‘यह तो हेर-फेरकर वही सब मनमाना तर्क है।’

‘फिर कभी बताऊँगा।’

‘मैं ऐसी गलत-सलत बात कभी नहीं सुनने की।’

‘तो सोएगी भी या रात भर सवाल करती रहेगी!’ अंत में खीजकर, परंतु मिठास के साथ मोरोपंत ने कहा।

मनू खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली, ‘काका, आपने तो टाल दिया। मैं इस प्रसंग पर फिर बात करूँगी। अभी अवश्य करवट लेते ही सोई, यह सोई।’ फिर एक क्षण उपरांत मनू ने अनुरोध किया, ‘काका, देख आइए, नाना सो गया या नहीं। आपको नींद आ रही हो तो मैं दौड़कर देख आऊँ।’

मोरोपंत ने मनू को नहीं जाने दिया। स्वयं गए। देख आए। बोले, ‘नाना साहब सो गए हैं।’

मनू सो गई। मोरोपंत जागते रहे। उन्होंने सोचा, मनू की बुद्धि उसकी अवस्था से बहुत आगे निकल चुकी है। अभी तक कोई योग्य वर हाथ नहीं लगा। दक्षिण जाकर देखना पड़ेगा। इसी विचार के लौट-फेर में मोरोपंत का बहुत समय निकल गया। कठिनाई से अंतिम पहर में नींद आई।



: २ :

मनूबाई सवेरे नाना को देखने पहुँच गई। वह जाग उठा था, पर लेटा हुआ था। मनू ने उसके सिर पर हाथ फेरा। स्निग्ध स्वर में पूछा, 'नींद कैसी आई?'

'सोया तो हूँ, पर नींद आई-गई बनी रही। कुछ दर्द है।' नाना ने उत्तर दिया।

मनू—'वह दोपहर तक ठीक हो जाएगा। तीसरे पहर घूमने चलोगे न? संध्या से पहले ही लौट आएँगे?'

नाना—'सवारी की धमक से पीड़ा बढ़ने का डर है।'

मनू—'आरंभ में कदाचित् थोड़ी सी पीड़ा हो; परंतु शीघ्र उसको दाब लोगे और जब लौटोगे तो याद नहीं रहेगा कि कभी चोट लगी थी।'

नाना—'यदि पीड़ा बढ़ गई तो?'

मनू—'तो सह लेना, फिर कभी गिरोगे तो चोट कम आँसेगी।'

नाना—'और यदि आज ही फिसल पड़ा तो?'

मनू—'तो मैं तुमको फिर उठा लाऊँगी। चिंता मत करो।'

नाना—'और जो तुम खुद गिर पड़ीं तो?'

मनू—'तब मैं फिर सवार हो जाऊँगी। किसीकी सहायता नहीं लेनी पड़ेगी और घर आ जाऊँगी।'

नाना—'मेरे बस का नहीं।'

मनू—'लड्डू खाओगे?'

नाना—'इच्छा नहीं।'

मनू—'तब क्या इच्छा है?'

नाना—'मुझे चुपचाप पड़ा रहने दो।'

मनू—'कब तक?'

नाना—'तीन-चार दिन लग जाएँगे।'

मनू—'किसने कहा?'

नाना—'काका कहते थे और वैद्य ने भी कहा था।'

मनू—'वैद्य तो लोभवश कहता होगा, पर दादा क्यों कहते थे?'

नाना—'उनसे ही पूछ लेना। मेरा सिर मत खाओ।'

मनू हँस पड़ी। फिर दाईं ओर का होंठ थोड़ा सा, बिलकुल जरा सा दबाकर बोली, 'तुम कहते थे—बाजी प्रभु देशपांडे की कीर्ति से बढ़कर कीर्ति कमाऊँगा, तानाजी मालसरे को पछाड़ूँगा, स्वर्गवासी छत्रपति शिवाजी को अपने कृत्यों से फड़का दूँगा, श्रीमंत पंत प्रधान प्रथम बाजीराव की बराबरी करूँगा...'

इतने में वहाँ बाजीराव आ गए। मनू इतनी तीक्ष्णता के साथ बोल रही थी कि बाजीराव ने उसका अंतिम वाक्य सुन लिया।

बोले, 'तेरी चपलता न जाने कब कम होगी? यह सब क्या बके जा रही है?'

मनू रंचमात्र भी नहीं दबी। बोली, 'इसको, दादा, आप बकना कहते हैं? आप ही हम लोगों को यह सब छुटपन से सुनाते आए हैं। मैं उसीको दुहरा रही हूँ। अब इसे आप बकवाद समझने लगे हैं! यह क्यों दादा?'

बाजीराव ने कहा, 'बेटी, क्या आज उन बातों के स्मरण से जीवन को चलाने का समय रहा है? महाभारत की कथाएँ सुनो और अपने पुरखों की बातें सुनो। अच्छी-भली बनो। मन बहलाओ और जीवन को पवित्र सुख से सुखी बनाओ। नाना को चिढ़ाओ मत।'

मनू ने मुसकराकर होंठ जरा सा दबाया, थोड़ी सी त्योरी संकुचित की और बाजीराव के बिलकुल पास आकर बोली, 'क्या हम लोगों को अब सोकर-खाकर ही जीवन बिताना सिखाइएगा, दादा?'

बाजीराव को हँसी आई। कुछ कहना ही चाहते थे कि मोरोपंत कहते हुए आ गए, 'नाना साहब को हाथी पर बैठकर थोड़ा सा घूम आने दीजिए। बाहर तैयार खड़ा है।'

बाजीराव ने प्रश्न किया, 'हाथी की सवारी में चोट को धमक तो नहीं लगेगी?'

मोरोपंत ने उत्तर दिया, 'नहीं, पलकिया में बहुत मुलायम गद्दी-तकिए लगा दिए गए हैं और हाथी बहुत धीमे चलाया जाएगा।'

मनू हाथी को देखने बाहर दौड़ गई। नाना निस्तार इत्यादि के लिए उठ गया। मनू ने हाथी पहले भी देखे थे, फिर भी वह इस हाथी को बार-बार चारों ओर से घूम-घूमकर देख रही थी और उसके डील-डौल पर कभी मुसकरा रही थी, कभी हँस रही थी।

थोड़ी देर बाद बाजीराव नाना को लिये बाहर आए। साथ में छोटा लड़का भी था, मोरोपंत पीछे-पीछे। हाथी पर पहले नाना को बिठा दिया गया, फिर छोटे को। महावत ने हाथी को अंकुश छुआई, हाथी उठा।

मनू ने मोरोपंत से कहा, 'काका, मैं भी हाथी पर बैठूँगी।' बाजीराव के घुटनों से लिपट कर बोली, 'दादा, मैं भी बैठूँगी।'

नाना हौदे में महावत के पास बैठा था। उसने महावत को अविलंब चलने का आदेश किया। मनू की ओर देखा भी नहीं।

बाजीराव ने नाना से कहा, 'लिये जाओ न मनू को!'

नाना ने मुँह फेर लिया, तब बाजीराव ने दूसरे बालक से कहा, 'रावसाहब, मनू को ले लेते तो अच्छा होता!'

महावत कुछ ठिठका तो नाना से उसकी पसलियों में अंगुली चुभोकर आगे बढ़ने की आज्ञा दी। वह नानासाहब और रावसाहब—दोनों लड़कों को लेकर चल दिया। मनू की आँखों में क्षोभ उतर आया। मोरोपंत का हाथ पकड़कर बोली, 'हाथी लौटाओ, काका। मैं हाथी पर अवश्य बैठूँगी।'

बाजीराव कोठी में चले गए।

मोरोपंत को भी क्षोभ हुआ, परंतु उन्होंने उसको नियंत्रित करके कहा, 'वह चला गया, बेटी।'

मनू मोरोपंत का हाथ पकड़कर खींचने लगी, 'महावत को पुकारिए, वह रुक जाएगा। मैं बिना बैठे नहीं मानूँगी।'

मोरोपंत का क्षोभ भड़का। उन्होंने उसका फिर दमन किया। मनू ने फिर हाथी पर बैठने का हठ किया। मोरोपंत ने क्रुद्ध स्वर में मनू को डाँटा, 'तेरे भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। क्यों व्यर्थ हठ करती है?'

मनू तुनककर सीधी खड़ी हो गई। तमककर कुछ कहना चाहती थी। एक क्षण होंठ नहीं खुल सके।

मोरोपंत ने शांत करने के प्रयोजन से, भरसक धीरे स्वर में, परंतु क्रोध के सिलसिले में कहा, 'सैकड़ों बार कहा कि समय को देखकर चलना चाहिए। हम लोग न तो छत्रधारी हैं और न सामंत-सरदार। साधारण गृहस्थों की तरह संसार में रहन-सहन रखना है। पढ़ी-लिखी होने पर भी न जाने सुनती-समझती क्यों नहीं है। कह दिया कि भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। हठ मत किया कर।'

मनू के होंठ सिकुड़े। चुनौती-सी देती हुई बोली, 'मेरे भाग्य में एक नहीं, दस हाथी लिखे हैं।'

मोरोपंत का क्रोध–क्षोभ भीतर सरक गया। हँस पड़े। मनूबाई को पेट से चिपका लिया। कहा, 'अब चल, कोई शास्त्र–पुराण पढ़। तब तक वे दोनों लौट आते हैं।'

मनू मचली। बोली, 'मैं अपने घोड़े पर बैठकर सैर को जाऊँगी और उस हाथी को तंग करूँगी।'

मोरोपंत सीधे शब्दों में वर्जित करना चाहते थे, परंतु इस उपकरण में सफलता के चिह्न न पाकर उन्होंने तुरंत बहाना बनाया, 'घोड़े से यदि हाथी चिढ़ गया तो तू भले ही बचकर निकल आए, पर नाना साहब, रावसाहब तथा महावत मारे जाएँगे।'

वह मान गई।

'तब तक कुछ और करूँगी', मनूबाई ने कहा, 'पुस्तकें तो नहीं पढ़ूँगी। बंदूक से निशानेबाजी करूँगी।'



: ३ :

थोड़ी देर में घंटा बजाता हुआ हाथी लौट आया। मनू दौड़कर बाहर आई। एक क्षण ठहरी और आह खींचकर भीतर चली गई। नाना और राव, दोनों बालक अपनी जगह चले गए। बाजीराव ने नाना को पुचकारकर पूछा, 'दर्द बढ़ा तो नहीं?'

'नहीं बढ़ा', नाना ने उत्तर दिया, 'अच्छा लग रहा है। मनू कहाँ गई?'

बाजीराव ने कहा, 'भीतर होगी।'

रावसाहब—'उसे बुरा लगा होगा। नाना ने साथ नहीं लिया, मैंने तो कहा था।'

नाना—'वह मुझको सवेरे से चिढ़ा रही थी।'

बाजीराव—'क्या?'

नाना—'उसका स्वभाव है।'

कुछ क्षण उपरांत मनू वहाँ आ गई।

नाना ने हँसते हुए कहा, 'छबीली, तुम क्या कोई ग्रंथ पढ़ रही थीं?'

मनू जल उठी। बोली, 'मुझसे छबीली मत कहा करो।'

नाना ने और भी हँसकर कहा, 'क्यों नहीं कहा करूँ? यह तो तुम्हारा छुटपन का नाम है।'

मनू की आँखें लाल हो गईं। बोली, 'मुझको इस नाम से घृणा है।'

नाना गंभीर हो गया। बोला, 'मुझको तो यही नाम सुहावना लगता है। छबीली, छबीली!'

'इस नाम को कभी नहीं सुनूँगी।' कहकर मनू वहाँ से जाने को हुई। बाजीराव ने उसको पकड़ लिया। मनू ने भागना चाहा। न भाग सकी। तब नाना ने भी पकड़ लिया।

'क्या मनू, बुरा मान गई?' नाना ने स्नेह के साथ पूछा।

मनू होंठ सिकोड़कर, रुखाई के साथ बोली, 'अवश्य, आगे इस नाम से मेरा संबोधन कभी मत करना।'

इसी समय पहरेवाले ने बाजीराव को सूचना दी, 'झाँसी से एक सज्जन आए हैं। नाम तात्या बताते हैं।'

नाना बोला, 'मनू, एक से दो तात्या हुए।'

मनू का क्षोभ घुला। बाजीराव ने प्रहरी से झाँसी के आगंतुक को बिठाने के लिए कह दिया।

मनू ने कहा, 'झाँसीवाला तात्या कुश्ती लड़ता होगा?'

रावसाहब—'झाँसी में कोई बाला गुरु होंगे तो कुश्ती का भी चलन होगा! वह तो राज्य ठहरा।'

नाना—'बड़ा राज्य है?'

बाजीराव—'बड़ा तो नहीं है, पर खासा है। हमारे पुरखों का प्रदान किया हुआ है, जानते होगे।'

रावसाहब—'अपने को फिर नहीं मिल सकता?'

मनू—'दान किया हुआ फिर कैसे वापस होगा?'

बाजीराव—'हाँ, वापस नहीं हो सकता। झाँसी के राजा हमारे सूबेदार थे। इस समय अपना बस होता तो झाँसी में हम लोगों का काफी मान होता। परंतु झाँसी तो बहुत दिनों से अंग्रेजों की मातहती में है।'

मनू—'ग्वालियर, इंदौर, बड़ौदा, नागपुर, सतारा इत्यादि के होते हुए भी थोड़े से अंग्रेजों ने आप सबको दबा लिया!'

बाजीराव—'यह मानना पड़ेगा कि वे लोग हमसे ज्यादा चालाक हैं। हथियार उनके पास अधिक अच्छे हैं। शूरवीर भी हैं और भाग्य उनके साथ है। और आपसी फूट हमारे साथ।'

मनू—'दादा, क्या भाग्य में शूरवीर होना भी लिखा रहता है? यदि ऐसा है तो अनेक सिंह सियार होते होंगे और अनेक सियार सिंह।'

बाजीराव—'जब सियार पागल हो जाता है तब सिंह भी उससे डरने लगता है।'

मनू—'वह भाग्य से पागल होता है अथवा और किसी कारण से?'

बाजीराव हँसने लगे।

इसी समय मोरोपंत ने आकर कहा, 'दादा साहब, तात्या दीक्षित झाँसी से आए हैं।'

बाजीराव बोले, 'मैंने उनको बिठा दिया है। यहीं ठहरने, भोजन इत्यादि का प्रबंध कर दिया जाए।'

मोरोपंत ने कहा, 'तात्या मुझको एक बार काशी में मिले थे। यात्रा के लिए गए हुए थे। विद्या-विदग्ध हैं, सज्जन हैं। राजा के यहाँ उनका मान है।'

मनू ने हँसकर पूछा, 'कुश्ती लड़ते हैं? तलवार-बंदूक चलाते हैं? घोड़े पर चढ़ते हैं?'

'दुर पगली', मोरोपंत ने कहा, 'जो यह सब न जानता हो, वह क्या कुछ है ही नहीं? दीक्षितजी पक्के ब्राह्मण हैं। शास्त्री, आचार्य।'

नाना ने मनू की ओर देखते हुए कहा, 'और यदि ब्राह्मण हथियार बाँध उठे तो वह पक्के से कच्चा हो जाएगा? मनू, तुम बताओ।'

मनू हँसी, बाजीराव भी हँसे। मोरोपंत ने मुसकराकर कहा, 'इस लड़की जैसी वाचाल तो शायद ही कोई हो।'

मनू ने होंठों की समेट में मुसकराहट को दबाकर गरदन मोड़ी, फिर विशाल नेत्र संकुचित करके बोली, 'आप ही कहा करते हैं—ताराबाई ऐसी थीं, जीजाबाई ऐसी थीं, अहिल्या ऐसी, मीरा ऐसी। मैं पूछती हूँ, क्या वे सब मुँह पर मुहर लगाए रहती थीं?'

❑

: ४ :

भोजनोपरांत तात्या दीक्षित से बाजीराव और मोरोपंत मिले। तात्या दीक्षित झाँसी से बिठूर आए हुए थे। वह ज्योतिष और तंत्र के शास्त्री थे। काशी, नागपुर, पूना इत्यादि घूमे हुए थे। महाराष्ट्र समाज से काफी परिचित थे। बिठूर (ब्रह्मावर्त) में बाजीराव के साथ दक्षिणी ब्राह्मणों का एक बड़ा परिवार आ बसा था।[1] उस काल में मलखंब और मल्लयुद्ध के आचार्य बाला गुरु का अखाड़ा दक्षिणियों और हिंदुस्तानियों से भरा रहता था और गुरु बल, यौवन और स्वाभिमान को वितरित-सा करते रहते थे। वह स्वयं इतने दृढ़, बलिष्ठ और स्वाभिमानी थे कि उनको लेटने तक में चित होने से नफरत थी; औंधे लेटा करते थे।

मोरोपंत ने अवसर निकालकर तात्या दीक्षित से प्रार्थना की, 'दीक्षितजी, मुझे अपनी कन्या मनूबाई के विवाह की बड़ी चिंता लग रही है। मैंने बहुत खोज की है, परंतु कोई योग्य वर नहीं मिला। अब भी खोज कर रहा हूँ। आपका संसार में बहुत परिचय है। आप इस कन्या के लिए योग्य वर ढूँढ़ दीजिए। बड़ा अनुग्रह होगा।'

बाजीराव ने भी कहा, 'कन्या बहुत सुंदर है, बड़ी कुशाग्र बुद्धि और होनहार। उसके लिए अच्छा वर ढूँढ़ना ही चाहिए।'

मोरोपंत बोले, 'सब हथियार चलाना बहुत अच्छी तरह जानती है, घोड़े की सवारी में पुरुषों के कान पकड़ती है। जब चार वर्ष की थी, इसकी माँ का देहांत हो गया था। इसलिए मैंने स्वयं उसकी दिन-रात देखभाल की है, लालन-पालन किया है। मराठी, संस्कृत और हिंदी पढ़ाई है। शास्त्रों में उसकी रुचि है।'

बाजीराव ने कहा, 'बालिका है, इसलिए इस आयु में जितना पढ़ सकती थी, उतना ही पढ़ा है; परंतु तेज बहुत है। पूजा-पाठ मन लगाकर करती है।'

मोरोपंत फूल गए। बाजीराव को भी संतोष हुआ। बोले, 'जब आप जाएँ तो साथ में जन्मपत्री लेते जाएँ। योग्य वर से मेल खाने पर हमको सूचित करें।'

दीक्षित ने स्वीकार किया।

उसी समय रावसाहब के साथ मनू वहाँ आ गई।

बाजीराव ने दीक्षित से कहा, 'यही वह कन्या है।'

दीक्षित ने मनूबाई के विशाल नेत्र, भौंरे को लजानेवाले चमकीले बाल, स्वर्ण-सा रंग और संपूर्ण चेहरे का अतीव सुंदर बनाव देखकर प्रसन्नता प्रकट की।

दीक्षित ने ममता प्रदर्शित करते हुए कहा, 'आ बेटी, आ! तूने शास्त्र पढ़े हैं, उच्च कुल की ब्राह्मण कन्या के लिए यह उपयुक्त ही है।'

मनू और रावसाहब बाजीराव के पास मसनद पर बैठ गए।

मनू बिना किसी संकोच के बोली, 'मैंने शास्त्र आँखों से देख भर लिये हैं। मुझको तुलसीदास की रामायण बड़ी प्रिय लगती है, परंतु तलवार चलाना, मलखंब भाँजना, घोड़े की सवारी—ये उससे भी बढ़कर भाते हैं।'

बाजीराव ने हँसकर टोका, 'और बात बनाना, चबड़-चबड़ करना, इन सबसे बढ़कर अच्छा लगता है।'

मोरोपंत के मन में क्षणिक रोष आया। वह चाहते थे कि लड़की तात्या दीक्षित के सामने ऐसी बातें करे कि शील-संकोच का अवतार जान पड़े।

पूजा-पाठ संबंधी रुचि पर बाजीराव ने ज्यादा जोर दिया। अश्वारोहण इत्यादि पर बहुत कम।

तात्या दीक्षित ने जन्मपत्री माँगी। मोरोपंत ने ला दी। दीक्षित ने उसकी परीक्षा करके कहा, 'ऐसी जन्मपत्री मैंने कदाचित् ही पहले कभी देखी हो। इसको कहीं की रानी होना चाहिए।'

परंतु, दीक्षित ने हँसकर कहा, 'बालिका है। अभी संसार का उसने देखा ही क्या है?'

'बिलकुल अबोध है', मोरोपंत बोले, 'सयानी होने पर अपने घर-द्वार का खूब प्रबंध करेगी।'

तात्या दीक्षित ने उत्साहित होकर भविष्यवाणी-सी की, 'यह किसी राज्य की रानी होगी।'

रावसाहब अभी तक मनू के पीछे चुप बैठा था। बोला, 'राज्य तो सब अंग्रेजों ने ले लिये हैं। नए राज्य कहाँ से बनेंगे?'

'राज्यों की और राज्य बनानेवालों की, न कमी रही है और न रहेगी।' तात्या दीक्षित ने हँसकर कहा।

मनूबाई मुसकराकर बोली, 'पर कुछ लोग कहते हैं कि अंग्रेजों ने ऐसा जोर बाँध दिया है कि कोई सिर ही नहीं उठा सकता।'

बाजीराव विषयांतर करना चाहते थे। बोले, 'झाँसी में बाग-बगीचे कितने हैं?'

तात्या दीक्षित—'बहुत हैं। राजा के बगीचे हैं। सरदारों और सेठ-साहूकारों के हैं! नगर के भीतर ही अनेक हैं।'

मनू—'सेना बड़ी है?'

दीक्षित—'खासी है।'

मनू—'घोड़े अच्छे हैं?'

रावसाहब—'हाथी?'

दीक्षित—'बहुत से हैं।'

मनू—'कितने?'

इतने में वहाँ सुगठित शरीर का एक युवक आया।

बाजीराव ने पूछा, 'क्या है, तात्या?'

अपने नाम के एक और मनुष्य को संबोधित होते देखकर दीक्षित चौंका।

मनू ने बेधड़क कहा, 'यह हमारे गुरु के अखाड़े के प्रधान हैं, आपके नामधारी।'

तात्या दीक्षित ने मन में चाहा कि लड़की और अधिक बात न करे।

युवक तात्या ने पेशवा से विनय की, 'महाराज, गुरुजी ने कहलवाया है कि झाँसी से जो आचार्य आए हैं वे हमारे अखाड़े को देखने की कृपा करें।'

दीक्षित ने हामी भरी। तीसरे पहर सब लोग बाला गुरु के अखाड़े पर गए। मलखंब और मल्लयुद्ध का प्रदर्शन हुआ।

❑

: ५ :

महाराष्ट्र में सतारा के निकट वाई नाम का एक गाँव है। पेशवा के राज्यकाल में वहाँ कृष्णराव ताँबे को एक ऊँचा पद प्राप्त था। कृष्णराव ताँबे का पुत्र बलवंतराव पराक्रमी था। उसको पेशवा की सेना में उच्च पद मिला। बलवंतराव के दो लड़के हुए—एक मोरोपंत और दूसरा सदाशिव। ये दोनों पूना दरबार के कृपापात्रों में थे।

उस समय पेशवा बाजीराव द्वितीय पूना में रहते थे। सन् १८१८ में अंग्रेजों ने पेशवाई खत्म करके बाजीराव को आठ लाख रुपया वार्षिक पेंशन और बिठूर की जागीर दी। बाजीराव ब्रह्मावर्त (बिठूर) चले आए। बाजीराव के निज भाई चिमाजी आप्पा साहब थे। वे बनारस चले गए। मोरोपंत ताँबे पर चिमाजी की बड़ी कृपा थी। मोरोपंत चिमाजी के साथ पूना से काशी चले आए और उनका कामकाज करते रहे। इसके उपलक्ष्य में मोरोपंत को पचास रुपया मासिक वेतन मिलता था। यही मोरोपंत मनूबाई के पिता थे।

मोरोपंत की पत्नी का नाम भागीरथीबाई था—सुशील, चतुर, रूपवती।

मनूबाई कार्तिक वदी १४, संवत् १८९१ (११ नवंबर, सन् १८३६) के दिन काशी में इन्हींसे उत्पन्न हुई थी।

चिमाजी का शरीरांत हो गया। मोरोपंत को अपने कुटुंब के पालन के लिए कोई सहारा काशी में नहीं दिखाई पड़ रहा था। बाजीराव ने उन्हें काशी से बिठूर बुला लिया। मोरोपंत पर बाजीराव की भी बहुत कृपा रही।

मनूबाई चार वर्ष की ही थी, जब उसकी माता भागीरथीबाई का देहांत हो गया। मनू के पालन-पोषण और लाड़-दुलार का संपूर्ण भार मोरोपंत पर आ पड़ा। मोरोपंत ने मनू को बहुत प्यार के साथ पाला, लड़के से बढ़कर।

मनू इतनी सुंदर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उसको स्नेहवश 'छबीली' के नाम से पुकारते थे।

बाजीराव के अपनी कोई संतान न थी, इसलिए उन्होंने नाना धोडूपंत नाम के एक बालक को गोद लिया। नाना तीन भाई थे—नाना, बाला और रावसाहब। बाला उस समय बिठूर में न था। छोटा सहोदर रावसाहब था।

मनू और ये दोनों लड़के साथ खेलते, खाते और पढ़ते थे। मलखंब, कुश्ती, तलवार, बंदूक का चलाना, अश्वारोहण, पढ़ना-लिखना इत्यादि सब इन तीनों ने छुटपन से साथ-साथ सीखा। मनू चपल, हठीली और बहुत पैनी बुद्धि की थी। कम आयु की होने पर भी वह इन हुनरों में उन दोनों बालकों से बहुत आगे निकल गई। स्त्रियों की संगति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज-संकोच की अतीव दबन और झिझक से दूर हटती गई थी।

नाना आठ लाख वार्षिक पेंशन अपने और अपने भाइयों की परंपरा के जीवन-सुख के लिए काफी से अधिक समझता होगा। बाजीराव को पेंशन उसको और उसके कुटुंब के लिए दी गई थी। बिना किसी प्रयत्न के आठ लाख वार्षिक मिलते जाएँ तो फिर किस महत्त्वाकांक्षा की जोखिम के लिए और अधिक हाथ-पैर हिलाए जाएँ?'

मनूबाई ऐसा नहीं सोचती थी। छत्रपति शिवाजी इत्यादि के आधुनिक और अर्जुन-भीम इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनू की कल्पना को एक अस्पष्ट और अदम्य गुदगुदी दे रखी थी।

❑

: ६ :

दूसरे दिन दीक्षित झाँसी चला गया।

झाँसी के राजा गंगाधरराव विधुर थे। अधेड़ अवस्था से कुछ आगे थे। विवाह करना चाहते थे, परंतु अपने कठोर स्वभाव के कारण बहुत बदनाम थे।

दीक्षित ने गंगाधरराव की जन्मपत्री से मनू की जन्मपत्री का मिलान किया। दोनों के ग्रहों से संतुष्ट होकर उसने राजा से चर्चा की और उनको राजी कर लिया।

दीक्षित झाँसी राज्य के कुछ कर्मचारियों को लेकर बिठूर को लौटा। गंगाधरराव के साथ मनू के विवाह-संबंध को बाजीराव और मोरोपंत ने स्वीकार कर लिया।

मनूबाई का श्रृंगार कराया गया। रंगीन रेशमी साड़ी, स्वर्ण के आभूषण, माणिक-मोती के हार। बाजीराव ने अपने वे सब आभरण मनूबाई से फिर वापस नहीं लिये।

मनूबाई के बड़े-बड़े गोल नेत्र मणि-मुक्ताओं को भी आभा दे रहे थे। दुर्गा-सी जान पड़ती थी।

सगाई-वाग्दान की रीति होने के बाद मनूबाई, नानासाहब और रावसाहब एक ही कमरे में इकट्ठे हुए। वे दोनों लड़के भी रेशमी वस्त्रों और आभूषणों से लदे थे। सगाई का उत्सव बाजीराव ने धूमधाम से करवाया। बालकों में बातचीत होने लगी।

नाना—'अब तो मनू तू झाँसी से हाथियों पर बैठकर ब्रह्मावर्त आया करेगी।'

मनू—'एक हाथी पर या दस पर?'

नाना—'एक पर बैठेगी, बाकी पर मंत्री, सेनापति इत्यादि बैठे आवेंगे।'

मनू—'मुझको तो घोड़े की सवारी पसंद है।'

नाना—'झाँसी में बैठ पावेगी?'

मनू—'कौन रोक लेगा?'

नाना—'सुनता हूँ राजा बड़ा क्रोधी है।'

मनू—'तो क्या मुझको सूली मिलेगी?'

रावसाहब—'अरे नहीं, पर नबकर-झुककर चलना पड़ेगा।'

मनू ने नबकर, झुककर कमरे का एक चक्कर काटा। हँसकर बोली, 'ऐसे चलना पड़ेगा?'

वे दोनों लड़के भी हँस दिए। मनू की कांति से वह घर झिलमिला उठा और जब वे बालक हँसे, उनके दाँतों की दीप्ति से वह घर दमक उठा।

रावसाहब—'मनू, तुम्हारे चले जाने पर हम लोगों को सब तरफ सूना-सूना लगेगा।'

मनू—'तो साथ चले चलना।'

नाना—'काका एकाध महीने के लिए जाने दे सकते हैं, अधिक समय के लिए नहीं।'

मनू—'अधिक समय तो यहीं रहना चाहिए। बाला गुरु से तुमको अभी बहुत सीखना है। आया ही क्या है? मलखंब, कुश्ती इत्यादि से शरीर को खूब कमाओ। अच्छी तरह से हथियार चलाना सीखो।'

नाना—'और फिर दिल्ली पर धावा बोल दो।'

मनू—'दिल्ली में क्या रखा है! दादा, काका और अखाड़े के सब समझदार लोग चर्चा करते हैं कि दिल्ली के

कटघरे में अब एक कठपुतली भर रह गई है।'

नाना—'अब तो सब तरफ अंग्रेजों का चरचराटा है।'

मनू हँस पड़ी।

रावसाहब ने कहा, 'तो क्या अंग्रेज हमको वैसे ही निगल जाएँगे?'

मनू हँसते-हँसते बोली, 'नानासाहब को कदाचित् विश्वास नहीं होता कि अंग्रेज भी हराए जा सकते हैं।'

नाना जरा कुढ़ गया। कहने लगा, 'छबीली को सिवाय घमंड मारने के और कुछ आता ही नहीं।'

उन उज्ज्वल विशाल नेत्रों को और भी विस्तार मिला। मनू बोली, 'फिर छबीली कहा?'

नाना हँस पड़ा। 'आज तो तुमने अपने ही मुँह से छबीली कह दिया! ओह मात खाई!' नाना ने कहा।

मनू भी हँसी। बोली, 'आगे कभी मत कहना।'

नाना ने गंभीर मुख-मुद्रा करके कहा, 'अब तो झाँसी की रानी कहा करूँगा।'

मनू मुसकराई।

उस मुसकान में झाँसी का कितना महान् और कैसा अमर इतिहास छिपा पड़ा था!

उसी समय वहाँ बाजीराव और मोरोपंत आ गए। बाजीराव प्रसन्न थे और मोरोपंत आनंद-विभोर। उन बच्चों को सुखी देखकर वे लोग उस कमरे के वातावरण में समा गए। बाजीराव के मुँह से निकल पड़ा, 'मनू, तू ऐसी भाग्यवती हो कि भाग्य को बाँटती रहे!'

मोरोपंत ने मनू को चिढ़ाने के तात्पर्य से कहा, 'श्रीमंत ने इसका छुटपन में क्या नाम रखा था? मैं तो भूल ही गया।'

मनू ने गरदन मोड़कर होंठ सिकोड़े, आँखों में क्रोध लाने की चेष्टा की, 'ऊँ' निकली और मुसकरा दी।

बाजीराव बोले, 'क्या नाम था, मनू? तू ही बता दे, बेटी।'

बाजीराव के पेट पर अपना सिर रखकर मनू ने कहा, 'नहीं दादा, छबीली नाम अच्छा नहीं लगता।'

सब खिलखिलाकर हँस पड़े।

उसी समय तात्या ने आकर कहा, 'सरकार, लोग इकट्ठे हो गए हैं। बातचीत होनी है।'

वे तीनों चले गए। बैठक में ब्रह्मावर्त निवासी महाराष्ट्र के प्रमुख ब्राह्मण विवाह की शर्तों की चर्चा कर रहे थे।

मोरोपंत के पास सोना-चाँदी नहीं था, पर जो कुछ था वह उसे विवाह में लगा देने को तैयार थे। बिठूर के इन प्रतिष्ठित ब्राह्मणों की मध्यस्थता में तय हुआ कि विवाह का व्यय झाँसी के राजा वहन करेंगे और विवाह झाँसी में जाकर होगा। यह भी तय हुआ कि मोरोपंत झाँसी में ही स्थायी तौर पर रहा करेंगे और उनकी गणना झाँसी के सरदारों में होगी।

झाँसी के मेहमान मोरोपंत को कन्यासहित अपने साथ लिवा ले जाना चाहते थे, लेकिन यह ठीक न समझकर मोरोपंत उन लोगों के साथ नहीं गए। अपने सुभीते के लिए उन्होंने कुछ समय उपरांत झाँसी आने का संकल्प प्रकट किया। विवाह का मुहूर्त निश्चित करके मेहमान झाँसी चले गए। बाजीराव ने बाला गुरु के अखाड़ेवाले तात्या को झाँसी में मोरोपंत के लिए निवास-स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिए उन लोगों के साथ भेजा। यह ब्राह्मण था। आगे चलकर इतिहास में यही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

झाँसी के मेहमानों के चले जाने के कुछ दिन उपरांत मोरोपंत, तात्या इत्यादि मनू को लेकर झाँसी आ गए।



: ७ :

विवाह का मुहूर्त सीधा जा चुका था। धूमधाम के साथ तैयारियाँ होने लगीं।

नगरवाले गणेश मंदिर में सीमंती, वर-पूजा इत्यादि रीतियाँ पूरी की गईं। राजा गंगाधरराव घोड़े पर बैठकर गणेश मंदिर गए। उस दिन मनूबाई ने पहले-पहल गंगाधरराव को देखा। गंगाधरराव का मुख-सौंदर्य अब भी वैसा ही था। आँखों का तेज लाल डोरों के कारण आकर्षक कम, भयानक ज्यादा मालूम होता था। पेट कुछ बढ़ा हुआ, परंतु भद्दा नहीं लगता था। रंग साँवलापन लिये हुए। सारी देह एक बलवान् पुरुष की।

मनू का ध्यान शरीर के इन अंगों पर एकाध क्षण ठहरकर उनके सवारी के ढंग पर जा अटका। वह मुसकराई। अपनी सम्मति प्रकट करने के लिए आसपास लड़कियों में किसी उपयुक्त पात्र को मन-ही-मन ढूँढ़ने लगी। उसी समय मनू ने सोचा, यदि इस घड़ी नाना या राव यहाँ होते तो उनको सब बातें सुनाती-समझाती।

राजा गंगाधरराव धीरे-धीरे, रुकते-रुकते गणेश मंदिर की ओर जा रहे थे। नगर के निवासी प्रणाम करते जाते थे और वे मुसकरा-मुसकराकर प्रणाम का जवाब देते जाते थे।

यकायक मनू के सामने एक मराठा कन्या आई। आयु पंद्रह से कुछ ऊपर, शरीर छरहरा, रंग हलका साँवला, चेहरा जरा लंबा, आँखें बड़ी, नाक सीधी, ललाट प्रशस्त और उजला। जैसे ही वह मनू के पास आई, उसने आँखें नीची करके आदरपूर्वक प्रणाम किया। मनू को ऐसा लगा मानो वह पहले से परिचित हो। उससे बात करने की तुरंत इच्छा उमड़ी। बोली, 'तुम कौन हो?'

उसने उत्तर दिया, 'आपकी दासी, सुंदर मेरा नाम है।'

मनू—'मेरी दासी, कैसे?'

सुंदर—'आप हमारी महारानी हैं। मैं सेवा में रहूँगी। आपकी दासी होकर अपना भाग्य बढ़ाऊँगी।'

मनू—'मेरी दासी कोई भी न हो सकेगी, मेरी सहेली होकर रहोगी।' मनू ने उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा। वह झिझकी। मनू ने उसका हाथ ढीला करके पूछा, 'तुम क्या सचमुच सदा मेरे पास रहोगी?'

'सदा, सरकार', सुंदर ने उत्तर दिया, 'हम सोलह दासियाँ आपकी सेवा में रहा करेंगी।'

मनू को हँसी आई, परंतु उसने रोक ली। गंगाधरराव की सवारी अब भी सामने थी। मनू ने धीरे से सुंदर से कहा, 'तुम घोड़े पर चढ़ना जानती हो?'

सुंदर बोली, 'थोड़ा सा। दौड़ना खूब जानती हूँ, कोस भर दौड़ जाऊँगी और हाँफ न आएगी।'

धीरे-धीरे जानेवाले घोड़े को भी यह जाँघ से कसे जा रहे हैं! गंगाधरराव की ओर संकेत करके मनू ने कहा।

सुंदर ने चकित होकर पूछा, 'आपने कैसे जाना, सरकार?'

मनू हँसी। दाँतों की सफेदी चेहरे के निखरे गोरे रंग से होड़ लगाने लगी।

मनू ने कहा, 'तुम हथियार चलाना जानती हो, सुंदर?'

'नहीं सीखा, सरकार।' सुंदर ने जवाब दिया।

इतने में गंगाधरराव की सवारी आगे बढ़ गई। दो लड़कियाँ और मनू के निकट आईं। सुंदर की ही उम्र की एक दूसरी लगभग चौदह वर्ष की। उन्होंने भी सिर झुकाकर प्रणाम किया।

सुंदर ने परिचय दिया, 'इसका नाम मुंदर है और इसका काशी। मेरी तरह ये भी आपकी दासियाँ हैं।'

मनू ने बिना किसी प्रयत्न के कहा, 'मेरी सहेलियाँ बनकर रहोगी। दासी मेरी कोई भी न होगी।'

वे दोनों हर्ष के मारे फूल गईं। काशी जरा छोटे कद की और सुगठित शरीरवाली, मुंदर छरहरे शरीर की और जरा लंबी। मुंदर और काशी दोनों गौर वर्ण की। मुंदर का चेहरा बिलकुल गोल, आँखें सुंदर से कुछ ही छोटी, परंतु चंचल और तेज। काशी की कुछ बड़ी और स्थिर।

मनू ने तीनों से अलग-अलग प्रश्न किए।

'तुम लोग कौन हो?'

तीनों ने उत्तर दिया, 'कुणबी।'

'झाँसी में कब आईं?'

'पुरखे आए थे।'

'झाँसी के आसपास घूमी हो?'

'बहुत कम।'

'घोड़े पर चढ़ना जानती हो?'

'थोड़ा-थोड़ा।'

'हथियार चलाना?'

सुंदर तो पहले ही बता चुकी थी। मुंदर ने तलवार चलाना सीखा था और काशी ने बंदूक। मनू को जानकर अच्छा लगा।

बोली, 'मैं तुम लोगों को घोड़े पर चढ़ना सिखाऊँगी और हथियार चलाना भी। मलखंब जानती हो?'

वे तीनों सिर नीचा करके मुसकराईं। सिर हिला दिए—'नहीं जानतीं।'

'गाना-बजाना जानती हो?' मनू ने बहुत सूक्ष्म चुटकी लेते हुए कहा।

सुंदर बोली, 'वह तो हम तीनों जानती हैं, हम लोग जब सरकार की मरजी होगी, सुनावेंगी।'

मनू ने कहा, 'जब इच्छा होगी, सुनूँगी; परंतु मुझको उसका शौक कुछ कम है। वह अच्छा है, किंतु घुड़सवारी, हथियार चलाना, मलखंब, कुश्ती, प्राचीन गाथाओं का श्रवण—ये सब मुझको अधिक भाते हैं।'

'कुश्ती' सुंदर ने अपने बड़े नेत्रों को जरा घुमाकर आश्चर्य प्रकट किया!

मनू के होंठों पर सहज मुसकराहट आई। बोली, 'हाँ, कुश्ती भी। यह बहुत आवश्यक है। फिर किसी समय बताऊँगी। अभी अवसर नहीं है।'

इतने में कुछ और स्त्रियाँ पास आने को हुईं, परंतु कुछ दूर ठिठक गईं। मनू ने उनको उस समय अपने पास बुला लेने की जरूरत नहीं समझी।

मनू कहती गई, 'पुरुषों को पुरुषार्थ सिखाने के लिए स्त्रियों को मलखंब, कुश्ती इत्यादि सीखना ही चाहिए। खूब तेज दौड़ना भी। नाचने-गाने से भी स्त्रियों का स्वास्थ्य सुधरता है, परंतु अपने को मोहक बना लेना ही स्त्री का समग्र कर्तव्य नहीं है।'

चौदह वर्ष की मनू अपने से अधिक वयवाली लड़कियों से जो कह गई, वह पास ठिठकी हुई उन स्त्रियों ने भी सुन लिया।

मुंदर, सुंदर और काशी यह सब सुनकर जरा झेंपीं। उनकी मुसकराहट चली गई। परंतु मनू अब भी मुसकरा रही थी। वह मुसकराहट उन लड़कियों को, उन स्त्रियों को, जीवन के कोष में से कुछ दे-सा रही थी। उन लड़कियों का सहमा हुआ जी शीघ्र ही लहलहा गया। अन्य लड़कियों को तथा स्त्रियों को भी मनू ने अपने निकट बुला लिया। ये स्त्रियाँ उन तीनों लड़कियों की अपेक्षा अधिक सहमी हुई थीं।

मनू ने उनको अपना मन खोलने के लिए उत्साहित किया। स्त्रियों की ओर से प्रस्ताव, गायन इत्यादि द्वारा अपने हर्ष को प्रदर्शित करने का हुआ। उसने बिना किसी विशेष उत्साह के स्वीकार किया।

जो और लड़कियाँ उन स्त्रियों के साथ थीं, उनके विषय में मनू ने प्रश्न किए। वे सब दासियों के रूप में मनू के पास रहने के लिए नियुक्त कर दी गई थीं, क्योंकि विवाह का मुहूर्त आ रहा था। उसके बाद भी उनको मनू के पास ही रहना था।

ये लड़कियाँ अब्राह्मण जातियों में से रूप, रस इत्यादि के पैमाने से तौलकर चुनी जाती थीं और उनको आजन्म अपनी रानी के साथ कुमारी होकर रहना पड़ता था। यदि वे विवाह कर लेतीं तो उनको महल की नौकरी छोड़नी पड़ती थी। दहेज में दासियों और दासों का देना महाराष्ट्र में नहीं था, शायद राजपूताने के कुछ रजवाड़ों से वहाँ पहुँचा हो। शायद इसका प्रारंभ भिक्षुणी और देवदासी प्रथा से निसृत हुआ हो। इन दासियों के जीवन कितने कौतूहलों और कितने कोलाहलों से भरे रहते होंगे तथा इनके जीवन कितने दुखांत होते होंगे, उसकी कल्पना की जा सकती है। इनको जन्म देनेवाले लगभग इसी प्रकार के माता-पिता, केवल धनलोभ से इनको महलों के सुपुर्द कर देते थे। फिर, या तो वे सौंदर्य के जमाने में राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं या जीवन के स्वाभाविक मार्ग पर जाकर महल से अलग हो जाती थीं।

मनू ने दासियों के इस चित्र की कल्पना की।

उसने अपनी उसी सहज मुसकराहट से कहा, 'मैं तुमको दासियाँ बनाकर नहीं रखूँगी। तुम मेरी सखी-सहेली बनोगी, केवल एक यही शर्त है।'

मनू ने अपने विशाल नेत्रों की दृष्टि को उनपर बिखेरा। बोली, 'जानती हो क्या?'

उन सबने 'नाहीं' के सिर हिलाए।

मनू ने कहा, जो मेरे साथ रहना चाहे—उसको घोड़े की सवारी अच्छी तरह आनी चाहिए; तलवार, बंदूक, बरछी, छुरी-कटार, तीर-तमंचा इत्यादि का चलाना अच्छी तरह चलाना-सीखना पड़ेगा। दोनों हाथों से हथियार चलाना सीख जाएँ तो और भी अच्छा।'

पुरुषों जैसे काम सीखने की बात सुनते ही स्त्रियों के चेहरों पर लाज की हलकी लाली दौड़ गई। परंतु मन के हर्ष और उत्साह ने लाज को दबा लिया।

काशी ने स्थिर दृष्टि और स्थिर स्वर में कहा, 'हम लोगों को जो कुछ सिखाया गया है, उतना ही हम जानती हैं। अब जो कुछ सरकार की आज्ञा होगी, उसको हम लोग जी लगाकर दृढ़ता के साथ सीखेंगी। परंतु कुश्ती और मलखंब कौन सिखलावेगा?'

मनू ने तुरंत बताया, 'जितना मैं जानती हूँ, मैं सिखाऊँगी। बाकी बिठूर के प्रसिद्ध आचार्य बाला गुरु। उनको यहाँ बुला लूँगी।'

बाला गुरु का नाम सुनते ही लड़कियाँ शरमा गईं और उनसे बड़ी उम्र की स्त्रियाँ हँस पड़ीं। उस हँसी पर मनू के मन में क्षोभ उठा, परंतु मनू ने उसको नियंत्रित कर लिया।

फिर उसी मुसकराहट के साथ बोली, 'बाला गुरु देवता हैं, और न भी हों तो तुमको क्या डर? स्त्रियाँ दृढ़ता का कवच पहनें तो फिर संसार में ऐसा पुरुष कोई हो ही नहीं सकता, जो उनको लूट ले। बाला गुरु के साथ लड़कर कुश्ती सीखने की जरूरत नहीं पड़ेगी। वह बताया भर करेंगे। अखाड़े में उतरकर मैं सिखाऊँगी।'

गणेश मंदिर पास ही था। वाद्य बज रहे थे। उनमें होकर कभी-कभी मीठी शहनाई की चहक भी सुनाई पड़ जाती थी। स्त्रियाँ मनू से श्रृंगार रस की बातें करने आई थीं, अपने आदर के झरोखे में होकर। मनू के मन की धारा

गंगाधरराव की सवारी, बाजों-गाजों और झाँसी निवासियों के हर्षोन्माद से संघर्ष पाकर दूसरी ओर चली गई थी।

सब स्त्रियाँ-लड़कियाँ भी अपने अच्छे-से-अच्छे वस्त्र और आभूषण पहने हुए थीं। केश खूब सँवारे गए थे और उनमें रंग-बिरंगे एवं सुगंधित फूल गूँथे गए थे। मनू के केशों में भी फूल थे। मनू ने हँसकर कहा, 'तुम लोग यदि कुश्ती सीखने के लिए इसी समय अखाड़े में उतरो तो क्या हो ?'

सुंदर मुसकराकर बोली, 'तो इन फूलों से सारा अखाड़ा भर जाएगा।'

मनू ने हँसकर कहा, 'और तुम्हारे बालों में अखाड़े की मिट्टी भर जाएगी।'

वे सब खिलखिला पड़ीं।

मनू बोली, 'परंतु वह मिट्टी तुम्हारे केशों पर इन फूलों से कहीं अधिक सुहावनी लगेगी।'

मुंदर बोली, 'सरकार, बालों की शोभा मिट्टी से ?'

मनू ने मुंदर का कंधा हिलाकर कहा, 'ये फूल कहाँ से आए ? कहाँ जाएँगे ? ये क्या मिट्टी से बढ़कर हैं ?'

मनू की बात में, अपनी दादियों से सुनी हुई संसार की अस्थिरता की झाँईं सुनकर वे सहम गईं।

मनू समझ गई। बोली, 'नहीं, फूलों से नाता बनाए रखो, परंतु मिट्टी से संबंध तोड़कर नहीं।'

स्त्रियों के मन पर एक दार्शनिक-झकोर ठोकर दे गई। उन्होंने ऊँचे स्वर में 'हाँ-हाँ' कही; परंतु आँखों में ऐसा जान पड़ता था, मानो उनका आनंद कहीं भाग गया। उन्हें अपनी असंगत अवस्था में क्लेश होने लगा, मानो मनू ने उनके फूलों की भर्त्सना की हो और उनके आदर का अपमान।'

मनू ने उन स्त्रियों से कहा, 'तुम गणेश मंदिर में जाकर देखो, क्या होता है। मैं तब तक इन तीनों से बात करती हूँ। परंतु एक बात सुनती जाओ। मुझको तुम्हारे फूल बहुत अच्छे लगे, इनको फेंक मत देना।'

इस बात पर प्रसन्न होकर वे सब चली गईं। केवल सुंदर, मुंदर और काशी रह गईं।

मनू बोली, 'मैं सुनती हूँ, झाँसी के लोग फूलों को बहुत प्यार करते हैं। अच्छा है, मुझको भी पसंद हैं, परंतु क्या दुबले-पतले घोड़े पर सोने-चाँदी का जीन अच्छा लगता है ?'

सुंदर ने उमंग के साथ तुरंत कहा, 'सरकार, मैं आपकी बात अब समझी।'

सीमंती आदि की प्रथाएँ पूरी होने के उपरांत गणेश मंदिर में गायन-वादन एवं नृत्य हुए और एक दिन विवाह का भी मुहूर्त आया।

विवाह के उत्सव पर आसपास के राजा भी आए।

कोठी-कुआँवाले भवन में भाँवर पड़ने को थीं। बाहर गायन-वादन और नृत्य हो रहा था। सामनेवाले मकान मैं मोतीबाई, जूहीबाई इत्यादि अभिनेत्रियाँ झरपों के पीछे वस्त्राभूषणों और पुष्पों से लदी बैठी थीं। एक सरदार सोने के वर्कों से लिपटे पान और बढ़िया इत्र लिये आए। उन्होंने कहा कि भाँवर शुरू हो गईं। उसी समय भीतर एक घटना हुई।

पुरोहित ने मनूबाई की गाँठ गंगाधरराव से जोड़ने के लिए चादर और वधू की साड़ी के छोर हाथ में पकड़े। वृद्धावस्था के कारण हाथ काँप रहा था। गाँठ लगाने में जरा सा विलंब हुआ। गाँठ अच्छी तरह नहीं बँध पा रही थी। बार-बार हाथ काँप जाता था।

मनू ने सोचा, 'मैं ही क्यों न इसको बाँध दूँ?'

परंतु उसने विचार को नियंत्रित कर लिया। गाँठ तो पुरोहित ने बाँध ली, लेकिन वह काँपते हुए हाथों से गाँठ का फंदा कसने में कुछ क्षणों का विलंब कर रहे थे। मनू से न रहा गया। बिना मुसकराहट के और दृढ़ स्वर में बोली, 'ऐसी बाँधिए कि कभी छूटे नहीं।'

गंगाधरराव सिकुड़ गए। मोरोपंत मन–ही–मन क्षुब्ध हुए। होंठ सिकोड़ लिये। परंतु पुरोहित खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसके पास खड़े सब स्त्री–पुरुष हँस पड़े। कहकहे लग गए। मनू पुलकित हो गई। आँखें नीची करके उसने थोड़ा सा मुसकरा भर दिया। इस कहकहे की आवाज बाहर पहुँची और मनू की कही हुई बात भी। वहाँ भी कहकहे लगे। चारों ओर उस वाक्य की चर्चा हो उठी।

सामनेवाले मकान में भी समाचार पहुँचा। जूही ने कहा, 'मैं तो नाचना चाहती हूँ। ऐसे अवसर पर चुपचाप बैठे–बैठे थक गई हूँ। इतनी खुशी के समय भी न नाचें तो कब नाचेंगे?'

मोतीबाई में बाहरी गंभीरता थी, परंतु मन आह्लाद में फुदक रहा था। बोली, 'नाचो, कोई हर्ज नहीं। मैं भी नाचना चाहती हूँ, परंतु घुँघरू बाँधकर नहीं। बाहर बड़े–बड़े राजा–महाराजा बैठे हैं। शोर–गुल सुनेंगे तो क्या कहेंगे?'

जूही बोली, 'तबला–घुँघरू हमको कुछ नहीं चाहिए, शोर–गुल न होगा। इसपर भी महाराज अगर कुछ कहेंगे तो मैं भुगत लूँगी। आखिर नाटक होगा ही। हम लोग रंगशाला में नाचेंगे और गावेंगे ही। राजे–महाराजे नाटकशाला में पास से सबकुछ देखेंगे ही। मैं नहीं मानूँगी।'

उन दोनों ने मनमाना नृत्य किया और नर्तकियों ने ताल दिया।

थोड़ी देर में भाँवर की रस्म पूरी हो गई। अन्य रस्मों के पूरा होने पर गंगाधरराव वर की सजधज में पाँवड़ों पर, फूलों और चावलों की वर्षा में बाहर आए। सबने ताजीम दी। गाना–बजाना थोड़ी देर के लिए बंद हो गया। गंगाधरराव एक ऊँची मसनद पर जा बैठे और इधर–उधर बारीकी के साथ देखने लगे कि मनू के वाक्य का असर भद्देपन की किस हद तक हुआ है। उनकी आँखें कहीं जम नहीं रही थीं। आँखों के लाल डोरों में रौब की जगह संकोच ने पकड़ ली थी।

वहाँ के उपस्थित लोगों के जी में वही वाक्य बार–बार और जोर के साथ चक्कर काट रहा था। आँखें सबकी गंगाधरराव के दूल्हा वेश पर जा रही थीं और मन के मना करने पर भी आँखें उसी वाक्य को दुहरा रही थीं।

उस मकान की झरप के भीतर का नृत्य बंद हो गया था। उन अभिनेत्रियों के होंठों पर वही वाक्य था।

जूही ने धीरे से मोतीबाई से कहा, 'असली राजा तो झाँसी को अब मिला, बाईजी।'

मोतीबाई ने आँख तरेर कर जूही का हाथ दबाया, 'राजा सुनेंगे तो गरदन काटकर फिकवा देंगे, खबरदार!'

'मैंने तो आपसे कहा, जूही बोली, 'आपसे हाथ जोड़ती हूँ, किसीको मेरी बात मालूम न होने पावे।'

उस युग की प्रथा के अनुसार, उस दिन सबको कुछ–न–कुछ दिया गया। रात को नाटक हुआ।

विवाह की समाप्ति पर दरबार हुआ। नजर–न्योछावरें हुईं। पुरस्कार बाँटे गए।



: ८ :

विवाह होने के पहले गंगाधरराव को शासन का अधिकार न था। उन दिनों झाँसी का नायब (पॉलिटिकल एजेंट) कप्तान डनलप था। वह राजा के पास आया-जाया करता था। लोग कहते थे कि दोनों में मैत्री है।

गंगाधरराव अधिकार प्राप्त करने का प्रयत्न पहले से कर रहे थे। विवाह के उपरांत उनको अधिकार मिल गया। परंतु अधिकार मिलने के पहले कंपनी सरकार के साथ फिर एक अहदनामा हुआ। पुरानी बातें पुष्ट की गईं।

केवल एक बात नई हुई—झाँसी में एक अंग्रेजी फौज रखी जाएगी पर खर्चा झाँसी का राज्य देगा। गंगाधरराव को मानना पड़ा। मन को खटका। उन्हौंने नगद खर्चा न देकर कंपनी सरकार का आग्रह निभाने के लिए झाँसी के राज्य से दो लाख सत्ताईस हजार चार सौ अट्ठावन रुपए वार्षिक आय का एक इलाका इन राज्य-लोलुपों को दे दिया। जब यह सब हो गया तब गंगाधरराव को शासन का अधिकार मिल पाया। इसके बाद दरबार हुआ। खुशियाँ मनाई गईं। खेल-कूद, नाटक इत्यादि हुए, परंतु अनेक झाँसी निवासियों को उनमें खोखलापन ही दिखाई पड़ा। उनको अपने प्रदेश का खंडित होना कसका।

स्वयं राजा को नाटकशाला में यथेष्ट मनोरंजन नहीं मिल सका। वे शीघ्र वहाँ से चले आए और रंगमहल में रानी के पास पहुँचे।

रानी किलेवाले महल में ही प्राय: रहती थीं। बाहर बहुत कम निकल पाती थीं। जब निकलतीं तब परदे की कैद में। इसलिए सवारी, व्यायाम इत्यादि किलेवाले महल के इर्दगिर्द आड़-ओट से कर पाती थीं। तो भी वह काफी समय इन बातों में लगाती थीं और अपनी समग्र सहेलियों तथा किले के भीतर रहनेवाली स्त्रियों को सवारी, शस्त्र-प्रयोग, मलखंब, कुश्ती का अभ्यास कराती थीं। बचे हुए समय में धार्मिक ग्रंथों का थोड़ा सा, परंतु नियमपूर्वक अध्ययन करतीं। भगवद्‍गीता पर उनकी परम श्रद्धा थी। बाल्यावस्था को पार कर यौवन में पदार्पण करने को थीं, परंतु नए-नए वस्त्र, कीमती आभूषणों का शौक न करके उनकी धुन उपर्युक्त बातों की ओर अधिक रहती थी।

झाँसी आने के बाद चपल, सुखी मनू में एक परिवर्तन धीरे-धीरे घर करता जा रहा था—अब वह उतना नहीं बोलती थीं। रानी लक्ष्मीबाई में गंभीरता घर करती जा रही थी और क्रुद्ध हो जाने की वृत्ति तो और भी अधिक शीघ्रता के साथ घुलती चली जा रही थी। व्यंग्य करने की इच्छा जरूर कुछ बढ़ती पर थी, परंतु वह सहज, सरल, भव्य-दिव्य मुसकान सदा साथ रही। और चित्त की दृढ़ता तो पूर्वजन्मों से संचित होकर मानो छठी के दिन ही ब्रह्मा ने पूरी समूची उनके हिस्से में रख दी थी।

रंगमहल में आने पर रानी ने गंगाधरराव का सत्कार, जैसाकि हिंदू नारी—और पत्नी—कर सकती है, किया।

राजा अपने भावों को छिपाने में असमर्थ थे। उनको इसका अभ्यास न था। चेहरे पर रुखाई थी और आँखों में उदासी।

रानी ने कहा, 'आज आप नाटकशाला से जल्दी लौट आए। खेल अच्छा नहीं हुआ क्या?'

राजा बोले, 'खेल तो सदा अच्छा होता है। मन नहीं लगा। एक नए खेल की तैयारी के लिए कह आया हूँ।'

रानी—'कौन सा?'

राजा—'मृच्छकटिक।'

रानी—'यह क्या है?'

राजा—'शूद्रक कवि ने संस्कृत में लिखा है। मैंने हिंदी में उल्था करवाया है। चारूदत्त ब्राह्मण और वसंतसेना के

प्रेम की अद्‌भुत कहानी है। आप देखने चलोगी ?'

रानी—'नहीं।'

राजा—'घोड़े की सवारी, कुश्ती, मलखंब के सिवाय आपको और भी कुछ पसंद है या नहीं ?'

रानी—'अवश्य। सहेलियों को अपना-सा बनाना। उनको अवसर-कुअवसर पड़े पुरुषों की सहायता करने में पीछे पैर न देने की सीख देना, घर की सफाई, स्वच्छता इत्यादि बनाए रखना, काफी काम है।'

राजा—'इन सबको मोटा-तगड़ा बनाकर आप क्या करने जा रही हैं ?'

रानी—'अभी तो मुझको भी नहीं मालूम। पर देह और मन को सबल बना लेना क्या कोई कम महत्त्व का काम है ?'

राजा—'व्यर्थ है। घर का ही इतना काफी काम स्त्रियों के लिए संसार में है कि उनको घुड़सवारी इत्यादि की ओर खींच ले जाना, फूहड़ बनाना है।'

रानी—'और नाचना-गाना ?'

राजा—'अकेले में सभी स्त्रियाँ नाचती-गाती हैं। परंतु यदि वे इन विद्याओं को ढंग से सीखें तो शरीर और मन दोनों के लिए काफी कसरत पा सकती हैं।'

रानी—'हाँ, स्वराज्य स्थापित है। अब सिवाय हँसन-खेलने के नर-नारियों के लिए और काम ही क्या बचा है। देखिए न, किस आराम के साथ झाँसी राज्य का पंचमाँश से अधिक अंग्रेजों के हाथ में दे दिया गया। आपका वह मित्र गार्डन भी नाटकशाला में आता होगा ?'

राजा—'अंग्रेज लोग खूब हँसते-खेलते और नाचते हैं।'

रानी—'और नाचते-गाते ही पूरे हिंदुस्तान को रौंदते चले जाते हैं। खेल तो बढ़िया है।'

राजा—'हमारे यहाँ फूट है। गाँव-गाँव में उपद्रवी, डाकू और बटमार भरे हुए हैं। अंग्रेजों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिए उन्होंने राज्य कायम कर लिया।'

रानी—'नाटकशाला में जो हथियार बनते हैं, उनसे क्या अंग्रेज नहीं हराए जा सकते हैं ?'

राजा को यह व्यंग्य अखर गया। पर जिस मुसकान के साथ वह निसृत हुआ था, वह आकर्षक थी। साथ ही, मोतीबाई, जूही इत्यादि कल्पना में बिजली की तरह कौंध गईं और आगे आनेवाले मृच्छकटिक नाटक के अभिनय ने एक उमंग पैदा की। रानी की मुसकान का आकर्षण उसी क्षण तिरोहित हो गया और उसके साथ ही उठता हुआ क्षोभ। बोले, 'आप कभी-कभी बहुत कड़ी चोट कर बैठतीहैं।'

रानी ने अदम्य भाव से कहा, 'आपके यहाँ के भाट क्या केवल प्रशंसा और यशगान ही करते हैं या कभी-कभी कड़खा भी सुनाते हैं ?'

राजा का क्षोभ उमड़ा, परंतु उन्होंने उसको वहीं-का-वहीं दबाने का प्रयत्न किया और विषयांतर करते हुए बोले, 'हमारे यहाँ कवि, चित्रकार इत्यादि अनेक कलाकार हैं।'

रानी ने भी बात न बढ़ाते हुए पूछा, 'कवि कौन हैं और क्या करते हैं ?'

राजा ने भी उत्तर दिया, 'एक हृदयेश है। अच्छा कवि है। एक पजनेश है। रंगीन है। कहता अच्छे ढंग से है।'

'ये लोग क्या लिखते हैं ?'

'राधागोविंद का प्रेमवर्णन, नखशिख, नायिका-भेद।'

'नखशिख, नायिका-भेद क्या ?'

'राधा या गोपियों की चोटी से लेकर एड़ी तक का कोमल वर्णन। यह नखशिख हुआ। नाना प्रकार की सुंदर

स्त्रियों की वृत्तियों का विविध वर्णन, यह नायिका-भेद है।'

'अर्थात् स्त्रियों के पूरे शरीर की सूक्ष्म जाँच-पड़ताल, और इस काम के लिए इन लोगों को इनाम-पुरस्कार भी दिए जाते होंगे?'

राजा जरा झेंपे, परंतु सहमे नहीं। बोले, 'इस प्रकार की कविता करने में बहुत विद्वत्ता और मेहनत खर्च करनी पड़ती है। इसलिए उनको पुरस्कार दिया जाता है। वे लोग राजदरबार की शोभा हैं।'

रानी ने फिर उसी मुसकराहट के साथ पूछा, 'भूषण को छत्रपति शिवाजी क्या इसी तरह की कविता के लिए बढ़ावा दिया करते थे? भूषण तो दरबार की शोभा रहे होंगे?'

राजा इस व्यंग्य से चिढ़ गए और क्षोभ को दबा न सके।

बोले, 'आप हमेशा छत्रपति और पंत प्रधान बाजीराव और न जाने किन-किनका नाम दिन-रात रटा करती हैं। मैंने कई बार कहा कि इन बातों की छेड़छाड़ में अब कोई सार नहीं।'

रानी ने कहा, 'मैं भी तो विनती किया करती हूँ कि उन बातों को बताइए जिनमें सार हो।'

राजा—'आप राज्य का प्रबंध करना सीखिए। मैं भी इस ओर ध्यान देता हूँ। अच्छी व्यवस्था बनी रहे तो राज्य बना रहेगा, अन्यथा अंग्रेज फिर इसको अपनी देखरेख में ले लेंगे या शायद राज्य को खत्म करके अपना अधिकार बरतने लग जाएँ।'

रानी—'उस समय क्या नाटकशालावाले किसी काम न आएँगे?'

राजा के हृदय में आग-सी लग गई। कुछ कहना चाहते थे, कुछ कह गए, 'आपके मन में हठ नगर-कोट के बाहर घोड़े पर घूमने का है और सखी-सहेलियाँ भी जंगल-टौरियों पर साथ में घोड़े कुदाएँ तो इससे बढ़कर न राज्य है, न राज्य-प्रबंध और न बेचारी नाटकशाला। ठीक है न?'

रानी के ऊपर उनके क्रोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बोली, 'मेरे-आपके, दोनों के लिए यह विशाल महल क्या कम है?'

राजा पर इस व्यंग्य की चोट पड़ गई, पर वे गुस्से को पीने लगे। कुछ सोचकर पूछा, 'क्या सचमुच आपको नाटकशाला का मेरा मनोरंजन नापसंद है?'

रानी ने तुरंत उत्तर दिया, 'इन दिनों अब इससे अधिक और हो ही क्या सकता है? राज्य का काम चलाने के लिए दीवान है। डाकुओं का दमन करने और प्रजा को ठीक पथ पर चालू रखने के लिए अंग्रेजी सेना है ही। इसपर भी यदि कोई गलती हो गई तो कंपनी के एजेंट की खुशामद कर ली। बस, सब काम ज्यों-का-त्यों मनमाना चलता रहा।'

रानी मुसकराने लगी।

इस बात में रानी की विलक्षण बुद्धि का आभास पाकर राजा को जरा विस्मय हुआ। उनके होंठों पर बरबस हँसी आई।

छुटपन की छबीली मनू, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई।

❑

: ९ :

राजा गंगाधरराव पुरातनपंथी थे। वे स्त्रियों की उस स्वाधीनता के हामी न थे, जो उनको महाराष्ट्र में प्राप्त रही है। दिल्ली, लखनऊ के परदा के बंधेजों को वे जानते थे। उतना बंधेज वे अपने रनवास में उत्पन्न नहीं कर सकते थे, यह भी उनको मालूम था। जनता की स्त्रियाँ मुँह उघाड़े फिरें, चाहे घूँघट डाले फिरें, इस विषय में उनकी उपेक्षा थी। परंतु अपने महल में काफी परदा बरतने के वे दृढ़ पक्षपाती थे।

इसलिए लक्ष्मीबाई किले के बाहर घोड़े पर नहीं जा सकती थीं। किले में भी उनकी स्वतंत्रता पर काफी बंधन था। तीर्थयात्रा से लौटने पर किले के भीतरवाले महल के मैदान के चारों ओर ऊँची-ऊँची कनातें लगवा दी गईं, जिससे उनको घोड़े की सवारी इत्यादि में बहुत अड़चन होने लगी। मलखंब और कुश्ती का प्रबंध उनको अपने कक्ष के भीतर ही मोटे और नरम कालीनों की पर्तों पर करना पड़ा। उन्होंने अभ्यास छोड़ा नहीं। गंगाधरराव ने उनकी सहेलियों को बदलने का प्रयत्न किया, परंतु सुंदर, मुंदर और काशी को वे नहीं हटा सके।

अंतर्द्वंद्व के कारण गंगाधरराव के मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई और अपराधियों को दंड देने के लिए वे बिलकुल नए-नए साधन काम में लाने लगे।

मृच्छकटिक नाटक के खेल का दिन आया। मोतीबाई ने वसंतसेना का अभिनय किया और जूही ने उसकी सखी का। राजा ने उस दिन नाटकशाला को खूब सजवाया। कप्तान गार्डन भी निमंत्रित हुआ। खेल अच्छा हुआ। नृत्य, गायन, अभिनय सभी की गार्डन ने प्रशंसा की।

खेल की समाप्ति पर गार्डन के मुँह से निकल पड़ा, 'महाराजा साहब, एक बात समझ में नहीं आती। आपकी संस्कृति में वेश्याओं को इतने आदर का स्थान क्यों दिया गया है?'

राजा ने हँसकर उत्तर दिया, 'क्योंकि हमारे पुरखे बहुत समझदार थे।'

गार्डन को अपने देश के क्रामवेल के समय का कठमुल्लावाद (Puritanism) और उसके तुरंत ही बाद का, चार्ल्स द्वितीय के समय का मनमौजवाद याद आ गया। बोला, 'नहीं महाराज, कुछ और बात है। असल में हिंदुस्तान कई बातों में गिरा हुआ है।'

गंगाधरराव ने कहा, 'फिर कभी बात करूँगा।'

गार्डन चलने को हुआ कि राजा ने एक कोने में खुदाबख्श नामक अपने एक सरदार को, जिसको राजा ने एक बहुत छोटे अपराध पर देश-निकाला दे दिया था, देख लिया। तुरंत अपने अंगरक्षक से पूछा, 'यह कौन है?'

उसने उत्तर दिया, 'खुदाबख्श।'

'यह कैसे आया?' राजा ने प्रश्न किया।

अंगरक्षक उत्तर नहीं दे पाया। खुदाबख्श ने समझ लिया और वह तुरंत भीड़ में विलीन होकर निकल गया।

गार्डन ने पूछा, 'क्या बात है, महाराजा साहब?'

राजा ने कहा, 'कुछ नहीं, यों ही। एक आदमी को आज बहुत दिनों के बाद नाटकशाला में देखा है।'

गार्डन चला गया। राजा ने नाटकशाला के प्रहरी को कैद में डलवा दिया और सवेरे पेश किए जाने की आज्ञा दी।

खुदाबख्श को बहुतेरा ढुँढ़वाया, परंतु पता नहीं लगा।

दूसरे दिन मोतीबाई नाटकशाला से बर्खास्त कर दी गई। नाटकशाला के पात्रों को कोई कारण समझ में नहीं आ रहा था। वे लोग आशा कर रहे थे कि इतना अच्छा अभिनय इत्यादि करने के उपलक्ष्य में बधाई और पुरस्कार

मिलेंगे, परंतु हुआ उलटा। उनकी सबसे अच्छी अभिनेत्री निकाल दी गई। झाँसी में जिन लोगों ने मोतीबाई के नृत्य को देखा था अथवा उसका गायन सुना था, सब क्षुब्ध थे।

सवेरे नाटकशाला के प्रहरी की पेशी हुई। राजा ने स्वयं मुकदमा सुना।

राजा ने खिसियाकर पूछा, 'क्यों रे नमकहराम, यह खुदाबख्श नाटकशाला में कैसे आ गया?'

उसने घिघियाकर उत्तर दिया, 'श्रीमंत सरकार, मैं भूल गया। मुझको याद नहीं रहा कि वह बिना आज्ञा के नहीं आ सकता था।'

'तू यह भूल गया कि मैं उसको देश-निकाला दे चुका हूँ?' राजा ने कड़ककर कहा।

प्रहरी अत्यंत विनीत भाव से बोला, 'इस बात को श्रीमंत सरकार, बहुत दिन हो गए, इसलिए मुझको सुध नहीं रही और सरकार ने उस दिन तीर्थयात्रा से लौटने की खुशी में बहुत से लोगों को माफी बख्शी, सो मैंने सोचा कि खुदाबख्श को माफी मिल गई होगी।'

इस उत्तर से राजा का क्रोध घटा नहीं, जरा और बढ़ गया। रोते हुए प्रहरी को सजा दी गई बिच्छू से डँसवाने की।

गंगाधरराव ने एक विशेष वर्ग के अपराधों के लिए बिच्छू से कटवाने का विधान कर रखा था। कट्ठे में पैरों का डालना-भाँजना एक साधारण बात थी। गहन अपराधों में हाथ-पाँव कटवा डालने की जनसम्मत प्रथा जारी थी, परंतु दबे-दबे और थोड़ी-थोड़ी। दहकते अंगारों से डाकुओं के अंग जलवाना इस विधान में शामिल था, परंतु बिच्छुओं से कटवाना जनवृत्ति की सहन-शक्ति से बाहर हो गया था।

बिच्छू से कई जगह कटवाए जाने के कारण प्रहरी बेहद संतप्त हुआ। अंत में बेहोश हो गया। राजा समझे मर गया, तब उनका क्रोध ठंडा पड़ा। प्रहरी वहाँ से हटवा दिया गया।



: १० :

वसंत आ गया। प्रकृति ने पुष्पांजलियाँ चढ़ाईं। महकें बरसाईं। लोगों को अपनी श्वास तक में परिमल का आभास हुआ। किले के महल में रानी ने चैत की नवरात्रि में गौरी की प्रतिमा की स्थापना की। पूजन होने लगा। गौरी की प्रतिमा आभूषणों और फूलों के श्रृंगार से लद गई और धूप-दीप तथा नैवेद्य ने कोलाहल-सा मचा दिया। हरदी-कूँकूँ (हलदी-कुंकुम) के उत्सव में सारे नगर की नारियाँ व्यग्र, व्यस्त हो गईं।

परंतु उनमें से बहुत थोड़ी ही गले में सुमन-मालाएँ डाले थीं, उनके पास हृदयेश की कविता और उसका फल दूसरे रूप में पहुँचा था—इनको भ्रम था कि राजा-रानी हम लोगों के श्रृंगार पसंद नहीं करते। इसलिए जब वे स्त्रियाँ—जो पूजन के लिए रनवास में आईं—चढ़ाने के लिए तो अवश्य फूल ले आईं, परंतु गले में माला डाले कुछेक ही आईं।

सब जातियों को किले में जाने की आजादी थी। किले के उस भाग में, जहाँ महादेव और गणेश का मंदिर था और जिसको 'शंकर किला' कहते थे, सब कोई जा सकते थे—अछूत कहलानेवाले चमार, बसोर और भंगी भी। जहाँ अपने कक्ष में रानी ने गौरी को स्थापित किया था, वहाँ इन जातियों की स्त्रियाँ नहीं जा सकती थीं। परंतु कोरी और कुम्हारों की स्त्रियाँ जा सकती थीं। कोरी और कुम्हार कभी अछूत नहीं समझे गए थे।

सुंदर ललनाओं को आभूषणों से सजा हुआ देखकर रानी को हर्ष हुआ, पंरतु अधिकांश के गलों में पुष्पमालाओं की त्रुटि उनको खटकी। उन्होंने स्त्रियों से कहा, 'तुम लोग हार पहनकर क्यों नहीं आईं। गौरी माता को क्या अधूरे श्रृंगार से प्रसन्न करोगी?'

स्त्रियों के मन में एक लहर उद्वेलित हुई।

लालाभाऊ बख्शी की पत्नी उन स्त्रियों की अगुआ बनकर आगे आई। वह यौवन की पूर्णता को पहुँच चुकी थी। सौंदर्य मुखमंडल पर छिटका हुआ था, बख्शिनजू कहलाती थी। हाथ जोड़कर बोली, 'जब सरकार के गले में माला नहीं है तब हम लोग कैसे पहनें?'

रानी को असली कारण मालूम था। बख्शिनजू के बहाने पर उनको हँसी आई। पास आकर उसके कंधे पर हाथ रखा और सबको सुनाकर कहने लगीं, 'बाहर मालिनें नाना प्रकार के हार गूँथे बैठी हुई हैं। एक मेरे लिए लाओ। मैं भी पहनूँगी। तुम सब पहनो और खूब गा-गाकर माता को रिझाओ। जो नाचना जानती हों, नाचें। इसके उपरांत दूसरी रीति का कार्य होगा।'

स्त्रियाँ होड़ाहींस में मालिनों के पास दौड़ीं, पंरतु मुंदर पहले माला ले आई। बख्शिन जरा पीछे आई। मुंदर माला पहनानेवाली ही थी कि रानी ने उसको मुसकराकर बरज दिया। मुंदर सिकुड़-सी गई।

रानी ने कहा, 'मुंदर, एक तो तू अभी कुमारी है, दूसरे तेरे हाथ के फूल तो नित्य ही मिल जाते हैं। बख्शिनजू के फूलों का आशीर्वाद लेना चाहती हूँ।'

बख्शिनजू हर्षोत्फुल्ल हो गईं। मुंदर को अपने दासीवर्ग की प्रथा का स्मरण हो आया—विवाह होते ही महल और किला छोड़ना पड़ेगा, उदास हो गई। रानी समझ गई। बख्शिन ने पुष्पमाला उनके गले में डालकर पैर छुए। रानी ने उठकर अंक में भर लिया। फिर मुंदर का सिर पकड़कर अपने कंधे से चिपटाकर उसके कान में कहा, 'पगली क्यों मन गिरा दिया? मेरे पास से कभी अलग न होगी।'

मुंदर उस स्थिति में हाथ जोड़कर धीरे से बोली, 'सरकार, मैं सदा ऐसी ही रहूँगी और आपके चरणों में अपनी देह

को इसी दशा में छोड़ूँगी।'

फिर अन्य स्त्रियों ने भी रानी को हार पहनाए, इतने कि वह ढक गईं और उनको साँस लेना दूभर हो गया। सहेलियाँ उनके हार उतार-उतारकर रख देती थीं और वह पुनः-पुनः ढक दी जाती थीं।

अंत में कोने में खड़ी हुई एक नववधू माला लिये बढ़ी। उसके कपड़े बहुत रंग-बिरंगे थे। चाँदी के जेवर पहने थी। सोने का एकाध ही था। सब ठाठ सोलह आना बुंदेलखंडी। पैर के पैजनों से लेकर सिर की दाउनी (दामिनी) तक सब आभूषण स्थानिक। रंग जरा साँवला, बाकी चेहरा रानी की आकृति, आँख-नाक से बहुत मिलता-जुलता। रानी को आश्चर्य हुआ और स्त्रियों के मन में काफी कौतूहल। वह डरते-डरते रानी के पास आई।

रानी ने पूछा, 'कौन हो?'

उत्तर मिला, 'सरकार, हों तो कोरिन।'

'नाम?'

'सरकार, झलकारी दुलैया।'

'निस्संदेह जैसा नाम है वैसे ही लक्षण हैं, पहना दे अपनी माला।'

झलकारी ने माला पहना दी और रानी के पैर पकड़ लिये।

रानी के हठ करने पर झलकारी ने पैर छोड़े।

रानी ने उससे पूछा, 'क्या बात है, झलकारी? कुछ कहना चाहती है क्या?'

झलकारी ने सिर नीचा किए हुए कहा, 'मोय जा विनती करने—मोय माफी दई जाय तो कओं।'

रानी ने मुसकराकर अभयदान दिया।

झलकारी बोली, 'महाराज, मोरे घर में पुरिया पूरबे कौ और कपड़ा बुनवे कौ काम होत आऔ है। पै उननैं अब कम कर दऔ है। मलखंब, कुश्ती और जाने का-का करन लगे। अब सरकार घर कैसें चलै?'

रानी ने पूछा, 'तुम्हारी जाति में और कितने लोग मलखंब और कुश्ती में ध्यान देने लगे हैं?'

'काये, मैं का घर-घर देखत फिरत?' झलकारी ने बड़ी-बड़ी कजरारी आँखें घुमाकर तीक्ष्ण उत्तर दिया।

रानी हँस पड़ीं, 'यह तो तुम्हारे पति बहुत अच्छा काम करते हैं। तुम भी मलखंब, कुश्ती सीखो। इनाम दूँगी। घोड़े की सवारी भी सीखो।'

झलकारी लंबा घूँघट खींचकर नब गई। घूँघट में ही बेतरह हँसी। रानी भी हँसीं और अन्य स्त्रियों में भी हँसी का स्रोत फूट पड़ा।

लगभग सभी उपस्थित स्त्रियों ने जरा चिंता के साथ सोचा—'हम लोगों से भी मलखंब, कुश्ती के लिए कहा जाएगा। बड़ी मुश्किल आई।'

उन स्त्रियों ने उन फूलों के ढेरों और आभूषणों में होकर अखाड़ों और कुश्तियों को झाँका तथा परंपरा की लज्जा और संकोच में वे ठिठुर-सी गईं। उनकी हँसी को एक जकड़-सी लग गई।

झलकारी बोली, 'सरकार, मैं चकिया पीसत हों, दो-दो, तीन-तीन मटकन में पानी भर-भर ले आउत, राँटा[2] कातत...।'

रानी ने कहा, 'तुम्हारे पति का क्या नाम है?'

झलकारी सिकुड़ गई।

बख्शिन ने तपाक से कहा, 'आज हम लोग आपस में कुंकुम-रोरी लगाते समय एक-दूसरे से पति का नाम पूछेंगे ही। झलकारी को भी बताना पड़ेगा, उस समय। परंतु...' वह नखरे के साथ दूसरी स्त्रियों की ओर देखने लगी।

रानी ने हँसकर पूछा, 'परंतु क्या बख्शिनजू?'

बख्शिन ने उत्तर दिया, 'सरकार, बड़े काम पहले राजा से आरंभ होते हैं। आज के उत्सव की परिपाटी में रिवाज के अनुसार सबको अपने-अपने पति का नाम लेना पड़ेगा, परंतु प्रारंभ कौन करेगा? क्या यह भी हम लोगों को बताना पड़ेगा?'

कुछ स्त्रियाँ हँस पड़ीं। कुछ ताली पीटकर थिरक गईं। रानी की सहेलियाँ मुसकरा-मुसकराकर उनका मुँह देखने लगीं। रानी के गौर मुख पर उषा की अरुण-अरुण रेखाएँ-सी खिंच गईं। वह मुसकराईं जैसे एक क्षण के लिए ज्योत्स्ना छिटक गई हो। जरा सिर हिलाया, मानो मुक्त पवन ने फूलों से लदी फुलवारियों को लहरा दिया हो।

रानी ने बख्शिन से कहा, 'तुमको पहले बताना होगा।'

'सरकार हमारी महारानी हैं। पहले सरकार बताएँगी। पीछे हम लोग आज्ञा का पालन करेंगी।' बख्शिन ने घूँघट का एक भाग होंठों के पास दबाकर कहा।

हरदी-कूँकूँ के उत्सव पर सधवा स्त्रियाँ एक-दूसरे को रोरी (रोली) का टीका लगाती हैं और उनको किसी-न-किसी बहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है।

रानी ने कहा, 'बख्शिनजू, अपनी बात पर दृढ़ रहना। आज्ञापालन में आगा-पीछा नहीं देखा जाता।'

'परंतु धर्म की आज्ञा सबके ऊपर होती है, सरकार।' बख्शिन हठपूर्वक बोली।

रानी के गोरे मुखमंडल पर फिर एक क्षण के लिए रक्तिम आभा झाँईं-सी दे गई। बोलीं, 'बख्शिनजू, याद रखना, मैं भी बहुत हैरान करूँगी। मेरी बारी आएगी तब मैं तुम्हें देखूँगी।'

बख्शिन ने प्रश्न किया, 'अभी तो मेरी बारी है, सरकार बताइए, महादेवजी के कितने नाम हैं?'

रानी ने अपने विशाल नेत्र जरा झुकाए, गला साफ किया। बोलीं, 'शिव, शंकर, भोलानाथ, शंभू, गिरजापति।'

'सरकार को तो पूरा कोश याद है। अब यह बताइए कि महादेवजी के जटाजूट में से क्या निकला है?'

'सर्प, रुद्राक्ष।'

'जी नहीं, सरकार—किसकी तपस्या करने पर, किसको महादेव बाबा ने अपनी जटाओं में छिपाया और कौन वहाँ से निकलकर, हिमाचल से बहकर इस देश को पवित्र करने के लिए आया? ब्रह्मावर्त के नीचे किसका महान् सुहानापन है?'

'गंगा का।' यकायक लक्ष्मीबाई के मुँह से निकल पड़ा।

उपस्थित स्त्रियाँ हर्ष के मारे उन्मत्त हो उठीं। नाचने लगीं, गाने लगीं। झलकारी ने तो अपने बुंदेलखंडी नृत्य में अपने को बिसरा-सा दिया। रानी उस प्रमोद में गौरी की प्रतिमा की ओर विनीत कृतज्ञता की दृष्टि से देखने लगीं। प्रमोद की उस थिरकन का वातावरण जब कुछ स्थिर हुआ, रानी ने आनंद-विभोर बख्शिन का हाथ पकड़ा।

कहा, 'बख्शिनजू, सावधान हो जाओ। अब तुम्हारी बारी आई।'

बख्शिन के मुँह पर गुलाल-सा बिखर गया।

नतमस्तक होकर बोली, 'सरकार, अभी यहाँ बड़े-बड़े मंत्रियों और दीवानों की स्त्रियाँ एवं बहुएँ हैं। हम लोग तो सरकार की सेना के केवल बख्शी ही हैं।'

रानी ने मुसकराते-मुसकराते दाँत पीसकर, विशाल नेत्रों को तरेरकर, जिनमें होकर मुसकराहट विवश झरी पड़ रही थी, कहा, 'बख्शी सेना का आधार, तोपों का मालिक, प्रधान सेनापति के सिवाय और किसीसे नीचे नहीं। राजा के दाहिने हाथ की पहली अंगुली और तुम यहाँ उपस्थित स्त्रियों में सबसे अधिक शरारतिन! मेरे सवालों का जवाब दो।'

बख्शिन ने अपनी मुखमुद्रा पर गंभीरता, क्षोभ और अनमनेपन की छाप बिठानी चाही। परंतु लाज से बिखेरी हुई चेहरे की गुलाली में से हँसी बरबस फूट पड़ रही थी।

बख्शिन बोली, 'सरकार की कलाई इतनी प्रबल है कि मेरा हाथ टूटा जा रहा है।'

रानी ने कहा, 'तुम्हारी कलाई भी इतनी ही मजबूत बनवाऊँगी, बात न बनाओ, मेरे सवाल का जवाब दो। बोलो, मेरे पुरखों के नाम याद हैं?'

बख्शिन सँभल गई। उसने सोचा, मारके का प्रश्न अभी दूर है। बोली, 'हाँ, सरकार। जिनकी सेवा में युग बीत गए उनके नाम हम लोग कैसे भूल सकते हैं?'

'बताओ मेरे ससुर का नाम।' रानी ने मुसकराते हुए दृढ़तापूर्वक कहा।

चतुर बख्शिन गड़बड़ा गई। उसके मुँह से निकल गया—'भाऊ साहब।'[3]

बख्शिन के पति का नाम लाला भाऊ था।

रानी ने हँसकर बख्शिन का हाथ छोड़ दिया।

उपस्थित स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं। बख्शिन को अपने पति का नाम बताना तो

अवश्य था, परंतु वह रानी को थोड़ा परेशान करके ही बताना चाहती थी; लेकिन रानी ने अनायास ही बख्शिन को परास्त कर दिया।

इसके उपरांत रानी ने चुलबुली झलकारी को बुलाया। उसके पति का वहाँ किसीको नाम नहीं मालूम था। इसलिए बहानों की गुंजाइश न थी।

रानी ने सीधे ही पूछा, 'तुम्हारे पति का नाम?'

झलकारी के पति का नाम पूरन था। पति का नाम बताने के लिए व्यग्र थी, पंरतु उत्सव की रंगत बढ़ाने के लिए उसने जरा सोच-विचारकर एक ढंग निकाला।

बोली, 'सरकार, चंदा पूरनमासी को ही पूरी-पूरी दिखात है न?'

रानी ने हँसकर कहा, 'ओ हो, पहले ही अरसट्टे में फिसल गई! पूरन नाम है?'

झलकारी झेंप गई। चतुराई विफल हुई। हँस पड़ी।

इस प्रकार हँसते-खेलते और नाचते-गाते स्त्रियों का उत्सव अपने समय पर समाप्त हुआ।

अंत में रानी ने स्त्रियों से एक भीख-सी माँगी, 'तुममें से कोई बहिन के बराबर हो, कोई काकी हो, कोई माई हो, कोई फूफी। फूल सदा नहीं खिलते। उनमें सुगंध भी सदा नहीं रहती। उनकी स्मृति ही मन में बसती है। नृत्य-गान की भी स्मृति ही सुखदायक होती है। परंतु इन सब स्मृतियों का पोषक यह शरीर और उसके भीतर आत्मा है। उनको पुष्ट करो और प्रबल बनाओ। क्या मुझे ऐसा करने का वचन दोगी?'

उन स्त्रियों ने इस बात को समझा हो या न समझा हो, परंतु उन्होंने हाँ-हाँ की। उन लोगों को डर लगा कि वहीं और तत्काल, कहीं मलखंब और कुश्ती न शुरू कर देनी पड़े। इत्र-पान के उपरांत वे चली गईं।

लेकिन एक बात स्पष्ट थी—जब वे चली गईं तब वे किसी एक अद्रष्ट, अवर्ण्य तेज से ओत-प्रोत थीं।

उसके उपरांत फिर झाँसी नगर की स्त्रियाँ संध्या समय थालों में दीपक सजा-सजाकर और गले में बेला, मोतिया, जूही इत्यादि की फूल-मालाएँ डाल-डालकर मंदिरों में जाने लगीं। स्त्रियों को ऐसा भास होने लगा जैसे उनका कोई सतत संरक्षण कर रहा हो, जैसे कोई संरक्षक सदा साथ ही रहता हो, जैसे वे अत्याचार का मुकाबला करने की शक्ति का अपने रक्त में संचार पा रही हों।

❑

: ११ :

राजा गंगाधरराव के पुत्र हुआ, जो तीन महीने की आयु पाकर मर गया। राजा के मन और तन पर दुर्घटना का स्थायी कुप्रभाव पड़ा। वे बराबर अस्वस्थ रहने लगे। रानी भी अस्वस्थ रहीं, परंतु उनका स्वास्थ्य शीघ्र सँभल गया।

लगभग दो वर्ष राजा-रानी के काफी कष्ट में बीते।

राजा की खीझ बढ़ गई। उन्होंने सनकों में काम करना शुरू कर दिया।

एक दिन उनको मालूम हुआ कि खुदाबख्श नवाब अलीबहादुर के यहाँ कभी-कभी आता है। इस जरा से अपराध पर उन्होंने नवाब साहब का महल जब्त कर लिया। केवल बाहरवाली हवेली उनके रहने के लिए छोड़ी।

सन् १८५३ के शारदीय नवरात्र का महोत्सव हुआ। उस दिन उनका स्वास्थ्य अच्छा जान पड़ता था, केवल कुछ कमजोरी थी। राजवैद्य प्रतापशाह मिश्र का उपचार था।

राजा ने सोचा, किसी सुपात्र को गोद ले लूँ। रानी सहमत हो गईं।

एक सजातीय बालक को गोद ले लिया, जिसका नाम आनंदराव था। गोद लेने के उपरांत उसका नाम दामोदरराव रखा गया।

उत्सव हुआ। झाँसी की जनता के पंचों, सरदारों और सेठ-साहूकारों को, जो इस अवसर पर निमंत्रित किए गए थे, इत्र-पान इत्यादि की भेंट से सम्मानित करके विदा किया गया। केवल मेजर, पुलिस कप्तान मार्टिन, मोरोपंत और प्रधान मंत्री वहाँ रह गए। निकट ही परदे के पीछे रानी लक्ष्मीबाई बैठी हुई थीं। राजा ने एक खरीता गोद को स्वीकार कराने हेतु कंपनी सरकार को लिखवाया।

राजा ने खरीता अपने हाथ से एलिस के हाथ में दिया। राजा का गला रुद्ध हो गया और आँखों में आँसू भर आए। परदे के पीछे रानी की सिसकी सुनाई पड़ी, मानो उस खरीते पर इस सिसकी की मुहर लगी हो।

राजा बोले, 'देखो मेजर साहब, दामोदरराव कितना सुंदर है। यह बड़ा होनहार है। मेरी रानी-सी माता पाकर झाँसी को चमका देगा। मेरी झाँसी को ये दोनों बड़ा भारी नाम देंगे...'

परदे के पीछे सिसकी सुनाई दी। एलिस ने आँख के एक कोने से उस ओर देखकर मुँह फेर लिया।

राजा ने परदे की ओर मुँह फेरकर रुद्ध स्वर में मुश्किल से कहा, 'यह क्या है? रोती हो? मैं अच्छा हो रहा हूँ। पर मुझे अपनी बात तो कह लेने दो।'

रानी ने धीरे से खाँसकर अपना कंठ संयत किया।

राजा स्थिर होकर बोले, 'मेजर साहब, हमारी रानी स्त्री जरूर है, परंतु इसमें ऐसे गुण हैं कि संसार के बड़े-बड़े मर्द इसके पैरों की धूल अपने माथे पर चढ़ाएँगे।'

बहुत प्रयत्न करने पर भी राजा अपने आँसुओं को न रोक सके।

एलिस ने कहा, 'महाराज, थोड़ी बात करें, नहीं तो तबीयत देर में अच्छी हो पाएगी।'

रानी ने जरा जोर से खाँसा, मानो राजा का निवारण कर रही हों।

दुर्बल हाथों से राजा ने आँसू पोंछे। गले को नियंत्रित किया।

राजा बोले, 'रानी बहुत अच्छी व्यवस्था करेगी। आप लोग दामोदरराव की नाबालगी के कारण परेशान मत होना।'

राजा के हृदय में पीड़ा हुई।

किसी प्रकार उसको काबू में करके उन्होंने कहा, 'मुझे झाँसी के लोग बहुत प्यारे हैं। मैं चाहता हूँ, मेरी जनता सुखी रहे। मैंने जिसको जो कुछ दिया है, वह सब उनके पास बना रहना चाहिए।'

राजा को फिर खाँसी आई और साथ ही रक्त। दवा दी गई। राजा को कुछ चैन मिला। पर वे जान गए कि यह क्षणिक है।

राजा के होंठों पर एक क्षीण मुसकराहट आई।

'मैं चाहता हूँ कि मेरी नाटकशाला में चाहे खेल हों या न हों, परंतु पात्रों के लिए जो वेतन खजाने से दिया जाता है, वह उनको मिलता रहे।'

राजा फिर खाँसे। अबकी बार ज्यादा खून आया।

राजा की आकृति बिगड़ी। सब लोग चिंतित और भयभीत हुए। राजा बहुत कष्ट के साथ बोले, 'मेजर साहब, एक अंतिम प्रार्थना—बस एक—झाँसी अनाथ न होने पावे।'

कराहने लगे। आँखें फिरने लगीं।

कप्तान मार्टिन एक ओर चुप बैठा हुआ था। उसने एलिस को चल देने का संकेत किया। एलिस उठना ही चाहता था कि राजा बोले, 'चित्रकार सुखलाल, हृदयेश कवि...'

एलिस उठा, उसने प्रणाम करके राजा से कहा, 'सरकार, हम लोग जाते हैं। समाचार मिलते ही तुरंत हाजिर होंगे।'

राजा ने आँखें स्थिर कीं, परंतु बोल न सके, बेसुध हो गए। एलिस और मार्टिन चले गए।

लक्ष्मीबाई तुरंत परदे से बाहर निकल आईं। पति की उस दशा को देखकर बहुत दु:खी हुईं। मोरोपंत ने दामोदरराव को बुलवा लिया। नाना भोपटकर उसे लेकर आए। रानी कुछ शांत हुईं।

राजा गंगाधरराव को पल-पल पर बेहोशी आ रही थी।

ज्यों-त्यों करके वह दिन कटा।

दूसरे दिन उनकी अवस्था असाध्य हो गई। अंत में मुँह से केवल यह निकला—'गंगाजल।'

उनको तुरंत गंगाजल दिया गया।

एक क्षण के लिए उनको ऐसा जान पड़ा मानो रोगमुक्त हो गए हों। तत्क्षण सचेत होकर बोले, 'मैंने बहुत अपराध किए हैं, बहुतों को सताया है, सब क्षमा करें, ओमहरि!'

कुछ क्षण उपरांत राजा का देहांत हो गया।

महल में हाहाकार मच गया। जिस रानी को कभी किसीने विह्वल नहीं देखा था, वह करुणा के बाँध तोड़े जा रही थी। मोरोपंत और नाना भोपटकर ने क्रंदन करते हुए दामोदरराव को रानी की ओली में रख दिया।



: १२ :

जिस दिन गंगाधरराव का देहांत हुआ, लक्ष्मीबाई अठारह वर्ष की थीं। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर जो आघात हुआ वह ऐसा था, जैसे कमल को तुषार मार गया हो। परंतु रानी के मन में एक भावना थी, एक लगन थी, जो उनको जीवित रखे थी। वह छुटपन के खिलवाड़ में प्रकट हो जाती थी। इस अवस्था में वह उनके मन के किस कोने में पड़ी हुई थी, इसको बहुत कम लोग जानते थे। जो जानते थे, उनमें से एक तात्या टोपे था, दूसरा नाना धोंडूपंत।

राजा गंगाधरराव के फेरे के लिए बिठूर से नाना धोंडूपंत, अपने दोनों भाइयों सहित आया। तात्या भी साथ था। वे सब जवान हो गए थे। पेंशन के जब्त हो जाने के कारण संतप्त थे और रोष भरे। गंगाधरराव के देहांत के कारण उनको बड़ी ठेस लगी। जालौन का राज्य समाप्त हो चुका था। महाराष्ट्र की एक गद्दी झाँसी की ही बची थी। उनको भय था कि यह भी विलीन होने जा रही है।

रानी किलेवाले महल में ही रहती थीं। वहीं उनकी सहेलियाँ और सिपाही-प्यादे भी। नीचे का महल, हाथीखाना, सेना, घोड़े, हथियार इत्यादि सब हाथ में थे।

नगर का शासन सूत्र भी अधिकार में था। राज्य की माल दीवानी भी उनके मंत्रियों के हाथ में थी; परंतु कंपनी सरकार झाँसी की छावनी में अपनी सेना और तोपें बढ़ाने में व्यस्त थी। इससे मन में कुछ खटका उत्पन्न होता था।

शोक संवेदना के उपरांत नाना के दोनों भाई बिठूर चले गए। नाना और तात्या रह गए।

विकट ठंड थी। ठिठुरा देनेवाली, दीन-दरिद्रों के दाँत-से-दाँत बजानेवाली। उसपर संध्या से ही बादल घिर आए। आँधी चल उठी और पानी बरस पड़ा। नाना और तात्या रानी से बातचीत करने संध्या के पहले ही किले के महल में गए। भोजन के उपरांत बातचीत होनी थी और फिर डेरे को लौटना था। परंतु ऋतु की कठोरता के कारण उनके विश्राम का वहीं प्रबंध करवा दिया।

दीवाने खास में बैठक हुई। सुंदर, मुंदर और काशीबाई भी रानी के साथ थीं।

दुर्बल हो जाने के कारण रानी का मुख जरा लंबा जान पड़ता था। तो भी उस सतेज सौंदर्य के आतंक में वही आदर उत्पन्न करनेवाला ओज था। विशाल आँखों की ज्योति और भी ज्वलंत थी। रानी कोई आभूषण नहीं पहने थीं—केवल गले में मोतियों की एक माला और हाथ में हीरे की एक अँगूठी। श्वेत साड़ी पर एक मोटा श्वेत दुशाला ओढ़े थीं। सहेलियाँ भी जेवरों का त्याग करना चाहती थीं, परंतु रानी के आग्रह से उन्होंने ऐसा नहीं किया था।'

रानी—'बुंदेलखंड के रजवाड़े बुझे हुए दीपक हैं। उनमें तेल है, परंतु लौ नहीं।'

नाना—'क्या उनमें लौ पैदा नहीं की जा सकती?'

रानी—'कह नहीं सकती। तुमने ढूँढ़-खोज की। मैं तो बाहर आने-जाने से विवश रही हूँ, और हूँ।'

तात्या—'मैं यों ही घूमा-फिरा हूँ। विशेष तौर पर यहाँ के किसी राजा ने प्रसंग नहीं छेड़ा। परंतु वातावरण बिलकुल ठस जान पड़ा। राजाओं को अपने सरदारों और प्रजा से प्रणाम लेने में सुख की इति अनुभव होती है। हास-विलास और सुरापान में मस्त रहते हैं।'

रानी—'वीरसिंहदेव, छत्रसाल और दलपति के बुंदेलखंड का हाल कुछ और होना चाहिए था।'

नाना—'लखनऊ और दिल्ली का हाल कुछ अच्छा है।'

तात्या—'बहुत दिन हुए, जब मैं रानी साहब को लखनऊ, दिल्ली की परिस्थिति सुना गया था।'

रानी—'तुम लोग मुझसे रानी साहब मत कहा करो। अच्छा नहीं लगता।'

तात्या—'बाईसाहब कहूँगा।'

नाना—'दिल्ली का हाल मैं सुनाता हूँ। बादशाह वृद्ध है। अपनी स्थिति में बहुत दु:खी है। मन के महाकष्ट को कविता में होकर घटाता रहता है।'

रानी—'ग्वालियर?'

नाना—'राजा का अभी लड़कपन है। अंग्रेज प्रबंध कर रहे हैं।'

रानी—'इंदौर?'

तात्या—'इंदौर मैं गया था। वहाँ का तो कचूमर ही निकल गया है।'

रानी—'हैदराबाद?'

तात्या—'वहाँ नहीं गया, परंतु इतना निर्विवाद समझिए कि हैदराबाद अंग्रेजों का परम भक्त है। जनता अपने साथ है।'

रानी—'पंजाब की सिख रियासतें?'

नाना—'वहाँ मैं कहीं-कहीं गया। सिखों में अंग्रेजों को पछाड़ने की शक्ति होते हुए भी फूट इतनी विकट है और राजा इतने स्वार्थांध हैं कि अंग्रेज उस ओर से बिलकुल निश्चिंत रह सकते हैं।'

रानी—'झाँसी में तो अब कुछ है ही नहीं। जो कुछ है भी, संभव है कि वह भी हाथ में न रहे।'

नाना—'झाँसी में ही तो हम लोगों का सबकुछ है। मनू बाईसाहब, झाँसी ही तो हम लोगों की एक आशा है।'

लक्ष्मीबाई के फीके होंठों पर वही विलक्षण मुसकराहट क्षीण रूप में आई।

बोलीं, 'क्या आशा है?'

तात्या ने कहा, 'दामोदरराव की गोद स्वीकार की जाएगी, ऐसा विश्वास है। एलिस ने गोलमोल अवश्य लिखा है, परंतु कलकत्ता में अपने कुछ मित्र हैं। वे लोग कुछ सहायता करेंगे।'

रानी ने कहा, 'एलिस, मालकम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। ये लोग अपने लाट के नेत्रकोर के संकेत पर चलते हैं।'

तात्या ने सहेलियों की ओर देखा।

रानी समझ गईं। बोलीं, 'ये तीनों मेरी अत्यंत विश्वासपात्र हैं। बिना किसी हिचक के बात किए जाओ।'

नाना ने कहा, 'बाईसाहब, यह लाट और इसके भाई-बंद 'यावच्चंद्र दिवाकरौ' वाली संधि को समूचा ही पचा गए हैं। झाँसीवाली संधि में न तो दिवाकर की सौगंध है और न चंद्रमा की। इनकी लिखतम का, इनकी बात का कोई भरोसा नहीं। हमारी पेंशन के छीनने के समय कहा था—तीस-बत्तीस साल में आठ लाख रुपया साल के हिसाब से तीन करोड़ रुपया बैठता है। वह सब कहाँ डाला? इनका विश्वास नहीं करना चाहिए।'

रानी ने वैसे ही मुसकराकर पूछा, 'क्या ये लोग सीधे-सीधे गणित को भी धोखा देते हैं?'

नाना जरा हँसा।

तात्या ने उत्तर दिया, 'बाईसाहब, ये लोग अपने स्वार्थ पर अचल रूप से डटे रहते हैं। जब तक स्वार्थ को ठोकर लगने का अंदेशा नहीं रहता तब तक हरिश्चंद्र और युधिष्ठिर का-सा बरताव करते हैं, परंतु जहाँ देखते हैं कि स्वार्थ को धक्का लग जाएगा, तुरंत पैंतरा बदल देते हैं, और इतने धूर्त हैं कि इनमें से कुछ न्याय करने-करवाने का ढोंग बनाते हैं और दूसरे उसी ढोंग की ओट में स्वार्थ की सिद्धि करते हैं। जैसे, हेस्टिंग्स ने अवध की बेगमों को लूटा। कुछ अंग्रेजों ने उसपर मुकदमा चलाया। बाकी ने इनाम देकर उसको छोड़ दिया। इधर बेचारा नंदकुमार बंगाली

फाँसी पर चढ़ा दिया गया।'

रानी ने प्रश्न किया, 'लखनऊ का अब क्या हाल है?'

नाना ने उत्तर दिया, 'पहले का हाल तात्या बता गया था। अब तो वहाँ शून्य है। जनता निस्संदेह जीवटवाली है।'

रानी ने जरा सोचकर कहा, 'मैं इन सब बातों को सुनकर इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि जनता के चित्त का पता अभी पूरा नहीं लगाया गया है। जनता असली शक्ति है। मुझको विश्वास है कि वह अक्षय है। छत्रपति ने जनता के भरोसे ही इतने बड़े दिल्ली सम्राट् को ललकारा था, राजाओं के भरोसे नहीं। मावले, कुणभी किसान थे और अब भी हैं। उनके हलों की मूठ में स्वराज्य की लालसा बँधी रहती है। यहाँ की जनता को भी मैं ऐसा ही समझती हूँ। उसको छत्रपति ने नेतृत्व दिया था, यहाँ की जनता को तुम दो।'

वे दोनों सिर नीचा करके सोचने लगे।

रानी ने अपनी सहेलियों की ओर देखकर कहा, 'तुम लोग क्या कहती हो?'

सुंदर ने तुरंत उत्तर दिया, 'मैं सरकार, कुणभी हूँ। और क्या कहूँ? आपकी आज्ञा का पालन करते हुए मरने के समय आगा-पीछा नहीं सोचूँगी।'

नाना ने कहा, 'तुम ठीक कहती हो, बाईसाहब, अभी हम लोग जनता के पास नहीं पहुँचे हैं। आशा है, जनता शीघ्र जाग्रत हो जाएगी। परंतु वह बिना नेता के कुछ नहीं कर सकती।'

'नेता को नहीं ढूँढ़ना पड़ता', रानी बोलीं, 'समर्थ रामदास का आशीर्वाद नेता को तो बिना विलंब उत्पन्न कर देता है।'

नाना—'मैं समझ गया। निराशा का कोई कारण नहीं।'

रानी—'हाँ, जो साधन जहाँ मिले, उसका उपयोग करना चाहिए। जनता मुख्य साधन है। राजा और नवाब की पीढ़ी, दो पीढ़ी ही योग्य होती हैं, परंतु जनता की पीढ़ियों की योग्यता कभी नहीं छीजती।'

नाना—'अब एक प्रश्न और है। यदि तुम्हारा अधिकार लाट के यहाँ से मान्य रहा तो हमको स्वराज्य-प्राप्ति के उपायों के जुटाने में सुविधा रहेगी; परंतु यदि लाट ने न माना, जैसीकि मुझको आशंका है, तब किस प्रकार कार्य साधन होगा?'

रानी—'मैं ऐसा क्षण भर भी नहीं सोचती कि लाट नहीं मानेगा। नहीं मानेगा तो मैं मनवाऊँगी। झाँसी राज्य की जनता सोलह आना मेरे साथ है और यहाँ की जनसंख्या महाराष्ट्र के मालवा से अधिक ही है, कम नहीं। बुंदेलखंड में ब्राह्मण से लेकर भंगी तक हथियार चलाना जानते हैं और हथियार चलाने की हौंस रखते हैं।'



: १३ :

सवेरे की उस कँपकँपाती ठंड में जब सूर्य भी बदली में मुँह छिपाए था, नवाब अलीबहादुर अपने नौकर पीरअली को साथ लिये हाथी पर सवार, एलिस की कोठी पर पहुँचे। जिस भवन में आजकल डिस्ट्रिक्ट जज की कचहरी है, उसीमें एलिस था।

अभिवादन और कुशल-क्षेम प्रश्नोत्तरी के उपरांत उन दोनों में बीतचीत होने लगी।

अलीबहादुर ने कहा, 'रानी साहब की अरजी का जवाब नहीं आया। शायद खारिज हो जाएगी।'

एलिस विचार की मुद्रा बनाकर बोला, 'कह नहीं सकता। आपका ऐसा खयाल क्यों है ?'

अलीबहादुर ने कहा, 'रियासतों के बुरे इंतजाम को देखकर और जनता की भलाई की नजर से, सरकार ने कई रजवाड़ों में अपना अदल, अमन और इनसाफ चालू किया है। इसलिए शायद झाँसी में भी सरकारी बंदोबस्त किया जाए।'

भोलेपन के साथ एलिस बोला, 'मुझको मालूम नहीं, नवाब साहब, पर अगर ऐसा हो तो यहाँ की जनता सरकारी हुकूमत और कानून पसंद करेगी ?'

अलीबहादुर ने मीठे स्वर में जवाब दिया, 'दोनों हाथों से, जनाब। स्वर्गीय राजा साहब के जमाने में जो जुल्म हुए हैं, उनको आसानी से नहीं भुलाया जा सकता।'

एलिस सचाई का ढोंग करते हुए बोला, 'मैंने भी कुछ सुने हैं; जैसे साधारण से अपराध पर लोगों को बिच्छुओं से कटवाना। लेकिन, मरने के करीब के जमाने की कोई शिकायत मेरे कान तक नहीं आई।'

एलिस नवाब साहब जैसे हिंदुस्तानियों की आँतों तले से बात को निकालने का केंड़ा जानता था। उनकी ओर देखने लगा।

बहुत मुसकराकर, बड़े मिठास के साथ अलीबहादुर ने कहा, 'एक मेरी जाती विनती है।'

एलिस ने प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, 'जरूर कहिए, नवाब साहब।'

अलीबहादुर वास्तव में जिस प्रयोजन से एलिस से भेंट करने आए थे, उन्होंने वह प्रकट किया।

'जनाब को मालूम है, मिसलों में लिखा पड़ा है, मेरे स्वर्गीय पिता राजा रघुनाथराव साहब ने मुझको पिच्चासी गाँव जागीर में लगाए थे। सरकारी बंदोबस्त होने पर वह जागीर मेरे पास से निकाल ली गई और पाँच सौ रुपया माहवारी वसीला लगा दिया गया। बड़ा कुटुंब है। सफेदपोशी साथ लगी है। गुजर नहीं होती। राजा साहब गंगाधरराव से प्रार्थना की थी। उन्होंने कहा था, एजेंट साहब से सलाह करके जवाब देंगे। फिर उनका लड़का मर गया और बीमार पड़ गए। बात अधूरी रह गई। अब शासन बदला है। शायद कंपनी सरकार का बंदोबस्त हो जाए। इसलिए मेरी उचित विनती पर ध्यान दिया जाना चाहिए।'

एलिस बोला, 'नवाब साहब, आप मेरे मित्र हैं। मुझसे जो कुछ सहायता बनेगी, करूँगा। आप अरजी दीजिए। उसमें सब हाल ब्योरेवार लिखिए। अरजी चाहे एजेंट साहब बहादुर के पास सीधी भेज दीजिए, चाहे मेरी मार्फत।' 'बहादुर' शब्द पर उसने जरा ज्यादा जोर लगाया।

नवाब साहब खुश होकर बोले, 'मैं बहुत धन्यवाद देता हूँ। परमात्मा आप को लाट साहब करे।' फिर मिठास में घुलकर कहा, 'जनाब को मालूम है कि महाराज रघुनाथराववाला महल मेरे कब्जे में रहा है। मुझको महाराज दे गए थे। उसको राजा गंगाधरराव ने यों ही छीन लिया। किसी काम में नहीं आ रहा है। ताले पड़े हैं।'

एलिस ने कहा, मुझको मालूम है। वह जगह आपकी है, आपको मिलेगी। जरा सा इंतजार करिए।

नवाब साहब ने सलाम करके धन्यवाद दिया। चलने की आज्ञा माँगने लगे।

एलिस ने हँसकर कहा, 'थोड़ा सा और बैठिए, नवाब साहब।'

नवाब साहब को घर पर काम ही क्या था? सट से जम गए।

एलिस ने फुसलाहट के ढंग से पूछा, 'आपके पास तो बस्ती के बहुत लोग आते-जाते हैं। क्या हाल है?'

'बहुत अच्छा हाल तो नहीं है। लोग परेशान हैं। सच पूछिए तो वे लोग चाहते हैं कि कंपनी सरकार का बंदोबस्त हो जाए।'

'लोगों से जरा और ज्यादा मिलते रहिए और जनता के सुख-दुःख की बातें मुझको बताते रहिए।'

'ऐसा ही करूँगा। लगभग दूसरे-तीसरे दिन हाजिरी दिया करूँगा?'

'रानी साहब का क्या खयाल है? उनका स्वभाव किस तरह का है?'

'रानी साहब रंज में रहती हैं। चाल-चलन अव्वल दरजे का खरा है। अपने धर्म की पाबंद हैं। घुड़सवारी, हथियार चलाना, लिखने-पढ़ने की योग्यता...'

'यह सब मुझको मालूम है, नवाब साहब, मैं उनकी बहुत इज्जत करता हूँ। मैं केवल यह जानना चाहूँगा कि कोई इधर-उधर के लोग उनको बरगलाते तो नहीं हैं।'

'अभी तो उनके नाते-गोते के लोग फेरे के लिए आ-जा रहे हैं। हाल में बिठूर के कुछ लोग आए थे। वे चले गए।'

'कृपा होगी, यदि आप इन आने-जानेवालों का भी पता देते रहें।'

'बहुत अच्छा, जनाब। पीरअली मेरा बहुत भरोसे का नौकर है। उसको इस काम पर तैनात कर दूँगा। मेरे साथ ही हाथी पर आया है। आप फरमाएँ तो सामने पेश कर दूँ।'

'नहीं नवाब साहब, जरूरत नहीं। आपको यकीन है तो मुझको भी है।'

इसके बाद अलीबहादुर चले गए। घर जाते समय मार्ग में ही पीरअली को उन्होंने उसका कर्तव्य सुझा दिया।

खुदाबख्श हवेली पर मिला। उससे अरजी देने को कहा। बोले, 'साहब जरा मुश्किल से माने। वह तुम्हारी अरजी पर विचार करेंगे।'

खुदाबख्श ने कहा, 'मैंने रानी साहब से अर्ज करवाई थी। उन्होंने झाँसी में रहने की आज्ञा दे दी है। जागीर के बारे में उन्होंने हुक्म दिया है कि लाट साहब के यहाँ से अधिकार मिलने पर खुलासा कर दिया जाएगा। इसलिए सोचता हूँ, अभी बड़े साहब या छोटे साहब, किसीको भी अरजी न दूँ।'

'अच्छी बात है।' नवाब साहब ने कहा। मन में कुढ़ गए।

एक क्षण उपरांत पूछा, 'किसकी मार्फत अर्ज की थी?'

'मोतीबाई अपनी तनख्वाह की फरियाद करने गई थी। अपनी बात के सिलसिले में उन्होंने मेरी विनती भी कर दी।'

'कब?'

'कल। और आज सवेरे रानी साहब का जवाब आ गया। बहुत नेक हैं।'

'मोतीबाई आई हैं?'

'नहीं, उन्होंने खबर भेजी है।'

'मुझको खुशी हुई। मेरे लायक तुम्हारा जो काम होगा, करूँगा।'

‘आपकी कृपा है।’

अलीबहादुर ने सोचा—‘एलिस साहब के कान में इस बात के डालने की जरूरत नहीं है।’

खुदाबख्श शहर में रहने लगा।



: १४ :

पति के देहांत के बाद से रानी की दिनचर्या इस प्रकार हो गई—

वह नित्य प्रात:काल चार बजे स्नान करके आठ बजे तक महादेव का पूजन करतीं और उसी समय गवैए भजन-गायन सुनाते। फिर ग्यारह बजे तक महल के समीपवर्ती खुले आँगन में घोड़े की सवारी, तीरंदाजी, नेजा चलाना, दौड़ते हुए घोड़े पर चढ़े-चढ़े, दाँतों से लगाम पकड़कर दोनों हाथों से तलवार भाँजना, बंदूक से निशाना लगाना, मलखंब, कुश्ती इत्यादि करती थीं और अपनी सहेलियों तथा नगर से आनेवाली कुछ स्त्रियों को ये सब काम सिखाती थीं। इनमें भाऊ बख्शी की पत्नी प्रमुख थी और बहुधा आनेवालों में, झलकारी कोरिन।

ग्यारह बजे के उपरांत रानी फिर स्नान करतीं और भूखों को खिलाकर तथा कुछ दान-धर्म करके तब भोजन करतीं। भोजन के उपरांत थोड़ा सा विश्राम। फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ रामनाम लिखकर आटे की गोलियाँ मछलियों को खिलातीं। उस समय वह किसीसे बातचीत नहीं करती थीं और न कोई उस समय उनके पास बैठ सकता या आ सकता था। वह किसी गूढ़ चिंतन, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं। तीन बजे के उपरांत संध्या तक फिर वे ही व्यायाम और कसरतें—शरीर को फौलाद बनाने की क्रियाएँ।

संध्या के उपरांत आठ बजे तक कथावार्त्ता, पुराण, भगवद्गीता का अठारहवाँ अध्याय और भजन सुनतीं। इसके बाद एक घंटा आगंतुकों को भेंट के लिए दिया जाता था। तीसरी बार स्नान करतीं। इसके बाद थोड़े समय तक इष्टदेव का एकांत ध्यान। फिर ब्यालू भोजन। पश्चात् सुंदर, मुंदर और काशीबाई के साथ थोड़ा सा वार्त्तालाप और फिर ठीक दस बजे शयन। वह समय की बहुत पाबंद थीं। शिथिलता तो छूकर नहीं निकली थी।

राज्य मिलेगा या न मिलेगा—इन दोनों के व्यवधान मैं वे महीने चले जा रहे थे। मोरोपंत ताँबे और अन्य कर्मचारी यथावत् कार्य कर रहे थे। एलिस-वर्ग अपना पाया मजबूत बनाने की तैयारी करता चला जा रहा था, बहुत सतर्कता, बड़ी सावधानी के साथ।

सन् १८५४ के आरंभ में कंपनी सरकार के बड़े लाट ने गोद को अस्वीकार किया और झाँसी को कंपनी के राज्य में मिलाने की घोषणा कर दी। परंतु मालकम ने इस घोषणा को बहुत छिपा-लुकाकर एलिस के पास भेजा और उसको हिदायत की कि बहुत सावधानी के साथ काम किया जाए, क्योंकि उसे मालूम था कि रानी जनप्रिय हैं, कहीं झाँसी की जनता दंगा-फसाद न कर बैठे। इसलिए एलिस ने सेना द्वारा झाँसी का कठोर प्रबंध किया।

एलिस ने होशियारी के साथ उस घोषणा को एक जेब में रखा और दूसरी में पिस्तौल। सशस्त्र अंगरक्षकों को साथ लेकर रानी के पास किलेवाले महल में पहुँचा। रानी को सूचना दे दी गई थी कि छोटे साहब के पास बड़े लाट की आज्ञा आ गई है, उसीको सुनाने आ रहे हैं। मोरोपंत इत्यादि बहुत दिन से आशा लगाए बैठे थे। दीवाने खास में वे नियुक्त समय पर आ गए। रानी परदे के पीछे बैठीं। दीवाने खास में एक ऊँची कुरसी पर दामोदरराव।

एलिस दृढ़, पर अदृढ़ हृदय के साथ दीवाने खास में प्रविष्ट हुआ। मोरोपंत इत्यादि ने बहुत विनीत भाव के साथ अभिवादन किया। दीवाने खास में इत्र-पान इत्यादि सजे-सजाए रखे थे। बुर्जों पर तोपों में सलामी दागने के लिए बारूद डाल दी गई थी। एलिस होंठ-से-होंठ सटाए आया और अपने माथे की शिकनों को समेटकर अभिवादन का उत्तर देता हुआ बैठ गया।

मोरोपंत ने विनीत भाव के साथ कहा, 'साहब, आपको यहाँ तक आने में बहुत कष्ट हुआ होगा।'

मुश्किल से एलिस का कंठ मुखरित हुआ, 'मेरा कर्तव्य है। दु:खदायक कर्तव्य है।'

सब लोग सन्नाटे में आ गए।

एलिस ने कहा, 'महारानी साहब आ गई हैं?'

दीवान ने उत्तर दिया, 'जी साहब, परदे के पीछे विराजमान हैं।'

एलिस ने जेब से मालकमवाली घोषणा निकाली। दरबारियों के कलेजे धक्-धक् करने लगे।

कलेजा थामकर उन लोगों ने घोषणा को सुन लिया। गुलाम गौस खाँ तोपची अनुकूल घोषणा की आशा से दीवाने खास के एक दर से पीछे की तरफ कान लगाए खड़ा था। प्रतिकूल घोषणा को सुनकर मुँह लटकाए चुपचाप चला गया।

जब घोषण पढ़ी जा चुकी—मोरोपंत के मुँह से निकला, 'ओफ!'

दीवान के मुँह से, 'हाय!'

और दरबारियों के मुँह से, 'अनहोनी हुई।'

दामोदरराव समझने की कोशिश कर रहा था, उसको आभास मिल गया कि कुछ बुरा हुआ है।

यकायक ऊँचे, परंतु मधुर स्वर में रानी ने परदे के पीछे से कहा, 'मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी।'

इन शब्दों से दीवाने खास गूँज गया। वायुमंडल ने उनको अपने भीतर निहित कर लिया।

भारत के इतिहास में वे शब्द पिरो दिए गए। झाँसी की कलगी में वे शब्द मणि-मुक्ता बनकर चिपक गए।

अब एलिस का धड़कता हुआ हृदय कुछ स्थिर हुआ।

बोला, 'मुझको गवर्नर जनरल साहब की जो आज्ञा मालकम साहब के द्वारा मिली, उसको मैंने पेश कर दिया। जो कुछ मेरे सामर्थ्य में था, मैंने किया। हम सब गवर्नर जनरल साहब की आज्ञा से बँधे हुए हैं; परंतु मैं समझता हूँ कि असंतोष का कोई कारण नहीं है। पाँच हजार रुपया मासिक वृत्ति महारानी साहब और उनके कुटुंब के लिए काफी है। यह मानना पड़ेगा कि गवर्नर जनरल साहब ने बहुत उदारता का बरताव किया है।'

एलिस का वाक्य समाप्त नहीं हुआ था कि परदे के पीछे से रानी ने उसी ऊँचे और मधुर स्वर में कहा, 'मुझको यह वृत्ति नहीं चाहिए, मैं न लूँगी।'

एलिस ने अधिक ठहरना उचित नहीं समझा। दीवान से कहता गया, 'आप तुरंत मेरे पास आइए।'

दीवान ने पान खाने का आग्रह किया। वह पान खाकर चला गया।

मुंदर रानी के पास परदे में बैठी थी। जब घोषणा सुनाई गई, वह मूर्छित हो गई थी। एलिस के चले जाने पर वह होश में आई।

रानी ने कहा, 'क्यों री, मूर्छित होना किससे सीखा? क्या इस छोटे से राज्य के लिए ही हम लोग जीवित हैं।'

मुंदर रोने लगी। रानी ने पुचकारा। मोरोपंत इत्यादि ने समझाया।

दीवान ने रानी से पूछा, 'मैं एलिस साहब के पास जाऊँ? वह बुला गए हैं।'

रानी अनुमति देकर रनवास में चली गईं।

कुछ क्षणों में ही समाचार सारे नगर में फैल गया। उस समय झाँसी निवासियों के क्षोभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरंत युद्ध छेड़ देना चाहती थी, परंतु रानी ने निवारण किया। कहलवाया, 'अभी समय नहीं आया है।'

झलकारी ने जब सुना तो अपने पति पूरन से कहा, 'छाती बर जाय इन अंगरेजन की, गुटक लई झाँसी।'



: १५ :

एलिस ने झाँसी का 'अंग्रेजी बंदोबस्त' आरंभ कर दिया।

दीवान से दफ्तरों की चाभियाँ लीं। थाने पर अधिकार किया और शहर में अंग्रेजी राज्य और अपने अधिकार की डोंडी पिटवा दी। तहसीलों में तुरंत समाचार भेजा और वहाँ भी कड़े प्रबंध की व्यवस्था कर दी।

दीवान रानी को सब बातों की सूचना देकर उदास अपने घर चला गया। रानी के नित्य नियम में कोई अंतर नहीं आया। अपने कार्यक्रम के अनुसार जब वह विश्राम के लिए बैठीं तब मुंदर, सुंदर और काशीबाई उनके पास आईं। वे अपने आभूषण उतार आई थीं।

रानी ने कहा, 'आभूषण क्यों उतार आई हो? क्या इसी समय रणभूमि में चलना है?'

मुंदर सिसकने लगी। सुंदर और काशी के नेत्र तरल हो गए।

रानी बोलीं, 'ये चिह्न तो असमर्थता और अशक्ति के हैं। अपने सब आभूषण पहनो और इस प्रकार रहो मानो कुछ हुआ ही नहीं है।'

मुंदर ने रानी के पैर पकड़ लिये। उसकी हिलकी नहीं समाती थी।

रानी का कंठ भी थोड़ा रुद्ध हुआ। उन्होंने भौंहें सिकोड़ीं। एक ओर देखने लगीं।

काशीबाई रुदन करती हुई बोली, 'बाईसाहब, बाईसाहब!'

सुंदर ने करुण स्वर में कहा, 'सरकार, अब क्या होगा?'

रानी ने अपने को सहज ही संयत कर लिया। मुंदर के सिर पर हाथ फेरा। उसकी आँखें आँसुओं से भरी हुई थीं। सुंदर और काशी की भी। चंचल आँसुओं में होकर उन तीनों ने रानी के तेजस्वी रूप को देखा—कई लक्ष्मीबाइयाँ, कई सतेज नेत्र दिखाई पड़े। उन्होंने अपनी आँखें पोंछी।

रानी ने कहा, 'ये आँसू बल का क्षय करेंगे। अभी तो अपने कार्य का प्रारंभ भी नहीं हुआ है। सोचो, जब छत्रपति के उपरांत शंभूजी मारे गए, साहू समाप्त, राजाराम गत, तब ताराबाई की गाँठ में क्या रह गया था? इतने बड़े मुगल सम्राट् को ताराबाई कैसे परास्त कर सकीं? उन्होंने स्वराज्य की बागडोर को कैसे उठाया? रो-रोकर? कपड़े और गहने फेंक-फेंककर? भूखों मर-मरकर? और सोचो, जीजाबाई को पति का सुख नहीं मिला। उन्होंने छत्रपति को पाला। काहे के लिए? किस आशा से? गद्दी पर बिठाने के लिए? उन्होंने इतना तप, इतना त्याग अपने पुत्र को केवल हाथी की सवारी और नरम-नरम गद्दी पर विराजमान कराने के लिए किया था?'

वे सहेलियाँ सचेत हुईं।

रानी कहती गईं, 'हमको जो कुछ करना है उसकी दिशा निश्चित है। मार्ग में विघ्न-बाधाएँ तो आती ही हैं। खरीते का स्वीकृत न होना केवल एक बाधा ही है। स्वीकृत हो जाता तो क्या हम लोग केवल सो जाने के लिए ही जीवित रहतीं? भगवान् कृष्ण की आज्ञा को याद रखो कि हमको केवल कर्म करने का अधिकार है। कर्म के फल का नहीं। देखो, छत्रपति के उपरांत जिन लोगों ने स्वराज्य के आदर्श को आगे बढ़ाया और उसकी जड़ें, प्रबल बनाईं, वे बाधाओं का डटकर प्रतिरोध करते रहते थे। जिन लोगों की लालसा अपने लिए फलों की ओर गई, वे गिर गए और स्वराज्य की धारा धीमी पड़ गई। परंतु वह सूखी कभी नहीं। दादा बाजीराव पेशवा हतप्रभ होकर बिठूर चले आए। परंतु हम लोगों को वे स्वराज्य की शिक्षा देने से कभी नहीं चूके। यदि हिंदुस्तान में कोई भी उस पवित्र काम को अपने हाथ में न ले तो भी, मैंने अपने कृष्ण के सामने, अपनी आत्मा के भीतर उसका बीड़ा उठाया है। करूँगी और

अवश्य करूँगी। चाहे मेरे पास खड़े होने के लिए हाथ भर भूमि ही क्यों न रह जाए। मान लो कि मैं सफल न हो पाई तो भी जिस स्वराज्य-धारा को आगे बढ़ा जाऊँगी, वह अक्षय रहेगी। उसी महावाक्य को सदा याद रखो—हमको केवल कर्म करने का अधिकार है, फल का कभी नहीं। हमको एक बड़ा संतोष है। जनता हमारे साथ है। जनता सबकुछ है। जनता अमर है। इसको स्वराज्य के सूत्र में बाँधना चाहिए। राजाओं को अंग्रेज भले ही मिटा दें। परंतु जनता को नहीं मिटा सकते। एक दिन आएगा, जब इसी जनता के आगे होकर मैं स्वराज्य की पताका फहराऊँगी।'

सहेलियों की आँखों में भी चमत्कार उत्पन्न हो गया।

रानी बोलीं, 'मुझसे आज एक भूल हो गई। मुझको एलिस के सामने कुछ नहीं कहना चाहिए था। मेरे उस वाक्य से वह अपने संगी अंग्रेजों सहित चौकन्ना हो जाएगा। वृत्ति भी अस्वीकृत नहीं करनी चाहिए थी।'

काशी ने स्थिर स्वर में प्रश्न किया, 'अब क्या करना है ?'

रानी ने कहा, 'अंग्रेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति से ही हो सकता है। मैं वृत्ति को स्वीकृत करूँगी और आगे सावधानी के साथ काम करूँगी।'

रानी को पाँच हजार रुपए महीने की मासिक वृत्ति और रहने के लिए झाँसी नगर का महल मिला। किला खाली करा लिया गया।

रानी की सेना को छह महीने का वेतन देकर अपदस्थ कर दिया गया। हिंदुस्तान उस ओर चलाया जाने लगा, जिसको एक कवि के इस पद्य ने प्रकट किया है—

महफिल उनकी साकी उनका,
आँखें अपनी बाकी उनका।



: १६ :

कप्तान गार्डन डिप्टी-कमिश्नर 'बहादुर' का 'बंदोबस्त' बहादुरी के साथ चला। जागीरें जब्त हुईं, जमींदारियाँ कायम हुईं। मंदिरों की सेवा-पूजा के लिए जो जायदादें लगी थीं, वे खत्म हुईं। पुजारियों को, पूजकों को यह बहुत अखरा। अरजी-पुर्जियाँ दीं। बंगलों पर माथे रगड़े—एक न चली। गार्डन की दृढ़ता ने चोर-डाकुओं से लेकर पुजारियों तक के होश ठिकाने लगा दिए। हर बात में अरजी और अरजीनवीस का दौर-दौरा बढ़ गया। कानून की प्रतिष्ठा के लिए वकीलों को आदर मिला। पहले कोई परीक्षा इस पेशे के लिए जारी नहीं की गई थी। वकालत की सनद डिप्टी-कमिश्नर 'अता' किया करता था—ठीक उसी तरह जैसे जमींदारी या नौकरियाँ 'अता' होती थीं। होशियार लोगों ने झटपट अंग्रेजी कानून, अदब, ढंग सीखा और आगे चलकर बिना उनके अदालत का पत्ता भी न हिला। इस वर्ग ने उस युग में सब प्रकार की निष्ठाओं के ऊपर कानून की निष्ठा को बिठाने में जाने-अनजाने सहायता की। केवल यह एक ऐसा अंगे्रजी संस्कार है, जिसके प्रति हिंदुस्तानियों की आत्मगत भावनाओं में श्रद्धा होनी चाहिए थी, परंतु जिस प्रेरणा और जिस वातावरण में होकर और जिन उपकरणों के साथ न्याय का यह साधन आया था, वे सब हिंदुस्तानियों को कतई अच्छे नहीं लगे, और इसलिए भी कानून अखरा।

परोपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अंग्रेजों ने कानून की प्राण-प्रतिष्ठा हिंदुस्तान के न्याय-मंदिर में की हो, सो बात नहीं थी।

देश में पूर्ण शांति हो, अंग्रेजों का अधिकार सदा-सर्वदा इस देश में बना रहे और अंग्रेजी व्यापार, व्यवसाय निर्बाध चलते रहें, बस इसी वृत्ति से प्रेरित होकर कानून बनाए और चलाए गए। गवर्नर जनरल से लेकर पटवारी और चौकीदार तक कायदा-कानून में बँधकर अपना-अपना काम करते चले जाएँ, अनुशासन में शिथिलता न आने पाए। तभी तो अंगे्रजी राज्य निर्विघ्न चल सकता था। उन लोगों ने हिंदू नरेशों और मुसलमान बादशाहों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े-गुने थे, इसलिए वे अपने शासन को उन सब गड्ढों से बचाना चाहते थे, जिनमें नरेशों और बादशाहों के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौका पाते ही उसको ढकेल दिया करते थे।

समय-समय पर गार्डन शहर के बड़े आदमियों को मुलाकात के आकर्षण देता रहा। चिरौरी करना तो वे जानते ही थे, इसको भी करते थे, परंतु जब वे इसके सामने झुकते थे, उनकी रीढ़ में दर्द हो उठता था और माथे पर बल पड़ जाते थे। घर आकर लाभ-हानि को आँकने के साथ वे साहब की हेकड़ी पर जलते थे और अपनी चिरौरी पर हँसते थे।

रानी को भी समाचार दे आते थे। वे चुपचाप सुन लेती थीं और उनके बाल-बच्चों के समाचार विस्तृत ब्योरे के साथ पूछ लेती थीं और कोई बात न कहने का उन्होंने अपने मन पर बंधेज कर रखा था।

शहरवाले महल के ठीक सामने राजकीय पुस्तकालय था। वह उन्हींके हाथ में था। पुस्तकालय के पीछे एक ढाल था और ढाल के नीचे उनका सुंदर बाग।[4] इस बाग में वह घुड़सवारी इत्यादि व्यायाम किया करती थीं। नगर की जो स्त्रियाँ उनके पास आती थीं, उनको वह बड़ी निष्ठा के साथ इसी बाग में कसरतें सिखाती थीं। अब तो सुंदर-मुंदर और काशीबाई इतना सीख गई थीं कि दूसरों को सिखाने में रानी को इनसे बड़ी सहायता मिलने लगी। फिर भी रानी सोचती थीं कि अश्वारोहण और शस्त्र-चालन में मैं सर्वश्रेष्ठ नहीं हुई हूँ।

पुरानी लड़ाइयों के नक्शे उनके महल में थे। वे उनका बारीकी से अध्ययन करती थीं। बनावटी लड़ाइयों के नक्शे

कागज पर बनाती और बिगाड़तीं। अपनी सहेलियों के साथ भिन्न-भिन्न प्रकार की अनेक युद्ध परिस्थितियों पर वाद-विवाद करतीं। उनको पहाड़ियों पर अश्वारोहण का शौक हुआ। झाँसी के आसपास पहाड़ियाँ हैं ही, उस समय जंगल और विषम स्थल भी थे। रानी तेजी के साथ सहेलियों सहित इनपर अश्वारोहण करतीं। झाँसी के आसपास की भूमि का उनको राई-रत्ती परिचय प्राप्त हो गया। इस भौगोलिक परिचय के क्षेत्र को वे निरंतर, अनवरत बढ़ाती रहती थीं। जो स्त्री-पुरुष उनके पास भेंट के लिए आते, उन सबसे कहतीं—शरीर को इतना कमाओ कि फौलाद हो जाए, तभी मन दृढ़तापूर्वक भगवान् की ओर जाएगा।

उनका कसरतों का शौक शीघ्र विख्यात हो गया। बाला गुरु बिठूर से आए और मल्लविद्या के सूक्ष्मतम दाँव-पेंच बताकर चले गए। नरसिंहराव की टौरिया के नीचे दक्षिणियों के मुहल्ले में, वे एक अखाड़ा जारी कर गए। रानी कुश्ती का अभ्यास अपनी सहेलियों के साथ करती थीं। तीर, बंदूक, छुरी, बिछुआ, रैकला इत्यादि चलाने में पहले दर्जे की श्रेष्ठता उन्होंने अमीर खाँ, वजीर खाँ के निर्देशन से प्राप्त की। रानी का बाह्य रूप प्रचंड तेजपूर्ण था, परंतु अंतर बहुत कोमल और उदार था।

इस प्रकार महीनों बीत गए।

एक दिन तात्या टोपे आया। जब रानी के पास पहुँचा, वे तीनों सहेलियाँ उनके साथ थीं। अबकी बार तात्या ने जो रानी को देखा तो बहुत सतेज पाया।

कुशल वार्त्ता के बाद बातचीत हुई। तात्या ने भारत की तत्कालीन राजनीतिक अवस्था का ब्योरे के साथ कथन किया।

सुनकर रानी ने कहा, 'तात्या, तुम बहुत चतुर हो। अपनी वार्त्ता सुनाते जाओ। मैं ध्यान दिए हूँ।'

तात्या मुसकराकर बोला, 'मराठा रियासतों के राजाओं का जो हाल पहले देखा था, वही अब भी है। केवल एक अंतर है। जनता सजग है और सिपाही स्वाभिमानी हैं। महाराष्ट्र की जनता अब भी स्वराज्यमत्त है। दरिद्र और धनाढ्य, किसान-मजदूर और जमींदार लगभग सब एक संकेत पर खड़े हो सकते हैं।'

'और एक बार फिर', रानी ने सहसा कहा, 'वे पर्वतमालाएँ और मैदान, वे घाटियाँ और उपत्यकाएँ 'हर-हर महादेव' से गूँज उठेंगी, काँप उठेंगी।'

रानी का सतेज मुख और भी तेजमय हो गया। परंतु वे तुरंत मुसकरा उठीं। बोलीं, 'तात्या, मुझको तुम्हारे सामने तक नियंत्रण के साथ बोलना चाहिए। कभी-कभी मैं वाक्य संयम की कमी के कारण अपने ऊपर खीझ उठती हूँ।'

तात्या ने दृढ़ स्वर में कहा, ' बाईसाहब, मेरे हृदय में, इनके हृदय में और सब जनता के हृदय में जो बात गड़ी हुई है, वही आपके मुँह से निकल पड़ी।'

रानी बोलीं, 'तात्या, अभी कुछ विलंब और है। तब तक महत्त्वपूर्ण स्थानों के भूगोल का बारीकी से अध्ययन कर लो। कहाँ, किस प्रकार सेनाओं को ले जाना पड़ेगा, कहाँ आसानी के साथ युद्ध किया जा सकता है और अपने अभीष्ट स्थान पर किस प्रकार शत्रु को एकत्र करके लड़ाई के लिए विवश किया जा सकता है—इन विषयों पर काफी समय और परिश्रम खर्च करने की आवश्यकता है। इसके सिवाय बारबरदारी के जानवरों और अच्छे घोड़ों के इकट्ठा करने की योजना पर विचार करते रहने को भी मन में बहुत स्थान मिलना चाहिए। तोपें, बंदूकें, बारूद, गोला, गोली इत्यादि युद्ध-सामग्री के बनानेवाले कारीगरों को भी हाथ में लो। अंग्रेजी कारखानों में अपने आदमी नौकर रखवाओ, वे लगन के साथ सब क्रियाएँ सीखें। अपनी पुरानी बारगी-युद्ध परिपाटी[5] को तो गाँठ ही में बाँध लो। हमारा देश उस परिपाटी को छोड़कर अंग्रेजों से लड़ा, इसलिए भी हारा।'

तात्या—'मैंने नाना साहब और रावसाहब के प्रोत्साहन एवं आज्ञा से इन सब बातों का ध्यान रखा है और आपकी

भी आज्ञा मिली। पूरा ध्यान दूँगा। मैं इतने महीनों पैदल अधिक फिरा हूँ, इसलिए मुझको देश का भूगोल बहुत अच्छी तरह याद हो गया है। किसी-न-किसी तरह बहुत से आदमी, सामान और जानवर लेकर कहीं-का-कहीं पहुँचा सकता हूँ।'

रानी—'लड़ाइयों के नक्शों का अध्ययन किया?'

तात्या—'अच्छी तरह। पंजाब में जो लड़ाइयाँ अंग्रेजों से सिख लड़े हैं, उनका भी मैंने अध्ययन किया। व्यर्थ ही सिखों ने इतनी वीरता खर्च की। इतनी युद्ध-सामग्री, ऐसी अच्छी सीखी-सिखाई फौज यदि अच्छे नायकों के हाथ में होती तो अंग्रेज सिखों को कभी न हरा पाते। परंतु कदाचित् उनकी हार देशद्रोहियों के कारण हुई है।'

रानी—'वे कहते होंगे कि भाग्य ने हरा दिया?'

तात्या—'निस्संदेह यही कहते हैं।'

रानी—'मैं सिखों की लड़ाइयों के नक्शों का अध्ययन करना चाहती हूँ।'

तात्या ने कागजों पर मानचित्र बनाकर समझाया। रानी और उनकी सहेलियों ने भी समझा।

तात्या ने अनुरोध किया, 'हमको अपने एक विश्वसनीय जासूसी विभाग की बड़ी आवश्यकता है।'

रानी ने मुसकराकर कहा, 'मैंने आज स्थापना कर दी है।'

तात्या ने उत्सुक होकर पूछा, 'कैसे? कहाँ?'

रानी ने उत्तर दिया, 'यहीं। मेरी ये तीन सहेलियाँ काम सीख रही हैं और कर रही हैं। मैं और स्त्रियों को भी तैयार कर रही हूँ, परंतु काम सावधानी का है, इसलिए धीरे-धीरे कर रही हूँ।'

तात्या प्रसन्न हुआ। बोला, 'झाँसी में एक विलक्षण बात देखी। जो यहाँ निवास करता है, वह तो आपका भक्त है ही, किंतु यहाँ का निवासी जो बाहर चला गया है, वह भी झाँसी के लिए अपना तन-मन बलिदान करने के लिए प्रस्तुत है।'

रानी—'तुमको, जान पड़ता है, अकेले ही बहुत काम करना पड़ता है।'

तात्या—'नहीं बाईसाहब, नाना साहब, रावसाहब इत्यादि बहुत लोग काम में जुटे हुए

हैं। दिल्ली और मेरठ आदि प्रदेशों के अनेक मुसलमान भी प्राणों की होड़ लगाकर निरत हैं।'

रानी—'मुझको ऐसा लगता है कि शीघ्र ही कुछ हो बैठे; परंतु मैं सोचती हूँ कि अधकचरी तैयारी में कुछ न किया जाना चाहिए। बहुत दिन हुए, मद्रास की ओर सिपाहियों ने अचानक उपद्रव कर डाला था, वह व्यर्थ गया। फल यह हुआ कि मद्रासी अब सेना में कम भरती किए जाते हैं, और अंग्रेजों ने अपनी सावधानी को कसकर बढ़ा लिया है।'

तात्या—'कैसी भी सावधानी, कुटिलता और बुद्धि से अंग्रेज लोग काम लें, हमारी विशाल, असंख्य जनता उनका राज्य नहीं चाहती। इसलिए राजाओं और नवाबों का साथ न पाते हुए भी हमको अपने उत्साह में कमी प्रतीत नहीं होती।'

रानी ने मुसकराकर कहा, 'मैं जानती हूँ।'

तात्या बोला, 'बाईसाहब, अब आपके शयन का समय होने को है, भोजन तो अभी हुआ ही नहीं है। जाता हूँ। वहाँ एकाध दिन रहकर चला जाऊँगा। शीघ्र ही फिर सेवा में उपस्थित होऊँगा अर्थात् जैसे ही कोई महत्त्व की बात सामने आई, मैं आऊँगा।'

तात्या चला गया।



: १७ :

दूसरे दिन रानी के पास आठ बजे के लगभग तात्या, रघुनाथसिंह और जवाहरसिंह आए। रघुनाथसिंह पुष्ट देह का बड़ा बलशाली पुरुष था। जवाहरसिंह जरा छरहरे शरीर का, परंतु काफी बलवान्।

प्रणाम करके तीनों बैठ गए।

रानी ने पूछा, 'दीवान जवाहरसिंह को क्या कटीली से ले आए, तात्या?'

हाथ जोड़कर जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'दीवान रघुनाथसिंह को एक साँड़िनी सवार लिवा लाया। उसने प्रातःकाल के बहुत पहले ही सोते से जगाया था।'

तात्या ने कहा, 'मैं स्वयं नहीं गया। दीवान साहब से प्रार्थना की और इन्होंने तुरंत रात को ही साँड़िनी सवार भेज दिया। घुड़सवार जाता तो दीवान साहब को भी घोड़े पर ही आना पड़ता। शायद कोई संदेह करता, इसलिए ऊँट भेजा।'

जवाहरसिंह बोला, 'श्रीमंत सरकार, मुझे किसीका भी डर नहीं है। उस दिन के लिए तरस रहा हूँ, जब झाँसी और अपने स्वामी के लिए अपना शरीर त्याग दूँ।'

रघुनाथसिंह झूमने लगा।

रानी ने मुसकराकर कहा, 'आप ही लोगों का बल-भरोसा है। एक दिन आएगा जब आप लोगों के जौहर का उपयोग होगा। तात्या ने कुछ बताया होगा?'

रघुनाथसिंह—'बताया है, सरकार। थोड़े में समझ लिया। हम लोगों को ज्यादा सुनने-समझने की दरकार ही नहीं है। अपनी माता के दर्शन करने थे, इसलिए चले आए।'

जवाहरसिंह—'हम लोगों को सरकार के हाथों अपनी तलवार पर गंगाजल छिड़कवाना है।'

रघुनाथसिंह—'और अपनी माता का आशीर्वाद प्राप्त करना है।'

रानी मुसकराईं। बोलीं, 'आप लोगों को मैं अच्छी तरह जानती हूँ। आप लोग सहज ही प्राणों की होड़ लगा सकते हैं। परंतु मैं चाहती हूँ कि प्राणों को सहज ही न खोया जाए। अवसर आने पर ही तलवार म्यान से बाहर निकले। छोटी-छोटी बात पर न खिंच जाएँ।'

तात्या—'इन लोगों को लाट की आज्ञा पर बहुत क्षोभ हुआ और ये तुरंत कुछ जवाब देना चाहते थे।'

रानी—'अंग्रेजों के अन्याय बढ़ते जाएँ तो अच्छा ही है। फिर भगवान् हमारी जल्दी सुनेंगे। असल में अभी इन छोटी बातों पर खीझ-कसर निकालना अच्छा नहीं है।'

उन दोनों ठाकुरों ने स्वीकार किया।

फिर उन दोनों ने अपनी चमचमाती हुई तलवारें रानी के पैरों के पास रख दीं और हाथ जोड़कर खड़े हो गए।

रानी ने मुंदर से कहा, 'गंगाजल ला।'

मुंदर गंगाजल ले आई। रानी ने पहले जवाहसिंह की तलवार पर छींटे दिए और फिर रघुनाथ की तलवार पर।

उन दोनों ने रानी के चरण स्पर्श करके तलवारें म्यान में डाल लीं।

रानी पुलकित हुईं।

एक क्षण में अपने को संयत करके बोलीं, 'गंगाजल की पवित्रता को निभाना। आपस की कलह में इसका प्रयोग मत करना और न किसी कलुषित काम में।'

उन दोनों ने मस्तक नवाए।

रघुनाथ ने कहा, 'सरकार, अब आशीर्वाद मिलना चाहिए।'

रानी का गला भर आने को हुआ। उन्होंने नियंत्रण कर लिया।

बोलीं, 'तुम्हारे हाथों स्वराज्य के आदर्श का पालन हो। सुखी रहो, और अपने पीछे ऐसा नाम छोड़ जाओ कि आनेवाली अनंत पीढ़ियाँ तुम्हारे स्मरण से अपने को शुद्ध करती रहें।'

जवाहरसिंह ने कहा, 'माता, यह आशीर्वाद और वह पवित्र गंगाजल सदा हमारे साथ रहेगा।'

❑

: १८ :

ब्रिटिश सरकार के शासन की गतिविधि में अफसरों का जिले भर में दौरा करने, प्रत्येक दफ्तर के काम को बारीकी के साथ देखने-भालने, थानों, तहसीलों और जेलखानों का निरीक्षण करने का महत्त्वपूर्ण स्थान था। ग्राम पंचायतों का स्थान अंग्रेजी अदालतें दौरे के साधन द्वारा आसानी के साथ ले सकती थीं। इसके सिवाय दौरे का जीवन शिकार देता था, नवीन-नवीन प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन कराता था और संपूर्ण देहात के संपर्क में इन लोगों को ले आता था। शासन की जड़ें मजबूत बनती थीं।

गार्डन के पास दौरे पर झाँसी से एक हरकारा कमिश्नर स्कीन की चिट्ठी लेकर आया। स्कीन ने उसको समाचार दिया था कि सागरसिंह नामक डाकू पकड़ा गया है, जेल में बंद है। जेल का निरीक्षण करना चाहता हूँ। एक दिन के लिए जल्दी आ जाओ।

उसके दूसरे दिन जेल का मुआयना हुआ। स्कीन और गार्डन साथ थे। बख्शिशअली जेल का दरोगा था। बड़े विनम्र भाव से सलामें झुकाता हुआ, उन दोनों के सामने आया। दोनों प्रसन्न हुए। उनको इस प्रकार का शाही अदब-कायदा पसंद था।

जेल के भीतर जाकर सागरसिंह को देखा। तगड़ा फुर्तीला आदमी था। आँखें तीक्ष्ण और चमकदार, दाढ़ी कानों तक चढ़ी हुई, हथकड़ी-बेड़ी से जकड़ा हुआ।

स्कीन ने पूछा, 'क्या नाम है ?'

'क्या आपको मालूम नहीं ?'

'तुम्हारे मुँह से सुनना चाहता हूँ।'

'कुँवर सागरसिंह।'

'कहाँ के रहनेवाले हो ?'

'रावली के—बरुआसागर से कुछ दूर।'

'तुमने यह पेशा क्यों अपनाया ?'

'क्योंकि इससे बढ़िया कुछ और मिला नहीं।'

'हमारी फौज में नौकरी क्यों नहीं की ? अच्छा वेतन मिलता।'

'हमारे घराने में अफसरी होती आई है। हम कोरी सिपाहीगिरी कैसे करते ?'

'तुम धीरे-धीरे नायक, हवलदार और फिर सूबेदार तक हो सकते थे।'

'हमारे पुरखों की मातहती में पाँच-पाँच हजार सिपाहियों ने काम किया है। सेनापतियों के घराने के होकर हवलदारी, सूबेदारी करेंगे ?'

'ओ, जनरल बनना चाहता था ?'

'क्यों, जंडैल बनना कोई बड़ी बात है ?'

'डाकू से जनरल, हिंदुस्तान में सब अजीब-ही-अजीब होता है। जनरल से डाकू हो जाता है तब डाकू से जनरली की तरक्की मामूली बात है ! तुमको मालूम है सागरसिंह।'

'कुँवर कहिए, मुझको अकेले नाम से कोई नहीं पुकारता।'

'अच्छा कुँवर सागरसिंह, तुमको मालूम है कि इसी जेलखाने में फाँसी घर है और मुझको अकेले फाँसी देने का

अधिकार है। तुम्हारे जो कारनामे सुने गए हैं, वे साबित भी होंगे और साबित होने पर तुमको फाँसी की सजा दी जाएगी। मैं कल-परसों में तुम्हारा मुकदमा करके उसी दिन फाँसी दे दूँगा।'

'मुझ अकेले कुँवर सागरसिंह को!'

'तुम्हारे साथ और कौन-कौन हैं?'

'बहुत से हैं।'

'नाम बताओगे?'

'क्यों बताऊँ? क्या पड़ी है? मुझको कोई फायदा हो तो नाम बता दूँगा।'

'फायदा होगा। यदि सच-सच कहोगे तो सरकारी गवाह बना लिये जाओगे और छोड़ दिए जाओगे।'

'बताऊँगा, परंतु इन हथकड़ियों और बेड़ियों के बोझ के मारे और भूखे-प्यासे अकल बिगड़ गई। आज जरा आराम मिल जाए तो कल अवश्य बता दूँगा, पर अपने वचन पर पक्के रहना।'

'हाँ।'

स्कीन ने जेल-दरोगा को सागरसिंह का बोझ हलका करने की आज्ञा दी और अच्छे भोजन की व्यवस्था के लिए भी कह दिया।

बख्शिशअली ने उस आज्ञा का यह अर्थ समझा कि कैदी के साथ पूरी रियायत की जाए।

स्कीन और गार्डन उधर गए और इधर बख्शिशअली ने कुँवर सागरसिंह की हथकड़ी-बेड़ी खोल दीं। केवल साधारण पहरा रहने दिया।

सागरसिंह ने कहा, 'दरोगा साहब, बहुत भूख लगी है। किसी ब्राह्मण के हाथ से अच्छा खाना पकवा दीजिए।'

बख्शिशअली बोला, 'कुँवर साहब, मैं तो पूड़ी-मिठाई से आपका थाल भर देता, परंतु इन अफसरों के मारे मजबूर हूँ। अब लीजिए, कोई दिक्कत नहीं रही, हुक्म हो गया है।'

अच्छा खाना बनवाया गया। आदर के साथ परोसा गया। पहरेदारों के मन पर भी कुँवर साहब का आतंक छा गया।

शाम हुई। रात हुई। पहरेवाले जागते-जागते सो गए। बख्शिशअली को दिन भर के परिश्रम के मारे थकावट आई। वह भी चैन से सो गया।

कुँवर सागरसिंह को सुअवसर प्राप्त हुआ। चंदबरदाई का दोहा याद आया—'फेर न जननी जन्म है, फेर न खेंच कमान' और चुपचाप दीवार लाँघकर नौ-दो-ग्यारह हुआ और सवेरा होते-होते ऐसे जंगल में पहुँच गया, जहाँ उसके विश्वास के अनुसार स्कीन और गार्डन के फरिश्ते भी नहीं पहुँच सकते थे।

प्रात:काल जेल भर में हड़बड़ी फैल गई। बख्शिशअली का होश काफूर हो गया। कभी जेल में हड़बड़ाकर पहुँचता और कभी घर में बीवी-बच्चों के पास आकर सिर पीटता।

स्कीन और गार्डन के पास भी खबर पहुँची। वे दोनों तुरंत आए, क्रोध में डूबते-उतराते।

बख्शिशअली ने अत्यंत विनम्र प्रणाम किया और अत्यंत कातर स्वर में कहा, 'हुजूर हुक्म दे गए थे कि हथकड़ी-बेड़ी खोल दो और अच्छा खाना दो। मैंने वैसा ही किया। उसपर पहरा रखा। फिर भी रात को वह मौका निकालकर भाग गया।'

'बेवकूफ, गधे, नालायक।' स्कीन पागल-सा होकर बोला, 'हमने यह हुक्म दिया था?' और तड़ाक से बख्शिशअली को चढ़े जूते की ठोकर दी। वह गिर पड़ा। वैसी हालत में भी स्कीन ने उसको कई ठोकरें और लगाईं।

तब कहीं उसका क्रोध शांत हुआ।

गार्डन ने कहा, 'बख्शिशअली, गनीमत समझो कि तुमको साहब बहादुर ने इतने से ही छोड़ दिया। तुमको हम बरखास्त नहीं करना चाहते हैं।' बख्शिशअली रोने लगा। स्कीन ने इशारा किया। बख्शिशअली ने नहीं देखा।

गार्डन बोला, 'अच्छा तुमको बरखास्त नहीं करता हूँ। मगर उस पहरेवाले को बरखास्त किया जाएगा, जिसके पहरे में से कैदी छूटकर भागा है।'

वह सिपाही बरखास्त कर दिया गया।

बख्शिशअली का अपमान पहरेदारों और कैदियों के सामने हुआ था। मार-पीट से ज्यादा वह घोर अपमान उसको खाए जा रहा था। सीधा घर गया और बहुत रोया। बीवी-बच्चे भी रोए।

बख्शिशअली ने कहा, 'जी चाहता है कि तलवार से तुम सबको कतर डालूँ और गोली मारकर मैं भी मर जाऊँ। राजा गंगाधरराव ने या रानी लक्ष्मीबाई ने कभी तू-तड़ाक नहीं किया। आज इन गोरों ने मेरे बुजुर्गों की इज्जत खाक में मिला दी।'

बीवी ने रो-रोकर समझाया। मुश्किल से अपने अपमान और क्षोभ को पीकर, बख्शिशअली ने वह दिन भूखों काटा।

'कैसे मुँह दिखाऊँगा?' यह बार-बार कहता था, 'कहाँ तो मैं आठों फाटकों का कोटपाल था और कहाँ आज यह हालत हुई!' बार-बार मन में आत्मघात की, बीवी-बच्चों को मार डालने की प्रतिक्रिया उठती थी, परंतु उनकी रोती हुई, बेबस सूरतों को देख-देखकर सहम जाता था।

अंत में आत्मघात का निश्चय उसके मन के किसी कोने में जाकर लीन हो गया। बख्शिशअली फिर यथावत् काम करने लगा।

जब कभी स्कीन या गार्डन जेल-निरीक्षण के लिए आता, बख्शिशअली को लगता, मानो कोई जल्लाद आया हो।



: ११ :

नवाब अलीबहादुर गार्डन और स्कीन के पास आया-जाया करते थे। परंतु गार्डन के पास बहुधा। पेंशन बढ़ाने की आशा अभी जीर्ण नहीं हुई थी। उनको इधर की खबर पीरअली दिया करता था। वे इन खबरों को गार्डन के पास पहुँचा देते थे।

पीरअली ने दीवान जवाहरसिंह के आने का समाचार नवाब साहब को दिया। परंतु वह और तात्या चले गए तब।

नवाब ने कहा, 'कुछ दाल में काला है। जवाहरसिंह कटीलीवाले राजा की फौज के एक बड़े अफसर रहे हैं। बिठूर से उस आदमी का इन्हीं दिनों आना इल्लत से खाली नहीं है। क्या कर्नल जमाँ खाँ भी इन लोगों से मिले?'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'कह नहीं सकता। अनुमान करता हूँ कि जरूर मिले होंगे। कर्नल साहब की हवेली में ही तो वह बिठूरवाला ठहरा था। उसको टोपे कहते हैं।'

'इन लोगों में क्या बातचीत हुई या किस प्रसंग की चर्चा हुई, यह जानने की जरूरत है।'

'मैंने जानने की कोशिश की। लेकिन वे लोग दीवान रघुनाथसिंह के यहाँ ऐसी जगह बैठे थे कि वहाँ से सुनाई नहीं पड़ सकता था।'

'ये लोग रानी साहब के पास भी गए?'

'जी हाँ, गए। और हँसते, खुश होते हुए लौटे।'

'कर्नल साहब के यहाँ वह टोपी या टोपे क्या करता था?'

'कर्नल साहब की हवेली के नजदीक नाटकशालावाली जूही रहती थी। मुझको मालूम होता है कि उस टोपे के लिए वह चुंबक है।'

'हो सकता है। और इसलिए शायद वह कर्नल साहब के यहाँ ठहरता है। मगर जवाहरसिंह का और इस टोपे का रघुनाथसिंह की भीतरी बैठक में देर तक बातचीत करना किस मतलब से हुआ होगा? खुदाबख्श कहाँ है?'

'वह तो मोतीबाई के पीछे दीवाने हो रहे हैं।'

'मोतीबाई रानी साहब के पास कभी जाती हैं?'

'जी हाँ, कभी-कभी।'

'उससे काम नहीं निकाला जा सकता है?'

'कोशिश करूँगा।'

नवाब साहब सोचने लगे। बोले, 'मोतीबाई को मेरे पास लिवा लाओ। गाने के बहाने से।'

पीरअली—'लेकिन वह कहीं भी नहीं गाती। बहुत कम बाहर निकलती है।'

नवाब—'मेरे यहाँ गाएगी, लेकिन खुदाबख्श को खबर न हो। खुदाबख्श से बाद में बातचीत की जाएगी।'

पीरअली अपने घर गया। देखा, मोतीबाई मौजूद है। पीरअली ने सोचा, बहुत अच्छा शकुन हुआ।

आवभगत के बाद उसने मोतीबाई से बातचीत की।

'मैं तो आपके यहाँ आनेवाला था।' प्रसन्न होकर पीरअली ने कहा।

मोतीबाई ने मधुर मुसकान के फूल बरसाए। साड़ी का घूँघट खींचा। गरदन मोड़ी। बोली, 'मैं खुद आ गई। आप किसलिए कष्ट कर रहे थे?'

'नवाब साहब को गाने का शौक हुआ है। कहा, अकेले में सुन लूँगा। महफिल न होगी।'

'और मैं भी यही सोचकर आई हूँ। अब परदे में गुजर नहीं हो सकती। खुलेआम तो नाचना-गाना मुझसे न होगा, चाहे भूखों भले ही मर जाऊँ। मगर नवाब साहब सरीखे बड़े आदमियों को सुना आने में मुझको कोई उज्र न होगा।'

'नवाब साहब भी यही फरमाते थे, वह महफिल नहीं जोड़ेंगे।'

'आप भी सुना करिए।'

'मैं तो फर्ज और शौक, दोनों के लिए मौजूद रहूँगा। उस्ताद मुगल खाँ के ध्रुवपद से जब जी भर जाए तब आपका खयाल और नाटक के गीत ही मौज पैदा कर सकते हैं। सच पूछिए तो न दिन भर का समय हो और न मुगल खाँ साहब को सुना जा सके।'

'तो मैं कितने बजे आऊँ?'

'मेरे खयाल में शाम का वक्त अच्छा रहेगा।'

'जी हाँ, लेकिन मैं आठ बजे तक आऊँगी।'

'हाँ, ठीक है। दो घंटे क्या कम हैं?'

मोतीबाई समय नियुक्त करके चली गई।

पीरअली ने सोचा, 'उम्र कुछ बढ़ गई है, मगर अब भी झूमती फुलवारियों-सा मदमाता यौवन है।'

पीरअली ने नवाब साहब को सूचना दी।

संध्या के छह बजे मोतीबाई आ गई।

परदे की आड़ टूट गई। प्रारंभ में जरा शरमाते-शरमाते। अलीबहादुर ने सोचा, स्वाभाविक है। उनको आश्चर्य यही था कि रंगमंच पर बिना किसी शील-संकोच के नृत्य-गान करने और हाव-भाव दिखानेवाली अभिनेत्री इतने दिनों और ऐसा परदे का ढोंग क्यों किए रही।

नवाब ने रसीलेपन से कहा, 'मैंने रंगशाला में आपकी कला का कमाल देखा है। समझ में नहीं आता था कि इतना लाज-संकोच और परदा मेरे घर आकर भी आप क्यों करती रही हैं?'

'हुजूर', मोतीबाई बोली, 'आदत पड़ गई थी। अब भी बिलकुल नहीं छूटी है। गुजर के लिए परदे को कम कर दिया है, लेकिन बिलकुल तो न छोड़ सकूँगी। बहुत लोगों ने अंग्रेज सरकार की नौकरी कर ली है। मुझे तो कोई नौकरी मिल नहीं सकती, इसलिए गाने-बजाने से पेट भरना तय कर लिया है। आप सरीखे कुछ रईसों को खुश करना ही मेरे गुजर के लिए काफी होगा।'

नवाब ने सोचा—मोतीबाई शोख हो गई है। उसकी वह शोखी उनको भली मालूम हुई।

मोतीबाई ने लगभग एक घंटा गाया-नाचा; परंतु इसके बाद न तो नवाब साहब का मन लगा और न मोतीबाई का।

नवाब साहब ने कहा, 'जरा सुस्ता लीजिए। फिर देखा जाएगा। तब तक बातें करें। पीरअली, पान लाना।'

पीरअली ने पान दिए।

नवाब ने पूछा, 'कभी आप महलों में जाती हैं? काम ही क्या पड़ता होगा।'

'जाती हूँ', मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'रानी साहब भजन सुनती हैं। उनको मीरा के भजन बहुत पसंद हैं। रोज तो नहीं जाती हूँ, कभी-कभी सुना आती हूँ। वहाँ थोड़ा-बहुत मिल जाता है।'

'रानी साहब की पेंशन से बहुत लोगों को सहारा मिलता है, इसलिए बिचारी को मुश्किल का सामना करना पड़ता होगा।'

'जरूर, मगर वह बहुत उदार हैं। उनका निजी खर्च तो बहुत कम है। दान-पुण्य में बहुत दे डालती हैं।

'बहुत नेक हैं। और फिर इधर-उधर के आने-जानेवाले, नाते-रिश्ते के लोग, पुराने मुलाजिम लगे हैं, उनको भी कुछ-न-कुछ देना ही पड़ता होगा।'

मोतीबाई की एक आँख के कोने पर सजगता आई। दरवाजे से सटा हुआ पीरअली कान खड़े करके सुनने लगा।

मोतीबाई ने मुसकराकर कहा, 'आते तो बहुत लोग हैं, पर उनको लेते-देते मैंने नहीं देखा।'

'यही क्या कम है कि रानी साहब उनको बातचीन ही के लिए काफी समय देती होंगी।' फिर अलीबहादुर ने सुझाव दिया, 'पूजा-पत्री और सवारी-कसरत में भी कई घंटे निकल जाते हैं।'

मोतीबाई ने तुरंत कहा, 'न मालूम कहाँ से दुनिया भर के कामों के लिए वह समय निकाल लेती हैं। सवारी, कसरत, कुश्ती करती हैं, औरतों को सिखाती हैं, पूजा करती हैं, गीताजी को सुनती हैं और न जाने कितने स्त्री-पुरुषों से बातचीत करती हैं। इसी बीच में कभी-कभी मेरा गाना भी सुन लेती हैं।'

'तुम्हारा गाना तो बाईजी, देवताओं को भी लुभा लेगा।' अलीबहादुर ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा।

मोतीबाई मुसकराई। झेंप का अभिनय किया। फिर भोलेपन के साथ बोली, 'उन्होंने एक काम जरूर बहुत कम कर दिया है। शायद छोड़ ही दिया हो। रामनामी गोलियों का बनाना और अकेले में बैठकर मछलियों को खिलाना। यह काम अब उनकी सहेलियाँ करती हैं।'

'दासियाँ, बाईजी ?'

'वह उनको दासियाँ नहीं कहतीं, सहेलियाँ कहती हैं।'

'वह बड़ी नेक हैं, बाईजी। अब तो उन्होंने परदा छोड़ दिया है। मैंने भी दर्शन किए हैं, न मालूम पहाड़ों और नदियों के घूमने में उनको क्या मजा आता है।'

'मुझसे भी घोड़े की सवारी के लिए कहा था।'

'सचमुच ? आपने सीखी ?'

'पहले तो बहुत डर लगा, पर अब थोड़ा-थोड़ा सीख गई हूँ। उनकी सहेली सुंदर बड़ी अच्छी सवार है। वही सब औरतों को सिखाती है।'

'क्या औरतों को हथियार चलाना सिखाया जाता है ?'

'वह तो लाजमी है।'

'आपने भी सीखा है ?'

'सीख रही हूँ।'

'किस मतलब से ?'

'मैं तो अपने हाथ-पैर अभी बरसों अच्छी हालत में रखना चाहती हूँ। इसलिए सीखती हूँ। केवल इसी मतलब से रानी साहब सवारी, कसरत इत्यादि करती हैं, और मतलब मुझको मालूम नहीं।'

'आपको घोड़े पर सवार देखकर मुझको बड़ा अच्छा लगेगा। शायद फरेरू आ जाए। आपकी तंदुरुस्ती, रूप, रंग सब पहले से बहुत अच्छे हैं। कारण यही कसरत, सवारी वगैरह है।'

अलीबहादुर ने सोचा—स्त्री को पराजित करना हो तो उसकी प्रशंसा करो।

मोतीबाई पराजित-सी जान भी पड़ी। मुसकराकर, झेंपकर, सिमटकर उसने आँखों में मादकता उँडेली।

बोली, 'हुजूर ने तो यों ही बहुत तारीफ कर डाली।'

नवाब ने कहा, 'मैंने झूठ नहीं कहा।'

फिर हँसने लगे। पान खाया और खिलाया। सतर्कता के साथ पूछा, 'कौन-कौन लोग रानी साहब के पास आते

हैं, या आए हैं?'

मोतीबाई ने अविलंब उत्तर दिया, 'हाल में बहुत लोग आए हैं? बिठूर से तात्या टोपे, कटीली से दीवान जवाहरसिंह, एक कोई दूल्हाजू कोई...क्या विनय करूँ, बहुतों के नाम ही याद नहीं आ रहे हैं। आगे याद रखा करूँगी।'

'जरूर और मुझको बता दिया करो। रुपए-पैसे की सकुच मत करना आप। जो कुछ थोड़ा सा मेरे पास है, वह अपना समझो।'

'आपकी बहुत कृपा है। मैं अहसानों को कभी नहीं भूलूँगी।'

'और आने-जानेवाले जो कुछ बात किया करें, वह भी मुझको सुना जाया करिए। अभी हाल में कोई खास बात हुई हो तो।'

'हाँ, कुछ बातें मुझको मालूम हैं। निवेदन करूँ?'

'अवश्य, मैं ध्यान से सुनूँगा।'

'रानी साहब गोद लिये राजकुमार का जनेऊ कराना चाहती हैं। उसीका मशविरा हो रहा है।

'दीवान जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से?'

'जी हाँ, वे सभी पुराने नौकरों और सब नातेदारों को तथा शहर और देहात के रईसों को उस मौके पर बुलाएँगी। चूँकि रानी साहब को अपने पुराने आदमियों के सही पते नहीं मालूम, इसलिए जो लोग आते हैं उनके साथ इसी प्रसंग की चर्चा करती हैं। वह राजकुमार के जनेऊ पर बहुत खर्च करेंगी।'

'आगे कोई और बात मालूम पड़े तो मुझको आप जरूर बताना।'

'अपना कर्तव्य और सौभाग्य समझूँगी', कहकर मोतीबाई चलने को हुई। उसने मुसकराकर एक कटाक्ष किया।

नवाब साहब ने पान दिया।

मोतीबाई ने कहा, 'मैं सीधी रानी के पास महल जाऊँगी। उनको एकाध भजन सुनाकर फिर घर पहुँचूँगी। यदि कोई खास बात मालूम पड़ी तो सेवा में आकर अर्ज करूँगी।'

पीरअली ने अनुरोध किया, 'मैं आपको महल तक पहुँचा आऊँ?'

मोतीबाई ने इनकार नहीं किया।

मार्ग की चहल-पहल कम हो गई थी, परंतु बंद नहीं हुई थी।

मोतीबाई ने अवसर पाकर पीरअली से कहा, 'नवाब साहब के सामने का परदा तोड़ दिया, अब और लोगों के सामने भी निकलने लगूँगी।'

पीरअली समझ गया। बोला, 'खुदाबख्श साहब मेरे दोस्त हैं। उनसे कहूँगा तो वह मेरा मुँह मीठा करा देंगे।'

'जी नहीं, अभी नहीं। वह बहुत दिक करते हैं। आपके जैसा मिजाज और कायदा उन्होंने नहीं पाया है।'

पीरअली प्रसन्न भी हुआ और सहमा भी। 'कायदा' शब्द उसको खटका।

वह मोतीबाई को महल के फाटक तक पहुँचाकर लौट आया।

रानी कथावार्त्ता का सुनना समाप्त कर चुकी थीं। मोतीबाई ने आकर प्रणाम किया। जब सब लोग चले गए, रानी ने उससे पूछा, 'क्या हाल है, मोती?'

मोती ने अनुनय के साथ कहा, 'सरकार को मीरा का एक पद सुना दूँ तब कुछ निवेदन करूँगी।'

मोती ने तँबूरे पर मीरा का एक पद सुनाया। फिर तंबूरा जहाँ-का-तहाँ रखकर बोली, 'सरकार के विरुद्ध एक जासूस और पैदा हो गया है।'

रानी ने शांत भाव से कहा, 'कौन है, मोती?'

'नवाब अलीबहादुर।'

'मुझको संदेह तो नवाब साहब पर पहले से ही था। क्या बात हुई?'

मोतीबाई ने ओर से छोर तक सब सुनाया।

जनेऊ के संबंध की बात को सुनकर रानी बोलीं, 'मुझको तेरी बुद्धि पर अचरज होता है, मोती। मेरे मन में दामोदरराव का जनेऊ कराने की और अपने लोगों को निमंत्रित करके समारोह करने की बात कुछ दिन से उठ रही है। पर मैंनेउसको प्रकट किसीपर नहीं किया। तूने कैसे जान लिया?'

'सरकार', मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'एक दिन राजा भैया से आपने कहा था—'तुम्हारा जनेऊ होगा। इतना याद था। उसीको मैं काम में ले आई।'

रानी ने मुसकराकर प्रस्ताव किया, 'तुमको खुदाबख्श की भी जाँच करनी है।'

मोतीबाई ने जरा सा सिर नवाया। फिर दृढ़ स्वर में बोली, 'सरकार, यदि काम के निकले तो फर्द में नाम रहने दीजिएगा, नहीं तो काटकर अलग कर दीजिएगा।'

'मुझको विश्वास है, मोती', रानी ने कहा, 'लोहा लोहा ही सिद्ध होगा।'

रानी ने पूछा, 'जूही और दुर्गा कुछ कर रही हैं?'

मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'हाँ, सरकार। दुर्गा फौज के हिंदुस्तानी अफसरों को नाचना-गाना प्रदर्शित करती है और उनसे भेद लेती है। जूही की परीक्षा बाकी है।'

'मेरा संबंध तो प्रकट नहीं होता?' रानी ने प्रश्न किया।

'नहीं, सरकार।' मोती ने उत्तर दिया।

रानी ने कहा, 'मुझको तुम्हारी बुद्धि और अभिनय कला पर भरोसा है।'

मोतीबाई ने उत्साह के साथ आश्वासन दिया।

'यदि मेरा अभिनय श्रीचरणों की कुछ भी सेवा कर सका तो मैं अपने जन्म को सार्थक मानूँगी।'

मोतीबाई अपने घर चली आई।



: २० :

रानी जब से घुड़सवारी के लिए बाहर निकलने लगीं, तब से वह मर्दाना पोशाक पहनने लगी थीं—सिर पर लोहे का कुला, ऊपर साफा, उसका एक खूँट पीछे फहराता हुआ। कंचुकी के ऊपर सटा हुआ अँगरखा, पैजामा; अँगरखे और पैजामे पर कसी हुई पेटी। दोनों बगलों में पिस्तौलें और दोनों ओर परतलों में तलवारें। कभी-कभी इतने सब हथियारों के अलावा नेजा भी हाथ में साध लेती थीं। उनको काठियावाड़ी घोड़े अधिक पसंद थे और सफेद रंग के खास तौर पर। घोड़ों की उनको विलक्षण पहचान थी।

उन्हें कुला लगाकर साफा बाँधने में एक असुविधा अवगत होती थी—लंबे केशों की। विधवा थीं, इसलिए महाराष्ट्र की प्रथा के अनुसार बाल मुड़वाने में कोई बाधा न थी। अपने केशों का कोई मोह था ही नहीं। सोचा, काशी जाकर मुंडन करा लें। पर्यटन हो जाएगा और काशी में बैठकर उस ओर की राजनीतिक परिस्थिति का आभास भी मिल जाएगा। एक भावना और थी—जिस घर में माता ने जन्म दिया था, उसके भी दर्शन मिल जाएँगे।

खोज करने पर मालूम हुआ कि बिना डिप्टी-कमिश्नर की अनुमति के काशी-यात्रा के लिए नहीं जा सकतीं।

अनुमति के लिए गार्डन को अरजी दी गई। उसके पास दीवान जवाहरसिंह इत्यादि के रानी के पास आने-जाने की खबरें पहुँच चुकी थीं। वह चिढ़ा हुआ था। दूसरे, अपने अधिकार को करारे रूप में लाने का अभ्यासी था। काशी-यात्रा के लिए जो अरजी दी गई थी, वह उसने अस्वीकृत कर दी।

जिसने सुना, उसीके जी को चोट लगी।

रानी ने प्रण किया, 'मैं केश-मुंडन तभी कराऊँगी, जब हिंदुस्तान को स्वराज्य मिल जाएगा, नहीं तो श्मशान में अग्निदेव मुंडन करेंगे।'

उनकी यह भीषण प्रतिज्ञा उनकी सहेलियों को मालूम थी। वे सब इस प्रतिज्ञा पर प्रसन्न थीं—उनको पसंद न था कि ऐसे सुंदर बालों का कुसमय क्षय हो।

दामोदरराव रानी के प्रगाढ़ स्नेह में पल रहा था, बढ़ रहा था। कोई निज माता अपने गर्भ-प्रसून को इतना प्यार न करती होगी जितना वह दामोदरराव को चाहती थीं।

समय अपनी प्राकृतिक गति से चला जा रहा था। इसीमें रानी की योजना भी संवृद्धि और पुष्ट होती जा रही थी। कहाँ क्या हो रहा है, इसके समाचार उनको निरंतर मिलते रहते थे। वह युद्ध-सामग्री तैयार करनेवाले कारीगरों को एकत्र करने की योजना पर बहुत जोर देती थीं—और यह हो रहा था।

इस ओर रानी के जासूस और विश्वसनीय सहायक काम कर रहे थे, उस ओर नाना और राव के तथा बहादुरशाह एवं अवध के साथ सहानुभूति रखनेवालों के लोग, अपने-अपने काम में जुटे हुए थे।

रानी ने देखा कि लोगों को इकट्ठा करने का समय आ गया है। वह जानती थीं कि ऐन मौके पर तुरंत इकट्ठा करना दुष्कर होगा, इसलिए वह सबको एक बार एकत्र करके, तब योजना को आगे बढ़ाना चाहती थीं। हर काम की योजना वह पहले बना लेती थीं, तब व्यवस्था के साथ उसको व्यवहार का रूप देती थीं।

इसलिए उन्होंने दामोदरराव का जनेऊ करना निश्चित किया और उसके समारोह में जगह-जगह से प्रमुख लोगों का जमाव करके, आगे के कदम की बाबत परामर्श करना तय किया।

इस काम के लिए एक लाख रुपए की जरूरत थी। नकद रुपया उनकी गाँठ में न था।

दामोदरराव छह वर्ष का हो चुका था। सातवाँ लग गया। इस वर्ष में जनेऊ होना ही चाहिए। योजना भी इस स्थिति

में आ गई थी कि इस वर्ष में एक महान् सम्मेलन का किया जाना जरूरी था।

मोतीबाई इत्यादि ने समाचार दिया कि अंग्रेजों की हिंदुस्तानी सेना में काफी असंतोष फैल गया है।

रानी ने पुरोहित को बुलाकर मुहूर्त सुधवाया। मुहूर्त निकलने पर गार्डन को अरजी दी कि दामोदरराव के नाम से जो छह लाख रुपया खजाने में जमा है, उसमें से जनेऊ के लिए एक लाख रुपया दे दिया जाए।

पहले तो गार्डन की इच्छा अरजी को तुरंत खारिज कर देने की हुई। फिर सोचा हिंदुओं की यह कोई जरूरी रस्म है, इसलिए अंतिम निर्णय को स्थगित कर दिया।

उसने लोगों से पूछताछ शुरू कर दी। अलीबहादुर से पूछा। उन्होंने कहा, 'ब्राह्मणों में यह रस्म लाजमी है।'

सेठ, साहूकारों से पूछा। उन्होंने कहा, 'अनिवार्य है।'

अंत में फैसले को अपने पेशकार की सम्मति पर छोड़ा।

पूछने पर पेशकार ने कहा, 'हुजूर, ऊँची जाति के हिंदुओं, विशेषकर ब्राह्मणों में यह रस्म किसी प्रकार भी नहीं टाली जा सकती।'

गार्डन ने कमिश्नर से और कमिश्नर ने लेफ्टिनेंट गवर्नर से पूछा। अंत में गार्डन की मरजी को इस शर्त के साथ छोड़ा गया कि अगर झाँसी शहर के चार भले आदमी जमानत दें तो रुपया दे दिया जाए।

गार्डन ने रानी को सूचना दी, 'खजाने में जो रुपया जमा है, वह दामोदरराव नाबालिग का है। यदि बालिग होने पर दामोदरराव ने सरकार पर दावा कर दिया तो सरकार को रुपया अपनी थैली में से देना पड़ेगा, इसलिए झाँसी शहर के ऐसे चार आदमियों की जमानत दीजिए, जिनसे मेरा मन भरे।'

रानी को इस अपमान पर जितना क्षोभ हुआ, उसकी मात्रा का माप उस मानसिक बल से लग सकता है, जिसकी सहायता से रानी ने उस क्षोभ को दबाया। अपने ही रुपयों के लिए 'ऐसे चार भले आदमियों की जमानत, जिनसे मेरा मन भरे!'

झाँसी में चार क्या बावन बड़े-बड़े आदमी थे। रानी की जमानत देने के लिए सब तैयार हो गए।

कुछ ने तो खुदाबख्श और दीवान रघुनाथसिंह से यहाँ तक कहा, 'अरजी देने की क्या अटक पड़ी थी? इतना रुपया तो हमीं लोग नजर कर सकते हैं।'

परंतु रानी को अपने रुपए के लिए हठ था। उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। चार भले आदमी जमानत के लिए आ गए।

नियुक्त समय पर समारोह हुआ। दूर-दूर के लोग इकट्ठे हुए। झाँसी की जनता की ही बहुत बड़ी संख्या थी। नवाब अलीबहादुर भी शरीक हुए।

शुभ मुहूर्त में दामोदरराव का जनेऊ हो गया। लोगों ने खुशी-खुशी नजर भेंट की। काफी रुपया जमा हुआ।

दावत-पंगत हुई। गायन-वादन और दुर्गा का नृत्य। इसके बाद चुने हुए लोगों की बैठक। रानी लक्ष्मीबाई सफेद साड़ी पहने एक जरा ऊँचे आसन पर बैठीं। आसपास उनकी खास सहेलियाँ। जरा फासले पर नानासाहब और उनके भाई, तात्या टोपे, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, खुदाबख्श इत्यादि।

रानी ने कहा, 'जिस सफलता के साथ आप लोगों के सहयोग से यह छोटा सा यज्ञ हुआ, उसी सफलता के साथ उस बड़े यज्ञ की पूर्ति होनी चाहिए।'

नाना बोले, 'अच्छे कारीगर और बढ़िया सामान का प्रबंध हो गया है। यज्ञ की सामग्री ढ़ोनेवाले पशुओं और अश्वमेध के घोड़ों का भी इंतजाम कर लिया गया है।'

तात्या—'मैं जरा सीधी भाषा में बात करना चाहता हूँ।'

रानी—‘कर सकते हो, सब अपने-ही-अपने हैं। बाहर स्त्रियों का कठोर पहरा है। काम की बात करके अधिवेशन को समाप्त कर दिया जाएगा।’

तात्या—‘उत्तरी और पूर्वी हिंदुस्तान में अथक काम हो रहा है। अंग्रेजों ने जिन कारतूसों को आरंभ में जारी किया था, प्रतिवाद को देखकर लगभग बंद कर दिया है। परंतु उनके कारण जो घृणा उत्पन्न हुई थी, वह बिलकुल कम नहीं हुई है। अब अंग्रेज हिंदू सिपाहियों को तिलक-टीका लगाए हुए परेड में नहीं आने देते, इस कारण हिंदू सिपाहियों में घोर खिन्नता फैल गई है।’

खुदाबख्श—‘यहाँ की फौज के मुसलमान सिपाहियों में भी बहुत जोश है। उनके दीन को बरबाद करने का जो काम चर्बीवाले कारतूसों ने जारी किया था, वह ऐसा नहीं है कि कतई तौर पर बंद हो गया हो।’

रघुनाथसिंह—‘हम लोग बुंदेलखंड से आरंभ करने को तैयार हैं।’

रानी—‘अभी नहीं। ओरछा, अजयगढ़ और छत्रपुर के राजा बालक हैं। इन राज्यों के प्रबंध पर अंगे्रजों की छाप है। इसके सिवाय क्रांति का लग्गा लगवाते ही डाकू और बटमार बढ़ जाएँगे। हमारी जनता ही इन उपद्रवों से पीड़ित होगी। जब तक हमारे पास मजबूत सेना नहीं हो जाती, तब तक हम लोगों को प्रारंभ नहीं करना चाहिए। अंग्रेजों को परास्त करने के साथ-साथ इन जनपीड़कों का भी तो दमन करना पड़ेगा, अन्यथा जनता का क्षोभ अंग्रेजों के सिर से टलकर हम लोगों के सिर आएगा। हिंदुस्तानी सैनिकों को अपनाने का क्रम जारी रखना चाहिए। जब मन भर जाए, तब हाँ कही जाएगी।’

रानी की सम्मति से लोग सहमत हुए।

इसके उपरांत तात्या मोतीबाई और जूही से मिला। जूही यौवन के वसंत में थी। बड़ी-बड़ी आँखों में चमक। नीचे देखने के समय लंबी बरौनियाँ लाज के पाँवड़े-से डालनेवाली।

जूही केशों में फूल बाँधे हुए थी। एक फूल नीचे गिर पड़ा। तात्या ने उठाकर उसके बालों में खोंस दिया।

जूही ने मुसकराकर कहा, ‘जाने दीजिए।’

तात्या हँसकर बोला, ‘वह तो खोंस ही दिया, जूही। मैं लक्ष्मी से मनाता हूँ कि एक दिन आए जब देश की मुक्ति और तुम्हारे फूलों की महक का सम्मिलन हो।’

जूही बोली, ‘यदि इस काम के करने में मैं या मेरी तरह की और स्त्रियाँ मर जाएँ तो इस टूटे हुए फूल की महक और देश की मुक्ति के सम्मिलन की बात को भूल न जाइएगा।’

तात्या हँसता हुआ चला गया।



: २१ :

जूही का छावनी में आना-जाना बढ़ गया। उसके नृत्य-गान की कला में और भी मोहकता आ गई। परंतु किसी सिपाही या अफसर में उसने अपने को बाल बराबर भी नहीं खोया। वे समझते थे कि जूही हृदयहीन है।

जूही को हर पलटन में तीन-तीन उपयुक्त अफसर ढूँढ़ने में बहुत दिन नहीं लगे। उन अफसरों को यह मालूम हो गया कि हम लोगों को किसी दिन एक महान् कार्य करना है; परंतु उनको ठीक-ठीक यह मालूम नहीं हुआ था कि कब? जूही स्वयं नहीं जानती थी। कुछ और लोग, पलटनों के लिए इसी कर्तव्य पर नियुक्त थे, उनको भी मालूम न था, परंतु वे जानते थे कि जूही का काम उस योजना का एक अंग है, जिसका एक भाग उन लोगों का भी काम था। पर वे एक-दूसरे से मिलते न थे। निषेध था।

एक दिन जूही के नृत्य-गान का आनंद लेने के लिए कप्तान डनलप भी आ गया। एक क्षण के लिए जूही सकपकाई। परंतु उसने अपने पर नियंत्रण शीघ्र कर लिया और वह बहुत मजे से नृत्य-गान करती रही।

असल में डनलप को उसके जासूस ने खबर दी कि छावनी में नर्तकियाँ आती हैं और अफसरों से दीन-धर्म संबंधी कुछ बातें भी किया करती हैं। इसलिए वह सहसा वहाँ आ गया था।

नृत्य-गान से उसका मन शीघ्र ऊब गया, क्योंकि अधिकांश अंग्रेजों की तरह उसकी भारतीय कलाओं के प्रति उपेक्षा थी। परंतु जूही बहुत सुंदर थी। उसको सहज ही विश्वास न था कि ऐसा सौंदर्य अपने परिधान में किसी छल-कपट को छिपाए होगा। तो भी उसने सवाल किए—

डनलप—'तुम छावनी में से कितना पैसा कमा ले जाती हो?'

जूही—'जब जो मिल जाए, हुजूर।'

डनलप—'नाचने-गाने के सिवाय और कोई पेशा करती हो?'

जूही—'नहीं तो। मैं अविवाहित हूँ, कुमारी।'

डनलप—'तुम लोगों में विवाह भी होते हैं?'

जूही—'जरूर, हम लोग तो केवल नाचने-गाने का ही पेशा करती हैं।'

डनलप—'तुम रानी साहब के यहाँ नाचने-गाने जाती हो? मैंने सुना है कि उनको गाना सुनने और नाच देखने का शौक है।'

जूही—'मैं वहाँ नहीं जाती। कभी नहीं गई। उनको भगवान् के भजन सुनने का शौक है। नृत्य का कोई शौक नहीं।'

डनलप—'रानी साहब गाती हैं?'

जूही—'बिलकुल नहीं, मुझको क्या मालूम?'

डनलप—'रानी साहब ने तुमको घोड़े की सवारी नहीं सिखाई?'

जूही—'मैं उनके पास कभी जाती ही नहीं। घोड़े की सवारी क्यों सिखातीं?'

डनलप—'और औरतों को तो सिखाती हैं।'

जूही—'सुना है।'

डनलप—'मोती नाम की वेश्या को जानती हो?'

जूही—'वह वेश्या नहीं है। आपसे किसने कहा?'

डनलप—'मुझसे सवाल करती है, जानती है कि धक्के देकर निकलवा दूँगा।'

जूही—'मैंने आपका क्या बिगाड़ा है ?'

डनलप—'अच्छा हटो। आगे कभी छावनी में मत आना।'

जूही ने मुँह उदास बना लिया और वह चली गई। परंतु डनलप के ओट होते ही उसके होंठों पर, गालों पर मुसकराहट की छटा छा गई। उसको याद आ गया—'एक दिन आएगा जब फूलों की महक और देश की मुक्ति का सम्मिलन होगा।'

नर्तकी चली गई, परंतु उसका सौंदर्य डनलप के भीतर एक कोने में हलकी छाप, एक टीस छोड़ गया। उस टीस ने सिपाहियों के प्रति क्षोभ का रूप पकड़ा।

डनलप बोला, 'तुम लोग इन टकेवाली औरतों के मोह में अपना पैसा और समय नष्ट करते हो। इन औरतों का झूठा जादू ही तुमको ईसाई होने से रोक रहा है। इन शैतानों को छोड़कर सच्चे धर्म का ईमान लाओ तो मुक्ति भी मिलेगी और पैसा अलग।'

पैसा और मुक्ति का घनिष्ठ संबंध सिपाही लोग बहुत दिनों से सुन रहे थे। पहले तो इस संबंध की बात पर उनको हँसी आया करती थी, अब वे खीजने लगे, जलने लगे। परंतु सिपाहियों ने चुपचाप सुन लिया।

डनलप के जाते ही सारा सिपाही समाज व्यंग्य और क्षोभ में प्रमत्त हो गया। सुरीली और रूपवाली नर्तकी के अपमान का उनको रंज था, अपने धर्म की अवहेलना पर उनको क्रोध था और अंग्रेज के मुँह से रानी का नाम तक लेने पर उनको क्षोभ था।

'उस बिचारी को धक्के देकर निकालने की धमकी दी, बड़ा हूश है।'

'अरे, पाजी है। कहता है, धर्म-ईमान छोड़ दो।'

'मेरी तबीयत में तो आ गया था कि पोंदों पर दुलत्ती कस दूँ।'

'जरा ठहरो, समय आ रहा है। फिलहाल मनाही है। थोड़ी सी कसर रह गई है। हमारे मुखिया लोग इलाज सोच रहे हैं।'

'महीना, तारीख, वक्त कुछ मुकर्रर हुआ ?'

'चुप-चुप, अभी नहीं। ठहरे रहने का हुक्म है। इंतजार करने का।'



: २२ :

वसंत पंचमी हो चुकी थी। फरवरी का महीना था। चाँदनी डूब चुकी थी। रात बिलकुल अँधेरी। हवा ठंडी मंद-मंद। तारे दमक रहे थे। कुछ बड़े-बड़े, असंख्य छोटे-छोटे। जैसे चाँदनी अपनी चादर छितराकर छोड़ गई हो। नीचे सघन अंधकार। सब दिशाओं में गोलाई सी बाँधे हुए। झींगुर झंकार रहे थे।

रानी को नींद नहीं आ रही थी। कठिन व्यायाम से तप्त देह को ठंड भली लग रही थी। खिड़की खुली हुई थी। उसमें से कई बड़े-बड़े तारे दिखाई पड़ रहे थे। झींगुर की झंकार के ऊपर दूर से आनेवाला किसानों और चरवाहों के फाग-गीत का स्वर सुनाई पड़ जाता था।

रानी बिस्तर में बैठ गईं। निविड़ अंधकार में भी महल के सामनेवाला ऊँचा पुस्तक-भवन अपनी थोड़ी सी रूप-रेखा प्रकट कर रहा था।

'क्या वेद-शास्त्र, गीता, पुराण, दर्शन, काव्य—ये सब व्यर्थ हो जाएँगे?'

रानी ने होंठ-से-होंठ दबाया।

'कदापि नहीं, कभी नहीं। मैं लड़ूँगी। उन गरीबों के गीतों की रक्षा के लिए, इन पुस्तकों के लिए और जो कुछ इनके भीतर लिखा है उसके लिए । ऋषियों का रक्त ऐसा हीन और क्षीण नहीं हो गया है कि उनकी संतान तपस्या न कर सके, कीड़ों-मकोड़ों की तरह यों ही विलीन हो जाए।'

'नहीं, कृष्ण अमर हैं। गीता अक्षय है। हम लोग अमिट हैं। भगवान् की दया से, शंकर के प्रताप से मैं बताऊँगी कि अभी भारत में कितनी लौ शेष है। और यदि मैं इस प्रयत्न में मारी गई तो क्या होगा? कोई दूसरा तपस्वी मुझसे अच्छा खड़ा हो जाएगा और इस भूमि का उद्धार करेगा। तपस्या का क्रम कभी खंडित नहीं होगा।'

रानी फिर लेट गईं। निद्रा लाने की चेष्टा करने लगीं। इतने में पहरेवाली स्त्री-सैनिक ने द्वार के पास आकर खाँसा। रानी ने अनसुनी कर दी। वह फिर खाँसी। रानी बैठ गईं।

पूछा, 'क्या है?'

पहरेवाली भीतर आई।

उसने कहा, 'श्रीमंत सरकार, मोतीबाई दर्शन के लिए आई है। मैंने मना किया। नहीं मानी। हठ कर रही है। कहती है, आधी घड़ी का तुरंत समय दिया जाए। जैसी आज्ञा हो।'

रानी ने मोतीबाई को बुला लिया। पास में काठ की एक चौकी पड़ी थी। मोतीबाई से उसीपर बैठने को कहा। वह नहीं बैठी।

बोली, 'सरकार, इस चिट्ठी को पढ़ लें।'

मोतीबाई दीपक उठा लाई। चिट्ठी पर किसीके हस्ताक्षर नहीं थे। उसमें लिखा था—

'अब और नहीं सहा जाता। कब तक कलेजे में छुरी चुभोए रहें। उठो और धर्म के लिए कट मरो। थोड़े से विदेशियों ने विशाल देश को घेर रखा है। निकाल दो इन्हें। देश को स्वतंत्र करो। धर्म की रक्षा करो।'

रानी—'यह चिट्ठी कहाँ मिली?'

मोतीबाई—'इस प्रकार की कई चिट्ठियाँ छावनी में आई हैं। मुझको भरोसे के लोगों ने आज दिन में बताया था। इस चिट्ठी को सरदार तात्या साहब ने दिया है।'

रानी—'तात्या टोपे, कहाँ हैं? झाँसी कब आए?'

मोतीबाई—'संध्या के समय आए और प्रात:काल के पहले चले जाएँगे। वह इसी समय दर्शन करना चाहते हैं। बाहर खड़े हैं।'

रानी—'बाहरी कमरे में बिठाओ। मैं आती हूँ।'

रानी ने सफेद साड़ी पर एक मोटा सफेद दुशाला ओढ़ा और बाहरी कमरे में तात्या के पास पहुँचीं। मोतीबाई को रानी ने उसी कमरे में बिठा दिया।

रानी ने पूछा, 'इस चिट्ठी का क्या प्रयोजन? मुझको तो असमय जान पड़ती है।'

'हाँ बाईसाहब', तात्या ने उत्तर दिया, 'इसीलिए ले आया हूँ। मोतीबाई ने बताया कि इस प्रकार की चिट्ठियाँ यहाँ की छावनी में भी आई हैं। सिपाहियों में बेहद जोश फैला हुआ है, परंतु न तो अभी कोई व्यवस्था हो पाई है और न काफी संगठन हुआ है। समय के पहले यदि विस्फोट हो गया तो अनेक सिपाही व्यर्थ मारे जाएँगे। असफलता और निराशा देश को दबा लेगी और न जाने कितने समय के लिए यह देश विपदाग्रस्त हो जाएगा।'

रानी—'इसको रोकना चाहिए और संगठन शीघ्र कर लिया जाना चाहिए।'

तात्या—'रुपए-पैसे की कोई असुविधा नहीं रही। काफी समय तक लड़ाई चलाते रहने के लिए धन इकट्ठा हो गया है। बारूद का और शस्त्रों का बहुत अच्छा प्रबंध है। इसलिए जल्दी-से-जल्दी की जो तारीख हो सकती थी, नियुक्त कर ली गई। दिल्ली, लखनऊ इत्यादिवाले सहमत हैं। आपकी सहमति लेकर सवेरे के पहले रवाना हो जाऊँगा।'

'कौन सी तारीख?' रानी ने प्रसन्न होकर पूछा।

'इकतीस मई, रविवार, ग्यारह बजे दिन।' तात्या ने बताया।

रानी—'तीन-चार महीने हैं। मुझको यह तारीख पसंद है। देश भर में सब जगह एकसाथ?'

तात्या—'सब जगह एकसाथ। तब तक हम लोग चाहते हैं कि सिपाही और जनता, आत्म-नियंत्रण से काम लें।'



: २३ :

गरमी आ गई। सरोवरों में कमल खिल उठे। फसल भी कटकर घरों में आने लगी। स्वाधीनता युद्ध के दो चिह्न प्रकट हुए—एक कमल, दूसरा रोटी।

कमल के असंख्य फूल भारतवर्ष भर की छावनियों में फैल गए।

कमल फूलों का राजा है। सरस्वती की महानता, लक्ष्मी की विशालता उसके पराग और केसर में कहीं अदृष्ट रूप से निहित है। वह हिंदुस्तान की प्रकृति का, संस्कृति का मृदुल, मंजुल, मांगलिक और पावन प्रतीक है। उसका रंग हलका लाल है। वह बिलकुल रक्त नहीं है। हिंदुस्तान में होनेवाली क्रांति खूनी जरूर थी, परंतु इस खूनी क्रांति के गर्भ में मंजुलता और पावनता गड़ी हुई थी। इसीलिए सन् १८५७ की क्रांति का यह प्रतिबिंब चुना गया। क्रांति करेंगे—मानवीयता की रक्षा के लिए; क्रांति होगी —मानवीयता लिये हुए।

कमल के साथ रोटी भी चलती थी। एक गाँव से दूसरे गाँव एक रोटी भेजी जाती थी। दूसरे गाँव में फिर ताजा रोटी बनी और तीसरे गाँव भेज दी गई। हिंदुस्तान की वह क्रांति हिंदुस्तानियों की रोटी की रक्षा के लिए हुई थी। रोटी उस रक्षा के प्रयत्न का प्रतीक थी।

जिसने सोचा, उसने कल्पना का कमाल कर दिया! यह उपज हिंदुओं और मुसलमानों, दोनों की थी।

कमल और रोटी का दौरा समाप्त नहीं हुआ था कि छह मई को मेरठ में विस्फोट हो गया। बैरकपुर में इससे पहले ही एक उपद्रव हो चुका था।

मेरठ और दिल्ली की सम्मिलित हिंदुस्तानी फौज ने दिल्ली के लालकिले पर अधिकार कर लिया। बादशाह बहादुरशाह को भारत का सम्राट् घोषित किया और इक्कीस तोपों की सलामी दी। बादशाह ने क्रांति का नेतृत्व स्वीकार किया और उसने सबसे पहला जो काम किया, वह था गौ-वध कतई बंद कर देना।

मई के महीने में लगभग सारे उत्तर हिंद में क्रांति की आग भड़क उठी—किसी दिन कहीं और किसी दिन कहीं।



: २४ :

स्कीन, गार्डन, डनलप इत्यादि को झाँसी में मई की खबरें मिल गईं और रानी को उनसे पहले ही। रानी ने एक विशेष समय तक के लिए, लगभग सब आने-जानेवालों का महल आना बंद कर दिया। जो थोड़े लोग आते-जाते थे, उनमें एक मोतीबाई थी। उसीके द्वारा रानी सब महत्त्वपूर्ण समाचार लेती और देती थीं। मोतीबाई खुदाबख्श और रघुनाथसिंह के संपर्क में थी। वह इन लोगों को सब बातें भुगता देती थी।

रानी की दृढ़ सावधानी के कारण, झाँसी में असमय विस्फोट नहीं हो पाया।

चौथी जून को कानपुर में और उसी दिन झाँसी में क्रांति के लक्षण प्रकट हुए। एक हवलदार कुछ सैनिकों को लेकर कंपनी निर्मित छोटे से किले में, जो पुराने किले से एक मील शहर बाहर है और जिसे अंग्रेज लोग उसकी बनावट के कारण 'स्टार फोर्ट' (तारा-गढ़) कहते थे, घुस पड़ा और लड़ाई का सब सामान और रुपया-पैसा उठवाकर ले आया। डनलप कुछ सेना लेकर मुकाबले के लिए आया।

स्टार फोर्ट में कोई भी सामान न पाकर वह लौट गया। कमिश्नर को सूचना मिली। उसकी सलाह पर छावनी के सब अंग्रेज अपने बाल-बच्चे लेकर किले में जाने को तैयार हुए।

अब इन लोगों को रानी की, रानी के शौर्य की, उनकी योग्यता की और उनकी तेजस्विता की याद आई।

गार्डन कई अंग्रेजों को लेकर रानी के महल पर पहुँचा।

गार्डन ने कहलवाया, 'अभी हमको भरोसा है कि फौज में जो थोड़ी सी गड़बड़ हुई है, उसको दबा लेंगे, परंतु यदि कोई बड़ी विपदा आए तो आप हमारी सहायता करिएगा।'

रानी ने उत्तर दिलवाया, 'इस समय हमारे पास न काफी शस्त्र हैं और न लड़नेवाले आदमी। देश में उपद्रव फैल रहा है। यदि आप सहमत हों तो मैं अपनी और जनता की रक्षा के लिए एक अच्छी सेना भरती कर लूँ।'

गार्डन सहमत होकर चला आया।

दूसरे दिन छावनी में स्कीन, गार्डन और डनलप की बैठक हुई। उन लोगों को अब भी विश्वास था कि हिंदुस्तानी का व्यक्तिगत रूप से अपमान करना किसी भी नुकसान का कारण नहीं बनता। वे समझते थे कि सारी फौज में कुछ व्यक्ति नाराज हो सकते हैं, सब नहीं।

इसी भरोसे डनलप एक और अंग्रेज को साथ लेकर पलटन में पहुँचा। सिपाहियों ने, जिनमें रिसालदार काले खाँ सबसे आगे था, तुरंत डनलप को गोली से मार दिया।

अंग्रेजों में भगदड़ मच गई।

गार्डन अकेला रानी के पास दौड़ा गया। मुंदर के द्वारा बातचीत हुई।

गार्डन—'हम लोग पुरुष हैं। हमको अपनी चिंता नहीं। हमारी स्त्रियों और बच्चों को अपने महल में आश्रय दे दीजिए।'

मुंदर ने रानी को आगा-पीछा सुझाया, 'सरकार, इस आफत से दूर रहिए! फौज के लोग हमारे महल पर टूट पड़ेंगे।'

रानी ने धीरे, परंतु दृढ़ स्वर में मुंदर से कहा, 'हमारी लड़ाई अंग्रेज पुरुषों से है, उनके बाल-बच्चों से नहीं। यदि मैं सिपाहियों पर नियंत्रण न कर पाई तो उनका नेतृत्व क्या करूँगी? कह दो गार्डन से कि स्त्रियों और बालकों को तुरंत महल में भेज दे।'

मुंदर ने संवाद दे दिया।

गार्डन तुरंत स्त्रियों और बच्चों को छावनी से निकालकर शहर ले आया और उनको महल में दाखिल कर दिया। रानी ने उनको भोजन करवाया और ढाढ़स दिया।

परंतु स्कीन ने हठ किया, इसलिए ये सब महल से हटा लिये गए और किले में भेज दिए गए।

इस बीच में सिपाही छावनी को तहस-नहस करने में उलझे थे। फारिग होकर वे किले पर धावा करने के लिए बढ़े। गार्डन इत्यादि ने सब फाटक बंद कर लिये, लेकिन सिपाही बहुत थे। उनके पास तोपखाना था और किले में तोप न थी—युद्ध-सामग्री भी थोड़ी, खाने के लिए करीब-करीब कुछ नहीं।

नवाब अलीबाहदुर ने उसी समय पीरअली को भेजा और कहलवाया कि हुक्म हो तो ओरछा और दतिया से सेना बुला ली जाए।

अंग्रेज इतने भयभीत हो गए थे या इतनी हेकड़ी में थे कि उन्होंने जवाब दिया, 'कोई जरूरत नहीं है। छोटा सा बलवा है, दबा लेंगे।'

पीरअली ने नवाब साहब को वह उत्तर सुना दिया। खुदाबख्श मिल गया। उसको भी सुनाया। खुदाबख्श ने मोतीबाई को रानी के पास भेजा और स्वयं रघुनाथसिंह के पास चला गया।

मोतीबाई ने कहा, 'सरकार, अब समय आ गया है।' और खुदाबख्श की कही बात सुनाई।

रानी बोलीं, 'नियुक्त तारीख पर आरंभ न होने के कारण कार्यक्रम का रूप बदला गया है। तो भी, अपनी सेना तुरंत तैयार करने का प्रयत्न इसी समय किया जाना चाहिए। रघुनाथसिंह को समाचार दो कि कटीली से दीवान जवाहरसिंह को बुला लें और जितनी विश्वसनीय सेना इकट्ठी हो सके, आठ मील पर, रकसा के निकट जमा करें। घुड़सवार अधिक हों। जब तक मेरी आज्ञा न मिले, झाँसी की ओर न आएँ।'

मोतीबाई ने दीवान रघुनाथसिंह को आज्ञा सुना दी। वह खुदाबख्श को लेकर चला गया।

उस दिन सिपाही किले पर बराबर आक्रमण करते रहे। परंतु अंग्रेज उनको गोलियों की बौछार से पीछे हटाते रहे।

दूसरे दिन भी लड़ाई चलती रही। दोपहर के उपरांत अंग्रेजों के पास खाने के लिए एक दाना भी न रहा। किलेवाला महल दुबारा-तिबारा छाना कि कहीं कुछ रखा हो। वहाँ कुछ भी न मिला। शाम के बाद लड़ाई कुछ ढीली हुई। अंग्रेजों ने किसी प्रकार रानी के पास अपनी भूख का समाचार भेजा।

रानी ने दो मन रोटियाँ तत्काल बनवाईं। काशीबाई से कहा, 'तू इन रोटियों को किसी प्रकार अंग्रेजों के पास पहुँचा दे। तुझको सारे गुप्त मार्ग मालूम हैं, सुंदर और मुंदर को साथ ले जा और कोई न जाए। जहाँ मशाल की अटक पड़े, जला लेना।'

सहेलियाँ रानी की दया को जानती थीं, परंतु उसकी सीमा को नहीं देखा था।

काशी ने विनम्र एवं शांत स्वर में कहा, 'सरकार, यदि हम लोग इस परिस्थिति में पड़े होते तो क्या अंग्रेज लोग हमको दाना-पानी देते?'

रानी ने उत्तर दिया, 'अंग्रेजों जैसे बनकर हम अपने और उनके बीच के अंतर को क्यों मिटाएँ? और फिर इन लोगों को भूखे मारकर आगेवाले अनुष्ठान को कलुषित करना है।'

रानी मुसकराईं। काशी का हृदय आभासमय हो गया।

परंतु फिर भी उसने सवाल किया, 'कब तक आप इनको इस प्रकार खिलाएँगी?'

'जब तक मेरी निज की सेना तैयार नहीं हो जाती', रानी ने कहा, 'जब सेना तैयार हो जाएगी, मैं उन लोगों के हथियार रखवा लूँगी और कहीं सुरक्षित स्थान में कैद कर दूँगी।'

उन तीनों सहेलियों ने रोटियों के गट्ठर पीठ पर लादे और गुप्त मार्ग से होकर किले में ले गईं। गार्डन इत्यादि ने इन लोगों को प्रणाम किया। इनमें एक व्यक्ति मार्टिन नाम का था। मार्टिन ने सुरंग का रास्ता देख लिया। दूसरे दिन फिर ये तीनों किले में दो मन रोटियाँ दे आईं। मार्टिन चुपचाप पीछे-पीछे आया और गुप्तमार्ग से बाहर निकलकर आगरा चला गया। सहेलियों को या किसीको भी मालूम नहीं पड़ा।

उस दिन घोर युद्ध हुआ। गार्डन फाटक के ऊपर की खिड़की में से ताक-ताककर बंदूक का निशाना लगा रहा था और सिपाही उसके मारे हैरान हो रहे थे। उनको शहर का एक पुराना तीरंदाज मिल गया। उस तीरंदाज ने एक पत्थर की ओट लेकर गार्डन पर तीर छोड़ा। तीर गार्डन की गरदन को फोड़कर पार हो गया। गार्डन के मरते ही, समस्त अंग्रेजों में उदासी और निराशा छा गई।

उधर रिसालदार काले खाँ ने किले के उत्तर-पश्चिम कोने पर, जिसे शंकर-किला कहते हैं, भयानक दाब बोली और अपनी सेना की एक टुकड़ी सहित किले में घुस गया। अंग्रेजों ने देखा कि अब कोई बचाव नहीं, इसलिए उन्होंने सुलह की चर्चा छेड़ी। सिपाहियों ने रक्षा का आश्वासन दिया। स्कीन ने ८ जुलाई के सवेरे किले का सदर फाटक, जो दक्षिण की ओर है, खोला और कहा कि हमको सागर चले जाने दो।

सिपाहियों ने उन लोगों को कैद कर लिया। सिपाहियों का मुखिया रिसालदार काले खाँ छावनी चला गया।

थोड़ी देर में वहाँ जेल-दरोगा बख्शिशअली आया। उसकी आँखें लाल थीं और मुँह झुलसा हुआ। उसने अंग्रेजों की ओर देखा।

सिपाहियों से बोला, 'रिसालदार साहब रास्ते में मुझे मिले थे। हुक्म दे गए हैं कि इन सबको झोकनबाग ले चलो।'

सिपाही अंग्रेजों को झोकनबाग ले आए। वहाँ घोड़े पर सवार एक सिपाही आया। बख्शिशअली ने उसके कान में कुछ कहा। सवार हिचका।

बख्शिशअली बोला, 'भाइयो, यह जो स्कीन कमिश्नर खड़ा है, इसने मुझको जूतों की ठोकरों से पीटा था, अब क्या देखते हो ?'

सिपाही एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे।

बख्शिशअली—'और इसने जूतों की ठोलों से मुझको इतना मारा था कि मैं गिर पड़ा था। मारने से पहले इसने मुझको सुअर की गाली दी थी।'

स्कीन भयभीत खड़ा था। परंतु इस आरोप ने उसको जगा दिया। बोला, 'मैंने गाली कभी नहीं दी। मारा शायद हो, मगर याद नहीं आता। काम में गफलत करने पर कभी-कभी मारना ही पड़ता है।'

वह जो सवार आया था, उसकी ओर बख्शिशअली ने भयानक दृष्टि से देखा।

सवार ने कड़कड़ाती हुई आवाज में कहा, 'रिसालदार साहब ने इन सबके कत्ल का फरमान किया है।'

बख्शिशअली ने सबसे पहले स्कीन को मारा और फिर सब काट दिए गए। उस समय वहाँ सिवाय उन सिपाहियों के और कोई न था। कुछ क्षण उपरांत काले खाँ आया।

रिसालदार थोड़ी देर चुप रहा। सूर्य की किरणों में जलन बढ़ती चली जा रही थी। रिसालदार ने मुँह पर हाथ फेरा। माथा दबाया। थोड़ी देर खामोश रहा।

बोला, 'जो हुआ सो हुआ। आगे बिना हुक्म के कोई काम न करना। रानी साहब के महल पर चलो।'

वैसी ही तलवारें लिये सिपाही महल की ओर चल पड़े।

सिपाहियों में अनुशासन न था। घिन और गुस्सा मन को घेरे थे। अपनी विजय पर उनको पागलों जैसा हर्ष था।

रानी के महल पर वे पीछे पहुँचे, उनका शोरगुल पहले पहुँच गया। पहरेदार ने फाटक बंद कर लिये। सेना के कुछ सिपाही शहर को लूटने की बातचीत करने लगे। कवायद-परेड सीखे हुए वे सिपाही अच्छे नेता की कमी के कारण महज हुल्लड़ और भभ्भड़ की भूमिका करने लगे। कोई किसीकी नहीं सुन रहा था। हर एक आदमी अपना-अपना गुबार निकालने की धुन में था।

इतने में काले खाँ चिल्लाया, 'खलक खुदा का, मुलक बादशाह का, राज महारानी लक्ष्मीबाई का।'

सब सिपाहियों ने यही नारा लगाया। सिपाहियों की विचारधारा इसी नारे की ओर मुड़ गई—उस नारे ने अनुशासन की कमी को कुछ पूरा किया। खिड़की की झरप हटी। हाथ जोड़े हुए लक्ष्मीबाई दिखाई दीं। पीछे सशस्त्र सहेलियाँ।

बिलकुल गौर-बदन। गले में हीरों का कंठा। होंठ एक-दूसरे से सटे। सिपाहियों ने फिर नारा लगाया।

रानी ने नमस्कार किया। हाथ उठाकर चुप रहने का संकेत किया। भीड़ में सन्नाटा छा गया। रिसालदार आगे बढ़ा।

रानी ने तीव्र स्वर में पूछा, 'क्या है? तुम रिसालदार काले खाँ हो?' स्वर में तीव्रता होते हुए भी कंठ में प्राकृतिक सुरीलापन था।

काले खाँ ने सैनिक प्रणाम किया। बोला, 'हुजूर का ताबेदार काले खाँ रिसालदार, मैं ही हूँ।'

रानी ने अनर्निमेष दृष्टि से काले खाँ से आँख मिलाई। काले खाँ की आँख झरप गई। नीची हो गई। रानी ने कहा, 'इन तलवारों में रक्त कैसे लगा?'

काले खाँ ने बताया।

रानी बोलीं, 'इन्हीं कर्मों से स्वराज्य और बादशाही स्थापित करोगे? तुम लोगों ने घोर दुष्टकर्म किया है। तुम यह समझते हो कि संसार से सब नियम-संयम उठ गए?'

काले खाँ—'हुजूर...।'

रानी—'और अभी तुम लोगों में से कुछ झाँसी नगर को लूटने की भी चर्चा कर रहे थे। तुम अपने को इतना भूल गए। क्या तुम लोगों को यही सिखाया गया है?'

काले खाँ—'हुजूर के हुक्म के खिलाफ अगर अब कुछ हो तो हम सबको तोप से उड़ा दिया जाए। जो आज्ञा हो, उसका हम लोग पालन करेंगे।'

रानी—'तो मैं यह कहती हूँ कि छावनी को लौट जाओ। सोच-विचारकर संध्या तक आज्ञा दूँगी कि आगे तुम्हें क्या करना है।'

काले खाँ सिपाहियों से बातचीत करने लगा।

कुछ ने कहा, 'छावनी चलो।'

कुछ बोले, 'दिल्ली चलो। वहाँ मजा रहेगा।'

अंत में सिपाहियों ने निश्चय किया—'रानी साहब से रुपया लो और दिल्ली चल दो। रानी साहब रुपया न दें तो जितना शहर से वसूल करते बने, वसूल करके, झाँसी की रानी के हवाले करो और आगे बढ़ो।'

काले खाँ ने सिपाहियों का निर्णय रानी को सुना दिया। कहा, 'सरकार, सिपाही भूखे हैं।'

रानी परिस्थिति को समझ गईं। उन्होंने दूरदर्शिता से काम लिया।

बोलीं, 'अंग्रेजों ने मेरे पास रुपया नहीं छोड़ा। राज्य अंग्रेजों के अधीन रहा है। मैं कहाँ से रुपया लाऊँ?'

काले खाँ ने कहा, 'हम लोग मजबूर हैं। आप मालिक हैं। आपसे कुछ नहीं कह सकते। यदि यहाँ से रुपया नहीं मिलता है तो हम लोग शहर से उघाएँगे।'

रानी समझ गईं कि शहर लुटनेवाला है। उन्होंने गले से हीरों का कंठा उतारा और काले खाँ की अंजलि में डाल दिया।

बोलीं, 'इससे तुम्हारी सारी अटकें पूरी हो जाएँगी। मनुष्यों की तरह यहाँ से जाओ। कहीं लूटमार बिलकुल न करना, अदब के साथ दिल्ली पहुँचो। हिंदुओं को गंगा की और मुसलमानों को कुरान की सौगंध है।'

कुछ सिपाहियों ने रानी की नौकरी करनी चाही। परंतु बहुमत दिल्ली जाने के पक्ष में था। इसलिए लगभग सब दिल्ली चले गए, केवल थोड़े से रह गए। उनमें से एक लालता तोपची था।

सिपाहियों के चले जाने पर रानी ने रकसा से दीवान जवाहरसिंह इत्यादि को तुंरत ससैन्य बुलवाया। सिपाही फौजी सामान, तोपें इत्यादि अपने साथ दिल्ली ले गए।

: २५ :

रात में दीवान जवाहरसिंह ससैन्य आ गया। रानी ने आदेश भेजा कि नगर और किले का प्रबंध करो और कल दिन में मिलो।

दूसरे दिन महल में बहुत से लोग उपस्थित हुए। सेना और शासन से संबंध रखनेवाले सरदार, कर्मचारी, जागीरदार, जनता के साहूकार, मुखिया और पंच।

रानी परदे के पीछे बैठीं। कहा, 'कल कठिनाई के साथ मैंने नगर को लुटने से बचाया। विद्रोही तो यहाँ से चले गए, परंतु अव्यवस्था छोड़ गए हैं। डकैती और लूटमार बढ़ने का बहुत भय है। मैं चाहती हूँ जनता त्रस्त न होने पाए। इसीलिए मैंने झाँसी राज्य के पुराने जागीरदारों और सरदारों को कुछ सेना लेकर बुलवाया है, जिससे अव्यवस्था न रहने पाए। आप लोगों को और जनता के मुखिया-पंचों को सम्मति के लिए बुलवाया है। बताइए अब क्या करना चाहिए?'

गार्डन के सरिश्तेदार ने सलाह दी, 'बलवे की सूचना जबलपुर के कमिश्नर को देकर अंग्रेजों की ओर से रानी साहब शासन सँभालें।'

काछियों के मुखिया ने कहा, 'हमैं नईं चाउनें काऊ और कौ राज झाँसी में। करें राज तौ हमाई बाईसाहब, न करें तौ हमाई बाईसाहब।'

तेलियों के पंच ने मत प्रकट किया, 'हमें तो अपनौं पुरानौं राज लौटाउनैं, चाय थी इतै की उतै है जाय।'

प्रमुख साहूकार बोला, 'बाट जोहते-जोहते आँखें पथरा गईं। आज कितनी मानताओं के बाद यह दिन देखने को मिला। हम लोग तो अपना राज्य चाहते हैं।'

चमारों के मुखिया ने कहा, 'राज बाईसाब कौ और फिर बाईसाब कौ और हम सब बाईसाब के।'

मोरोपंत ने जनमत का समर्थन किया। एक लक्ष्मणराव पांडे नामक चतुर कांइया भी उसमें था।

वृद्ध नाना भोपटकर ने, जो अब भी काफी स्वस्थ था, कहा, 'हम लोग सरिश्तेदार साहब की सलाह पर भी विचार करेंगे। इस समय इतना तो अवश्य तय कर लेना चाहिए कि राज्य का सर्वांगीन शासन बाईसाहब के हाथ में रहे और सब लोग अपने को उनकी प्रजा मानकर दृढ़तापूर्वक अपने जीवन का निर्वाह करें।'

उपस्थित जनता ने हर्ष और उत्साह के साथ इस मत को स्वीकार किया।

रानी बोलीं, 'आप लोग जो भार मुझे दे रहे हैं, उसको मैं अपना गौरव मानती हूँ और परमात्मा की कृपा से उसको निभाऊँगी।'

लोगों ने जय-जयकार की।

गुलाम गौस खाँ तोपची हाथ बाँधकर खड़ा हो गया।

उसने कहा, 'श्रीमंत सरकार, मुझको मेरी पुरानी नौकरी मिलनी चाहिए।'

रानी उसको पहचानती थीं। बोलीं, 'तुम सदर तोपची नियुक्त किए जाते हो। सब तोपों को सँभालो। जो तोपें खराब कर दी गई हैं, उनको ठीक करो।'

'जो आज्ञा', गुलाम गौस खाँ ने गद्गद होकर कहा, 'एक विनय और है, साढ़े तीन साल से ऊपर हुए, एलिस किलेवाले महल में आया और हम लोगों के मन में आशा बँधी कि झाँसी के राज्य को लौटाने की चिट्ठी लाया होगा, तब मैंने तोपों में बारूद डाल दी थी—सलामी दागने के लिए। आज मुझको अपने मन की करने का हुक्म

दिया जाए।'

रानी ने सुरीले मधुर स्वर में कहा, 'अभी ऐसा क्या हो गया?'

गुलाम गौस—'हो गया है, सरकार! हमारे दिलों में हो गया है। दिलों के बाहर हो गया है।'

मोरोपंत—'हो गया है।'

लक्ष्मणराव—'हो गया है।'

नाना भोपटकर—'हो गया है।'

उपस्थित जनता ने उसीको दुहराया और जय-जयकार की।

रानी ने अनुमति दे दी।

गुलाम गौस ने थोड़ी देर में तोपों को सँभाला, जो चलने लायक थीं। उसने सलामी दाग दी।

जब भीड़ छँट गई, रानी ने एकांत में अपने सरदारों से विचार-विमर्श किया।

किले पर भगवा झंडा चढ़ा दिया गया। पदाधिकारी नियुक्त किए गए। लक्ष्मणराव प्रधानमंत्री, बख्शी और तोपें ढालनेवाला भाऊ, प्रधान सेनापति दीवान जवाहरसिंह, पैदल सेना के तीन कर्नल—एक दीवान रघुनाथसिंह, दूसरा मुहम्मद जमी खाँ, तीसरा खुदाबख्श। घुड़सवारों की प्रधान स्वयं रानी। कर्नल—सुंदर, मुंदर और काशीबाई। तोपखाने का प्रधान गुलाम गौस खाँ, नायब दीवान दूल्हाजू। न्यायाधीश नाना भोपटकर। मोरोपंत कमठाने के प्रधान। जासूसी विभाग मोतीबाई के हाथ में, नायब जूही।

पुलिस, माल विभाग, दान-धर्म विभाग इत्यादि के भी कर्मचारी नियुक्त कर दिए गए।

: २६ :

सब कर्मचारियों को अपने-अपने विभागों को दृढ़ता और सावधानी के साथ सँभालने और चलाने का आदेश रानी ने कर दिया।

सवेरे से ही रिसाले और पैदल पलटनों की कवायद और निशानेबाजी शुरू हो गई। समय पर बिगुल बजा और ठीक समय पर सब काम हुआ और होता रहा। सेना में लगभग सभी पुराने सिपाही आ गए। नई भरती भी बहुत हुई। सब जातियों और वर्गों के आदमी लिये गए। रानी की हिदायत थी कि सेना को सारे राज्य की जनता अपना समझे और यह तभी हो सकता था, जब सेना में सब जातियों के लोग रखे जाते।

झाँसी का राज्य लेने पर अंग्रेजों ने लगभग सब पुरानी तोपों को कीलें ठोंककर बेकार कर दिया था। इनमें से एक भवानीशंकर नाम की थी, जिसको सन् १७८१ में राजा उदेतसिंह के राज्यकाल में उस्ताद जयराम ने ढाला था। तोपों के ढालने के कारखानों को चालू करने का कार्य तुरंत शुरू कर दिया गया। गोले-गोलियाँ बनाने का, तलवारें, बंदूकें, पिस्तौलें इत्यादि तैयार करने का भी काम जारी हो गया। परंतु नए हथियारों का कारखानों से बनकर निकलना शीघ्र संपादित नहीं हो सकता था। इसलिए रानी ने, जहाँ मिले, पुराने हथियार इकट्ठे किए। जनता ने जी खोलकर रुपया दिया।

गुलाम गौस खाँ ने दो दिन में तोपों को ठीक कर लिया। कुछ तोपें गड़ी हुई पड़ी थीं। उनको भी सँभाल लिया।

यह अच्छा हुआ, क्योंकि राज्य को हाथ में लेने के ठीक पाँच दिन बाद (१३ जून की रात को) रानी को मोतीबाई ने खबर दी कि करेरा के किले पर सदाशिवराव नेवालकर ने हमला किया है और काफी सेना इकट्ठी कर ली है।

सदाशिवराव झाँसी की गद्दी का दावेदार था। झाँसी में ही रहता था। ३१ मई की हलचल की उसको खबर थी। वह अपनी लुढ़िया मारने के लिए झाँसी से निकल गया। गाँवों में लोग क्रांति के लिए तैयार थे ही, बहुत से मनचले नौजवान हथियार बाँधकर सदाशिव के साथ हो गए।

करेरा में थानेदार और तहसीलदार अंग्रेजों की ओर से नियुक्त थे। उनको सदाशिवराव ने मार भगाया। तुरंत अड़ोस-पड़ोस के जागीरदारों से रुपया वसूल किया और दो-एक दिन के भीतर ही अभिषेक करवा लिया। पदवी धारण की—महाराजा श्री सदाशिव नारायण! और प्रसिद्ध किया कि मैं ही झाँसी राज्य का सच्चा और सही अधिकारी हूँ। गाँव-गाँव में अपने 'महाराज' होने के घोषणा पत्र भिजवाए। जिसने उसको झाँसी का राजा न माना, उसकी तुरंत जायदाद जब्त कर ली। ऐसे सपाटे के साथ कदम बढ़ाया मानो दो-चार हफ्ते में ही सारे हिंदुस्तान का चक्रवर्ती हो जाएगा।

उसने समझा, झाँसी अनाथ है—एक महज अल्पवयस्क स्त्री के हाथ में है।

खबर पाते ही रानी ने तैयारी शुरू कर दी। नगर का प्रबंध मजबूत था ही। उत्तर, पूर्व और दक्षिण के भागों का शीघ्र संतोषजनक प्रबंध कर लिया। करेरा पश्चिम दिशा में था। गड़बड़ केवल इसी दिशा में 'महाराज' सदाशिव के कारण थी।

झाँसी की सेना अधकचरी थी, परंतु सेनापति चतुर और उत्साही थे। करेरा कूच करने के पहले तीनों सहेलियों से मुसकराकर रानी ने कहा, 'तुम तीनों कर्नलों की परीक्षा महाराज सदाशिव नारायण के सामने होगी।'

मुंदर बोली, 'यदि महाराजा साहब हमारे जनरल का नाम सुनते ही भाग गए तो?'

रानी हँसीं। जैसे मोतियों ने आभा बरसाई हो। काशी शांत प्रकृति की होते हुए भी बहुत हँसी।

रानी ने कहा, 'काशी, मैं बिलकुल पीछे रहूँगी। तुमको आगे जाकर लोहा लेना पड़ेगा।'

काशी बोली, 'बाईसाहब, उस समय तो आपका घोड़ा न मानेगा या आप न मानेंगी।'

रानी ने कूच कर दिया।

वह इतने वेग के साथ अपने घुड़सवारों को लेकर करेरा पहुँचीं कि 'महाराज' सदाशिवराव को लड़ने तक का मौका नहीं दिया।

रानी ने पहुँचते ही करेरा के किले को ऐसा घेरा कि सदाशिव ने मुश्किल से भागकर अपनी जान बचाई। सिंधिया के राज्य में, नरवर में जाकर दम लिया।

वहाँ से सदाशिव ने सिंधिया से सहायता की याचना की। ग्वालियर से थोड़ी सी सहायता आई, परंतु रानी ने सदाशिव को नरवर में घेर लिया और पकड़कर झाँसी ले आईं तथा झाँसी के किले में कैद कर दिया।



: २७ :

विंध्यखंड की समग्र जनता में सनसनी फैली हुई थी। यहाँ की जनता ने कभी किसी अत्याचारी का शासन आसानी के साथ नहीं माना। स्वाभिमान को आघात पहुँचा कि व्यक्ति ने सिर उठाया और हथियार हाथ में लिया। शायद भारत का यही खंड एक ऐसा है, जहाँ डाकू को 'बागी' कहते हैं।

विंध्यखंड छोटी-बड़ी रियासतों में बिखरा हुआ था। बस बड़ी रियासतें कंपनी सरकार का साथ दे रही थीं। बानपुर और शाहगढ़ साधारण राज्य थे। ये राज्य विप्लव में शामिल हुए।

रानी को इन दोनों राजाओं के स्वाधीनता-प्रिय विचारों का पता था। इन दोनों को उन्होंने स्वराज्य-स्थापना के संग्राम में भाग लेने के लिए पत्र भेजे। वे दोनों लड़ने के लिए उद्यत हो गए।

बानपुर राज्य के राजा मर्दनसिंह ने अपनी सेना को लेकर सागर जिले में प्रवेश किया।

शाहगढ़ का राजा बखतबली था। उसने भी विप्लव किया।

झाँसी के चारों ओर, दूर और पास, विप्लव और क्रांति तथा लूटमार मच गई। इस परिस्थिति में रानी लक्ष्मीबाई झाँसी में एक सुदृढ़ स्फटिक-सी थीं। झाँसी जिले में उन्होंने प्रबलता के साथ शांति स्थापित की।

उनकी दिनचर्या वैसे ही नियम-संयम के साथ चली जा रही थी। उनकी चर्या में केवल दो अंतर आए। एक तो वह सुबह के नित्य कृत्यों और पूजा-ध्यान के उपरांत राज्य के कर्मचारियों को मिलने और उनकी समस्याओं को सुनने के लिए समय देने लगीं, दूसरे ठीक तीन बजे के पश्चात् वह कचहरी करने लगीं। बड़े और महत्त्वपूर्ण मुकदमे वह स्वयं सुनती थीं और तुरंत निर्णय कर देती थीं। कभी-कभी दंड भी स्वयं अपने हाथ से देती थीं, परंतु केवल उन मामलों में, जिनमें किसीने बालक या स्त्री को सताया हो।

वह कचहरी में टोपी लगाकर बैठती थीं। भीतर लोहा, ऊपर लाल रेशमी टोपी झालरदार मोतियों और जवाहरों की। कंठ में हीरों की माला। सुडौल और भरे हुए वक्षस्थल कर कंचुकी, जो सुनहरी जरीदार कमरपेटी से कसी रहती थी। कभी साड़ी और कभी ढीला पैजामा पहनती थीं।

रानी के आसन के पास ही दीवान लक्ष्मणराव कागज, कलम-दवात लिये बैठता था।

आए-गए की उनको जबरदस्त याद रहती थी। नित्य का आनेवाला यदि एक दिन भी चूक जाए तो वह उसके आते ही गैरहाजिरी का कारण पूछती थीं, और समय की वह कठोर पाबंद थीं।

वर्षा का आरंभ विलंब से हुआ, परंतु प्रचंडता के साथ। फिर भी उनके कार्यों में शिथिलता न आई—घोड़े की सवारी करने से जरूर विवश थीं।

ऐसी ऋतु में प्रायः डकैती-बटमारी बंद हो जाती हैं, परंतु इन्हीं दिनों उनको सूचना मिली कि बरुआसागर के पास सागरसिंह—कुँवर सागरसिंह—डाकू ने लगातार कई डाके डाले हैं और बरुआसागर का थानेदार उसका कुछ नहीं कर पा रहा है। रानी ने तुरंत निश्चय किया। मोतीबाई द्वारा खुदाबख्श को बुलवाया।

आने पर खुदाबख्श से कहा कि 'सागरसिंह का शीघ्र दमन किया जाना चाहिए।'

खुदाबख्श ने हाथ जोड़कर स्वीकार किया।

रानी—'तुम इसी समय पच्चीस सिपाही लेकर बरुआसागर जाओ और सागरसिंह को जीवित या मृत ले आओ। उसकी दुष्टता के कारण बरुआसागर और उसका आस-पड़ोस त्रस्त और संतप्त हो उठा है। इस काम को कितने दिन में पूरा कर सकोगे?—एक महीने में?'

खुदाबख्श—'श्रीमंत सरकार, जितनी जल्दी हो सकेगा, उतनी जल्दी। केवल वर्षा की कठिनाई है।'

रानी—'परंतु सागरसिंह को वर्षा कोई विघ्न-बाधा नहीं पहुँचाती।'

खुदाबख्श—'सरकार...'

रानी—'कहो-कहो!'

खुदाबख्श—'सरकार, ये लोग कुछ ग्रामीणों से मिलकर बनियों-महाजनों को लूटते हैं और सघन जंगलों में भागकर छिप जाते हैं।'

रानी—'पानी बरसते घने जंगलों में वे सोते-खाते कहाँ होंगे? यदि तुम उन्हें उनके अड्डों पर ढूँढ़ो तो वे जंगलों में नहीं मिलेंगे; बल्कि अपने अड्डों पर मिलेंगे। कुछ और सिपाही चाहिए हों तो ले जाओ।'

खुदाबख्श—'नहीं सरकार, इतने ही बहुत हैं। यदि अटक पड़ेगी तो समाचार दूँगा।'

खुदाबख्श चला गया।

रानी ने अपनी सहेलियों से एकांत में सलाह की।

रानी ने प्रश्न किया, 'खूब बरसते पानी में घोड़ा दौड़ा सकोगी?'

मुंदर ने उत्तर दिया, 'दौड़ा लूँगी। अभ्यास तो किया है।'

'तुम, सुंदर और काशीबाई?' रानी ने पूछा।

उन दोनों ने भी हाँ भरी, परंतु काशीबाई की हाँ में कुछ दुर्बलता थी।

रानी ने मुसकराकर कहा, 'काशी हाल में कुछ अस्वस्थ रही है, इसलिए यह महल में ही रहेगी और यहाँ का कामकाज देखेगी। मेरी अनुपस्थिति का समाचार झाँसी से बाहर न जाने पाए। खुदाबख्श के बरुआसागर पहुँचने के बाद, किसी दिन हम लोग यहाँ से चलेंगे।'

खुदाबख्श उसी दिन चला गया। संध्या तक बरुआसागर पहुँचा। भीगा हुआ और भूखा, परंतु उसको मानसिक क्लेश कुछ न था।

जरा सुस्ताकर भोजन किया। थानेदार से सागरसिंह की गतिविधियों पर बातचीत की। खुदाबख्श झाँसी से यह खयाल लेकर आया था कि बरुआसागर का थानेदार किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया है; परंतु यह उसका भ्रम निकला। सागरसिंह बहुत चालाक और बड़ा साहसी था। उसके साथ उत्पातियों का काफी बड़ा गिरोह था। बरुआसागर का थाना प्रयास करने पर भी उसके कार्यक्रम में बहुत कम बाधा डाल पाता था।

सागरसिंह का घर रावली ग्राम में, बरुआसागर से पाँच-छह कोस की दूरी पर था; परंतु वह घर पर रहता बहुत कम था।

खुदाबख्श को बरुआसागर आकर अपने आसामी की विकटता का पता चला। और अधिक सिपाही मँगाने में नाक-सी कटती थी। समय केवल एक महीने का था। मोतीबाई की याद आई। अपने जादू से शायद वह कुछ कर डालती। तुरंत उसके मन ने इस कल्पना को धिक्कारा।

दूसरे दिन बादल जरा खुला। भरे-भरे साँवले-धुँधले बादल आते और चले जाते थे। एकाध फुहार छोड़ जाते। नदियाँ-नाले भरे, इठलाते हुए और सवेग। खुदाबख्श ने बरुआसागर के थानेदार, उसके सिपाहियों और अपने सिपाहियों को लेकर सवेरे ही रावली की ओर दौड़ कर दी। लुके-छिपे, भीगे और कीचड़ में लथपथ, बंदूकों को कपड़ों से ढके, जेबों में भुने चने और प्याज भरे—ये लोग दोपहरी में रावली के गेंबड़े पहुँच गए। खेतों में कोई काम नहीं हो रहा था, इसलिए मार्ग में किसीसे भेंट नहीं हुई। सब लोग गाँव में थे और पानी के खुलने की मना रहे थे। सागरसिंह भी घर पर था।

सागरसिंह का मकान ऊँची टौरिया पर था। सागरसिंह खाना खाने के बाद झपकी ले रहा था। झकोरों हवा चल रही थी और कभी–कभी फुहार पड़ जाती थी, इसलिए खुदाबख्श के दल का कोई शब्द नहीं सुनाई पड़ा।

जब तक गाँववाले सागरसिंह को सचेत करें कि खुदाबख्श ने सागरसिंह की हवेली घेर ली। उसको फाटक लगवा लेने का अवसर मिल गया। हवेली में उसके कुछ आदमी थे। वे सब जल्दी तैयार हो गए।

सागरसिंह को आश्चर्य था कि कुऋतु और कुसमय पर किसने घेरा डालने की हिम्मत की। दीवारों के तीरकशों में होकर उसने परख लिया कि घेरनेवालों के साथ तोपें नहीं हैं और वे केवल घर में घुसकर ही नुकसान पहुँचा सकते हैं। सोचा, शाम तक यों ही पड़ा रहने दूँ और देखता रहूँ। फिर उसको खयाल आया कि घेरनेवाले रानी के सिपाही होंगे और इनकी पीठ पर कुछ बल कहीं और लगा हो। इसलिए उसने तुरंत लड़ डालने की ठानी। वह जानता था कि घेरनेवाले अधिक समय तक बंदूक नहीं चला सकेंगे और वह स्वयं सूखी जगह में बैठकर, बहुत अच्छा और बड़ी देर तक लड़ सकेगा।

हवेली टौरिया की ठीक चोटी पर न थी, किंतु थी अधवारी से जरा ऊपर। खुदाबख्श ने इस स्थिति से लाभ उठाने का प्रयत्न किया, परंतु सागरसिंह की पहली बाढ़ ने ही खुदाबख्श के कई सिपाहियों को घायल कर दिया। खुदाबख्श ने भी तुरंत हवेली पर चढ़ जाने की आज्ञा दी और स्वयं आगे हो गया। जब तक सागरसिंह फिर बंदूकों को भरे, खुदाबख्श हवेली पर चढ़ गया और उसके कई साथी भी। सागरसिंह ने फिर बाढ़ दागी, परंतु खाली गई।

सागरसिंह ने समझ लिया कि अब गए। उसने तलवार हाथ में ली। खुदाबख्श और उसके साथी आँगन में कूद पड़े।

सागरसिंह से मुकाबला न हो सका। खुदाबख्श घायल होकर गिर पड़ा और सागरसिंह उसके साथियों को चीरता हुआ बाहर निकल गया, तब खुदाबख्श के अन्य सिपाही फाटक से होकर भीतर आ गए।

खुदाबख्श और उसके साथियों ने गाँव में टिकना ठीक नहीं समझा। खुदाबख्श बैलगाड़ी से रात होते बरुआसागर आ गया।

घाव बहुत गहरे न थे, परंतु थे कई, और खून काफी निकल चुका था। उसकी और उसके घायल सिपाहियों की मरहम–पट्टी की गई। रात में खुदाबख्श को बेहोशी रही।

सवेरे रानी के पास समाचार भेज दिया गया।



: २८ :

मेघ छाए हुए थे। हवा सन्न थी। पानी रिमझिम-रिमझिम बरस रहा था। महल के ऊपरी खंड के हवाई कमरे में रानी आँखें मूँदे हुए मोतीबाई का भजन सुन रही थीं, मुंदर जमुहा रही थी। सुंदर बैठे-बैठे सावधानी के साथ निद्रामग्न हो गई थी। काशी सचेत थी।

भजन की समाप्ति पर रानी का ध्यान टूटा, मुंदर की जमुहाई हटी। परंतु सुंदर की निद्रा-समाधि भंग न हुई।

रानी ने हँसकर कहा, 'सुंदर, देख यह भालू कहाँ से आ रहा है।'

सुंदर हड़बड़ा गई। भौंचक्की होकर बोली, 'कहाँ है, बाईसाहब ?'

'ढूँढ़ तो, पता लग जाएगा।' रानी ने कहा, 'साधारण भालू तो है नहीं।'

सुंदर लज्जित हो गई।

हाथ जोड़कर बोली, 'सरकार, दिन भर की थकी थी इसलिए अभी-अभी थोड़ी नींद आ गई।'

काशीबाई—'सरकार, आज दिन भर चक्की चलाती रही है, इसलिए बहुत थक गई है।'

सुंदर—'नहीं काशीबाई, चक्की नहीं चलाई तो और काम तो बहुत किया है।'

मुंदर—'तुम अकेली ने!'

उसी समय पहरेवाले ने निवेदन किया, 'बरुआसागर से एक सिपाही आवश्यक समाचार लाया है।'

रानी ने दूसरे कमरे में उसको बुलवाया। रानी का आदेश था कि आवश्यक समाचार के लिए समय-कुसमय न देखा जाए और उनको तुरंत सूचना दी जाया करे।

रानी सहेलियों के साथ दूसरे कमरे में गईं।

समाचार-वाहक ने कहा, 'सरकार, रावली के बागियों से सरदार खुदाबख्श की लड़ाई हुई। वे घायल हो गए हैं। सात सिपाही भी घायल हुए हैं। सरदार को तलवार के घाव लगे हैं और सिपाहियों को गोलियों के। भगवान् की कृपा से मरे कोई नहीं हैं। और न किसीके लिए इस तरह का भय है। सागरसिंह भाग गया है। लड़ाई रावली में सागरसिंह के घर पर हुई थी।'

मोती का चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने पूछा, 'रावली बरुआसागर से कितनी दूर है ?'

उसने उत्तर दिया, 'पाँच-छह कोस है, सरकार। जासूस ने पता दिया कि सागरसिंह अपने घर पर है। सरदार ने धावा बोल दिया।'

रानी—'खुदाबख्श को कहाँ चोट आई है और अब क्या हाल है ? लड़ाई को कितने दिन हो गए ?'

संदेशवाहक—'लड़ाई को आज चौथा दिन है। घाव बाँहों और जाँघों में हैं, सिर पर भी एक वार है। अच्छे हो रहे हैं। सिपाहियों के घाव अलबत्ता ज्यादा गहरे हैं।'

रानी—'तुमको समाचार लाने में इतना विलंब क्यों हुआ ?'

संदेशवाहक—'बेतवा इतनी चढ़ी हुई है कि नाव नहीं लग सकी। सरकार, आज दोपहर कुछ उतरी, तब आ पाया हूँ।'

रानी—'प्रबंध करती हूँ, तुम जाओ।'

रानी अपने कक्ष में लौट आईं।

रानी ने कहा, 'कल बरुआसागर चलना चाहिए।'

काशी बोली, 'सरकार न जाएँ। कुछ ठीक नहीं, किस समय जोर से पानी बरस पड़े, नदी चढ़ आवे। उस दिन जब आपने बरुआसागर जाने का निश्चय किया, मैं कुछ न कह सकी थी, परंतु आज तो मैं हठ करूँगी।'

रानी सोचने लगीं। उन्होंने मोतीबाई की उदासी देख ली और पहचान ली।

रानी—'तुम ठीक कहती हो, काशी। परंतु स्थिति की माँग हमपर प्रबल है। यदि कल पानी न बरसा तो अच्छे घोड़ों पर चल देंगे। हाथी भी जा सकता है, परंतु मैं इस समय प्रदर्शन बचाना चाहती हूँ और वह सवारी बहुत धीमी भी है।'

मोतीबाई—'सरकार को कुछ घुड़सवार साथ में ले लेने चाहिए।'

रानी—'लूँगी, दीवान रघुनाथसिंह को सवेरे सूचना दे देना।'

काशीबाई—'मैं भी चलूँगी।'

रानी—'चलना, मैं क्या रोकती हूँ?'

मोतीबाई—'आज्ञा हो तो मैं भी चलूँ।'

रानी—'नाव न लगी तो घोड़े पर नदी पार कर लेगी?'

मोतीबाई—'सरकार की सेवा में रहते, मुझको आग-पानी किसीका भी डर नहीं रहा।'

रानी ने स्वीकृत किया।

रात में पानी थोड़ा-थोड़ा बरसता रहा। सवेरे बादल खुला-सा दिखाई दिया। रानी सहेलियों समेत बरुआसागर की ओर चल दीं। पच्चीस घुड़सवार साथ में ले लिये और दीवान रघुनाथसिंह भी। शीघ्र ही घाट पर यह दस्ता पहुँच गया। देखें तो बेतवा दोनों पाट दाबे वेग से चली जा रही है।

ऊपर ज्यादा पानी बरस गया था, इसलिए बेतवा बेतहाशा इठला गई। हवा आँधी के रूप में चल रही थी। मल्लाहों के लिए नाव का लगाना असंभव था। अनेक घुड़सवारों के दिल टूटने लगे।

उस पार की पहाड़ियों का लहरियादार सिलसिला हरियाली से ढका हुआ था। बादल के सफेद-धूमरे टुकड़े पहाड़ियों की चोटी और हरियाली को चूमने के लिए नभ से उतर-उतरकर टकराते चले जा रहे थे। बेतवा का शोर आँधी का साथ पाकर तुमुल हो उठा।

रानी ने मुड़कर मोतीबाई की ओर देखा। वह उस पार की पहाड़ियों से टकराते हुए मेघखंडों पर दृष्टि जमाए थी।

रानी ने आज्ञा दी, 'कूद पड़ो।' और वे सबसे आगे घोड़े पर पानी में धँस गईं।

फिर क्या था, उनकी सहेलियाँ और सब घुड़सवार धार को चीरते दिखाई पड़ने लगे। रानी सबसे आगे।

बेतवा की धार पुंज के ऊपर पुंज-सी दिखाई पड़ती थी। क्रम अभंग और अनंत-सा। जब एक क्षण में ही अनेक बार एक जलपुंज दूसरे में संघर्ष खाता और एक-दूसरे से आगे निकल जाने का अनवरत, अथक, अटूट प्रयास करता तब इतना फेनिल हो जाता कि सारी नदी में फेन-ही-फेन दिखाई पड़ता था। झाग की इतनी बड़ी निरंतर बहती और उत्पन्न होती हुई राशियाँ आड़े आ जाती थीं कि घुड़सवारों को किनारा नहीं दिखाई पड़ पाता था।

लहरों के एक पल्लड़ को चीरा, उसपर झाग को वेधा कि दूसरा सामने। शब्दमय प्रवाह की निरर्थक भाषा मानो बार-बार कहती थी—बचो, बचो। सामने की उथल-पुथल से आगे बढ़े कि बगल से थपेड़ पड़ी। घोड़े आँखें फाड़े नथुनों से जल फुफकारते बढ़ रहे थे। वे अपना और अपने सवार का संकट समझ रहे थे। सवार के पैर घोड़े से चिपटे हुए और उनके पैरों के नीचे घोड़े की निस्तब्ध टाप। और टाप के नीचे, न जाने कितनी गहराई? सवारों के चारों ओर भँवरें पड़-पड़ जा रही थीं। एक भँवर बनी, पार की, कि दूसरी तुरंत मौजूद। परंतु अपनी रानी और

उनकी सहेलियों को आगे देखकर किस सिपाही के मन में अधिक समय तक भय ठहर सकता था?

रानी के घोड़े का केवल सिर ऊपर, शेष पानी और झाग में। रानी की कमर तक झाग, पानी और धार के साथ बहकर आया हुआ झाड़-झंकाड़। धार की बूँदों की झड़ी उछट-उछटकर आँखों में, बालों पर और सारे शरीर पर बरस रही थी। जब कभी सिपाहियों और सहेलियों को उत्साह देना होता तो हँस-हँसकर शाबाशी देतीं—मानो प्रचंड बेतवा की मलिन अंजलि में मुक्ता बरसा दिए हों। धूमरे बादलों के आगे एक ओर बगुलों की पाँत निकल गई—मानो पहाड़ियों और पहाड़ियों से मिलनेवाले बादलों को सफेद खौर लगा दी हो।

पहाड़ों की कंदराओं में घुसे हुए, उनको आच्छादित किए हुए बादलों में होकर यह बगुलावलि छिपती हुई-सी मालूम पड़ी और फिर तितर-बितर हुई, जैसे हिलती हुई साँवली-सलोनी चादर में टँके हुए सितारे। पहाड़ पर बड़े-बड़े और सघन पेड़। गहरे हरे, श्यामल। बगुले एक पेड़ पर जा बैठे—मानो वनदेवी ने प्रभा छिटका दी हो। उस विषम धार के पार, थोड़ी देर में किनारा दिखाई दिया।

रानी फिर हँसीं। बगुलों की सफेदी से रानी के दाँतों ने तुरंत होड़ लगा दी।

चिल्लाकर बोलीं, 'देखो किनारा आ गया! पड़ाव मार लिया!!'

थोड़ी देर में पूरा दस्ता नदी पार हो गया। सब भीग गए थे। परंतु पीठ पर कसे-ढके हुए हथियार लगभग सूखे थे। घोड़े ठिठुर गए थे।

घाट पर कपड़े सुखाने, बदलने और घोड़ों को आराम देने में थोड़ा सा समय लगा।

फिर दौड़ लगी और रानी बरुआसागर के किले में दोपहर के करीब पहुँच गईं।

बरुआसागर का किला विशाल झील के ठीक ऊपर है। झील में बरुआ नाम का बड़ा नाला गिरता है। झील को विशालता इस नाले ने ही दी है।

घायल सिपाही और खुदाबख्श इसी किले में ठहरे हुए थे।

रानी ने तुरंत इन सबको देखा। किसीके सिर पर हाथ फेरा, किसीकी मरहम-पट्टी की देखभाल की। सिपाही अपनी रानी के स्नेह को पाकर मुग्ध और गद्‌गद हो गए।

फिर खुदाबख्श के पास पहुँचीं। खुदाबख्श ने चारपाई से उठने का प्रयत्न किया, परंतु उठ न सका।

रानी को देखते ही उसके आँसू आ गए। चरण स्पर्श करने की कोशिश की।

रानी ने फिर सिर पर हाथ फेरा और चौकी पर बैठ गईं। सहेलियाँ खड़ी थीं। मोतीबाई सहेलियों के पीछे से खुदाबख्श को एकटक देख रही थी। खुदाबख्श ने भी उसको देख लिया, परंतु आँखें उसकी मोतीबाई की ओर न थीं।

खुदाबख्श ने रानी को सागरसिंह की लड़ाई का ब्योरेवार हाल सुनाया।

रानी—'कुछ पता चला सागरसिंह अब कहाँ चला गया है?'

खुदाबख्श—'सरकार, गाँववाले पता नहीं बताते। वे ही उसको शरण, भोजन इत्यादि सब देते हैं। इतना तो मालूम हो गया है कि वह पड़ोस के जंगल में है।'

रानी—'गाँववाले डाकुओं से डरते हैं। उनके पास निर्भय होने का कोई साधन नहीं है। अंग्रेजी राज्य ने पंचायतों का सर्वनाश कर दिया है, इसलिए गाँवों में परस्पर सहायता की प्रणाली उठ-सी गई है और उसने डाकुओं को सहायता देने का रूप पकड़ लिया है। देखूँगी, तुम चिंता मत करो।'

खुदाबख्श—'अब सरकार स्वयं यहाँ आ गई हैं। मुझको किस बात की चिंता? घाव लगभग अच्छे हो गए हैं। एकाध दिन में ठीक हुआ जाता हूँ। फिर देखता हूँ सागरसिंह को।'

रानी ने उससे विश्राम करने का हठ किया। मोतीबाई को खुदाबख्श के पास छोड़कर, किले के महलवाले हिस्से में चली गईं। स्नान-ध्यान में लग गईं।

अब मोतीबाई की आँखें तरल हुईं। रुद्धकंठ मुखरित होने के लिए आकुल हो गया। खुदाबख्श ने देख लिया।

बोला, 'यह क्या, आँखों में आँसू? आपको तो हर्ष और गर्व से हँसना चाहिए था। आपका कैदी, नहीं, आपकी सरकार का सिपाही, अपने मालिक के लिए कुछ तो कर सका।'

मोतीबाई ने आँखें पोंछकर कहा, 'क्या दर्द बहुत है?'

खुदाबख्श ने जवाब दिया, 'जरा भी नहीं। मालिक ने हाथ क्या फेरा, अमृत लुढ़का दिया। सच कहता हूँ, अभी उनकी आज्ञा हो तो घोड़े पर बैठकर उस अत्याचारी से दो हाथ करूँ।' फिर उसने करवट लेने की कोशिश की। जरा कष्ट हुआ।

एक आह को दबाकर बोला, 'जान पड़ता है कि श्रीमंत सरकार मेरे स्वस्थ होने तक नहीं ठहरेंगी।'

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से कहा, 'मैं भी उनके साथ जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आँखें मीच लीं। बोला, 'आप भी जाओगी।'

'क्यों? मुझे क्या हुआ? उनकी छाया में आदमी आँधी बन जाता है तो औरत क्या आदमी भी नहीं बन सकती?'

मोतीबाई को उसने 'रत्नावली' नाटक में रंगमंच पर रत्नावली का अभिनय करते देखा था। स्मरण हो आया। एक साथ कोमलता और प्रसूनों के चित्र आँखों में घूम गए। खुदाबख्श ने एक नि:श्वास लिया।

आँखें मूँदे ही बोला, 'मेरी मरहम-पट्टी के लिए रह जाना।'

मोतीबाई ने सस्नेह कहा, 'सरकार से कह देना, मैं खुशी से रह जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आँखें खोलीं, भृकुटी भंग की। जरा रुखाई के साथ बोला, 'श्रीमंत सरकार से भिक्षा माँगूँगा कि रत्नावली को सेवा-टहल के लिए दे दीजिए।'

मोतीबाई ने उसकी रुखाई की उपेक्षा की। कहा, 'रत्नावली कौन?'

खुदाबख्श को आश्चर्य हुआ। बोला, 'क्या मैंने रत्नावली कहा?'

मोतीबाई हँसी। उसकी हँसी में चमत्कार था। परंतु खुदाबख्श पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

मोतीबाई—'रत्नावली ही तो कहा। क्या कोई सपना देख रहे थे?'

खुदाबख्श—'वह सपना था। अब मीठा जागरण सामने है।'

मोतीबाई ने खुदाबख्श की आँखों में स्नेह को पकड़ने का प्रयत्न किया।

बोली, 'तब मैं खुद तो उनसे नहीं कह सकूँगी। वह सोचेंगी, मैं बहुत टुच्ची हूँ।'

'जी हाँ', खुदाबख्श ने जरा सा सिर उठाकर कहा, 'आप चाहती हैं, वह आपको बहादुर समझें और मुझे टुच्चा तथा निकम्मा।'

'मैंने यह तो नहीं कहा', मोतीबाई बोली, 'खुदा करे, आप जल्दी अच्छे हो जाएँ।' और वह वहाँ से चली गई।

ऊपर की छत को घेरे हुए किले की दीवार थी। दीवार में मुंडेरदार खिड़की। उसमें होकर मोतीबाई झील की लहरों को परखने लगी और रोने लगी।

नियंत्रण करके वह अपने काम में लग गई।



: २१ :

संध्या के पहले बरुआसागर के मुखिया और पंच रानी से मिलने के लिए आए। नजर न्योछावर हुई। रानी ने सबसे कुशल-क्षेम की वार्त्ता की।

जब एकांत पाया, थानेदार ने रानी को सागरसिंह के विषय में सूचना दी। मालूम हुआ कि खिसनी के जंगल में आश्रय पाए है। खिसनी का जंगल बरुआसागर से बारह मील था। थानेदार को उन्होंने आदेश दिया, 'सवेरे आठ बजे तैयार रहना। किसीको मालूम न होने पाए।'

सवेरे सब तैयार हो गए।

ठीक समय पर उन्होंने मोतीबाई को बुलाकर कहा, 'तुम यहीं रहो। खुदाबख्श की मरहम-पट्टी और देखभाल करना।'

मोतीबाई ने पलकें नीची कर लीं और बोली, 'मैं तो सरकार की सेवा में चलूँगी। क्या किसीने प्रार्थना की है ?'

'नहीं, मैं ही कह रही हूँ।' रानी ने उत्तर दिया।

मोतीबाई ने चलने का हठ किया। उसकी अन्य सहेलियों ने भी अनुरोध किया। रानी मान गईं।

रानी अपनी और बरुआसागर के थाने की टुकड़ी को लिये हुए चल दीं। उन्होंने इस टुकड़ी के दो भाग किए। एक को दीवान रघुनाथसिंह की अधीनता में रावली की ओर रवाना किया और दूसरी को स्वयं लेकर खिसनी के जंगल की ओर चल दीं।

दीवान रघुनाथसिंह ने सागरसिंह की हवेली घेर ली। एक गाँववाले से कहलवा भेजा, 'हथियार डालकर मेरे पास आ जाओ। रानी साहब कुछ रियायत कर देंगी, नहीं तो हवेली की ईंट-से-ईंट बजा दूँगा।'

गाँववाले ने कहा, 'कुँवर सागरसिंह हवेली में नहीं हैं।'

रघुनाथसिंह—'तब तो हवेली को पटक देने में और भी सुभीता रहेगा।'

परंतु जब उसको निश्चय हो गया कि सागरसिंह हवेली में नहीं है, उसने रानी के पास संदेशा खिसनी की ओर भेज दिया। खुद हवेली का घेरा डाले रहा।

रानी जब जंगल को घेरने की योजना तैयार कर रही थीं, तब उनको यह संदेशा मिला। उनका मन कह रहा था कि सागरसिंह इसी डाँग में है।

जासूस ने घंटे भर के भीतर सूचना दी, 'दो पहाड़ियों की दून के सिरे पर एक बड़ी सी पर्णकुटी में बागी खाने-पीने की तार में लगे हुए हैं। उनके पास घोड़े हैं।'

रानी ने दोनों पहाड़ियों की ऊँचाइयाँ बंदूकवालों से घिरवा लीं और दून के सिरे पर भी कुछ आदमी भेज दिए। स्वयं तीनों सहेलियों और मोतीबाई के साथ दून के निकास पर, दो कतारों में ओट लेकर घोड़ों समेत ठहर गईं।

उनकी आज्ञा थी कि ऊपरवाले सिपाही धीरे-धीरे दून के ढाल की ओर बढ़ें और जब डाकुओं के जरा निकट आ जाएँ तब बंदूक की बाढ़ दागें।

ऐसा ही किया गया।

डाकू बेहद हड़बड़ा गए। खाना-पीना और साज-सामान छोड़कर, घोड़ों की नंगी पीठ पर सवार हुए दून के निकास की ओर भागे।

ऊपर तीन ओर से बंदूकें चल रही थीं, परंतु डाकुओं का एक आदमी भी घायल तक नहीं हुआ।

निकास पर पहुँचते ही उनके ऊपर सामने से पाँच बंदूकें चलीं। घोड़े मरे, डाकू घायल हुए। उन लोगों ने बंदूकों से जवाब दिया, परंतु रानी का दल आड़ लिये हुए था। इसलिए कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

डाकू सिर पर पैर रखकर इधर-उधर भागे।

काशी, सुंदर और मोतीबाई ने अलग-अलग पीछा किया।

रानी और मुंदर के पास से जो डाकू घोड़े पर सवार जरा पीछे निकला, वह सतर्क था। नंगी तलवार हाथ में, गले में सोने का जेवर। वस्त्र भी उसके अच्छे थे। जो वर्णन उनको सागरसिंह का मिला था, उससे इस डाकू-सवार की हुलिया मिलती थी। रानी ने निर्णय किया कि यही सागरसिंह है। रानी ने मुंदर को मुसकराकर इशारा किया। मुंदर ने होंठ दाबे और सपाटे के साथ उसपर टूटी। रानी दूसरी बगल से। सागरसिंह ने घोड़ा तेज किया। इन दोनों ने पीछा किया। जब तक मार्ग ऊबड़-खाबड़ रहा, सागरसिंह बचता हुआ चला गया। जब मार्ग कुछ समतल आया, जमीन मुलायम और कीचड़वाली मिली, सागरसिंह का घोड़ा अटकने लगा। रानी और मुंदर के घोड़े बहुत प्रबल थे—दोनों काठियावाड़ी। सागरसिंह को एक ओर से मुंदर ने दबाया और दूसरी ओर से रानी ने।

रानी गले में हीरों का दमदमाता हुआ कंठा डाले थीं। उनको देखते ही सागरसिंह समझ गया कि जिस रानी के विषय में बहुत सुना करते थे, वह स्वयं आज, इसी क्षण, उसके प्राणों की गाहक बनकर आ कूदी है।

आत्मरक्षा के भाव से प्रेरित होकर उसने रानी पर वार किया। तुरंत मुंदर ने चपल गति से अपनी तलवार उसपर ढाई। वार ओछा पड़ा, घोड़े की पीठ पर। उधर रानी ने घोड़े को फुरती के साथ जरा सा रोका। वह कुछ अंगुल पीछे हुईं और सागरसिंह का वार उनसे आगे खिंच गया। रानी ने अपनी तलवार ऐसी कसी कि सागरसिंह की तलवार के दो टुकड़े हो गए। उसने अपने घोड़े को बहुत खींचा और दाबा, परंतु उसकी पीठ कट चुकी थी। मुंदर ने सागरसिंह की गरदन को ताककर तलवार उबारी कि रानी ने तुरंत कहा, 'जीवित पकड़ना है।' और रानी ने इस तरकीब से अपना घोड़ा सागरसिंह की बराबरी पर किया कि वह सट गया। रानी ने सागरसिंह की कमर में अपना हाथ डाला। मुंदर समझ गई कि क्या करना है। दूसरी ओर से उसने अपना हाथ उसकी कमर में लपेट दिया और झटका देकर घोड़े पर से उठा लिया। घोड़ा पीछे रह गया। सागरसिंह ने इस वज्रपाश में से निकलने, खिसकने की बहुत कोशिश की, परंतु वह सफल न हो सका। उसने अपने दाँतों को काम में लाने का प्रयत्न किया। रानी ने कहा, 'सावधान, यदि मुँह खोला तो तलवार ठूँस दूँगी।'

सागरसिंह को रानी और मुंदर के बल की प्रतीति हो गई और उसने अपनी रक्षा को अपने भाग्य के हवाले कर दिया। थोड़ी दूर चलने पर रानी के दस्ते के लोग सिमट आए। सागरसिंह उस वज्रपाश में से निकला और रस्सियों से बाँध लिया गया। घोड़े पर लादकर यह टुकड़ी एक जगह ठहर गई। मोतीबाई, काशी और मुंदर की बाट देखने लगी। रानी ने बिगुल बजवाया। वे तीनों थोड़ी देर में उस स्थल पर आ गईं। मालूम हुआ कि बाकी डाकू निकल भागे। दीवान रघुनाथसिंह को समाचार देकर रानी बरुआसागर चली आईं। उन्होंने कहा, 'ये भागे हुए डाकू इस समय हाथ नहीं लगेंगे। समय काफी हो चुका है। बरुआसागर संध्या के पहले पहुँच जाना चाहिए।'

रानी संध्या के पहले ही बरुआसागर पहुँच गईं। सागरसिंह सख्त पहरे में रख दिया गया। रात होने के पहले रघुनाथसिंह अपने दल समेत आ गया।

रानी की बुद्धि और विकट वीरता की घर-घर महिमा बखानी जाने लगी। दूसरे दिन गाँव-गाँव में चर्चा फैल गई।

समय पर सागरसिंह रानी के सामने पेश किया गया। उसने प्रणाम किया और पैर छूने के लिए हाथ बढ़ाने चाहे। पहरेवालों ने रोक लिया।

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा नाम?'

उसने उत्तर दिया, 'कुँवर सागरसिंह, श्रीमंत सरकार।'

रानी ने कहा, 'कुँवर होकर यह निकृष्ट आचरण कैसा?'

रानी मुसकराईं। सागरसिंह उस मुसकराहट से काँप गया।

सागरसिंह बोला, 'सरकार, हमारा वंश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराज ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रसाल की सेवा में रहकर युद्ध किए। जब अंग्रेज आए तब उनकी अधीनता जिन ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुए और डाके डालने लगे। मैं अपने लिए और अपने साथियों के लिए गंगाजी की शपथ लेकर कह सकता हूँ कि हम लोगों ने स्त्रियों और दीन-दरिद्रों को कभी नहीं सताया।'

रानी ने कहा, 'इन दिनों जिन लोगों पर तुमने डाके डाले, वे सब मेरी प्रजा हैं, अंग्रेजों की नहीं। डाके के लिए दंड प्राणों का है, तैयार हो जाओ। तुम्हारे साथी भी न बचेंगे, और न तुम्हारे और उनके घर। सब मिट्टी में मिलवा दूँगी।'

सागरसिंह ने कनखियों से रानी को देखा। उसने इतनी बड़ी, ऐसी करारी और प्रभापूर्ण आँखें न देखी थीं। उसको ऐसा लगा मानो साक्षात् दुर्गा सामने खड़ी हैं।

सागरसिंह बोला, 'सरकार, मैं कुछ प्रार्थना कर सकता हूँ?'

रानी ने अनुमति दी।

सागरसिंह ने प्रार्थना की, 'मुझको प्राणदंड गोली या तलवार से दिया जाए, फाँसी से नहीं। यदि फाँसी दी गई तो मेरा और जाति भर का अपमान होगा। बागी बढ़ जाएँगे, घटेंगे नहीं सरकार।'

रानी—'तुमको यदि छोड़ दूँ तो क्या करोगे?'

सागरसिंह—'श्रीमंत सरकार के सामने झूठ नहीं बोलूँगा। यदि काम न मिला तो फिर डाके डालूँगा, परंतु सरकार के राज्य में नहीं।'

रानी—'यदि मैं कहूँ कि तुम डाके बिलकुल न डालो तो इसके बदले में क्या चाहोगे?'

सागरसिंह—'सरकार के चरणों की नौकरी, जहाँ रहकर लड़ाई में कल की अपेक्षा अधिक पराक्रम दिखला सकूँगा।'

रानी—'तुम्हारे साथी कितने हैं?'

सागरसिंह—'जंगल में पंद्रह-सोलह थे। गाँव में साठ-पैंसठ हैं और अदृष्ट सहायक मेरे सब नातेदार।'

रानी—'वे लोग क्या करेंगे?'

सागरसिंह—'सरकार की आज्ञा हुई तो सरकार की सेना में मेरे साथ नौकरी।'

रानी—'यदि मैंने आज्ञा न दी तो?'

सागरसिंह—'सरकार के राज्य के सिवाय और सब जगह उनकी बगावत का अधिकार क्षेत्र चाहूँगा।'

रानी—'तुमको मैं इसी समय छोड़ दूँ तो सीधे कहाँ जाओगे?'

सागरसिंह—'सरकार, झाँसी।'

रानी—'तुम सबसे बड़ी सौगंध किसकी मानते हो?'

सागरसिंह—'गंगाजी की, सरकार के चरणों की, अपनी तलवार की।'

रानी—'मैं तुमको छोड़ती हूँ, सागरसिंह! सौगंध खाओ और अपने साथियों सहित झाँसी की सेना में भरती हो जाओ।'

सागरसिंह ने सौगंध खाई। रानी ने उसको छोड़ दिया। वह उनके पैरों में गिर पड़ा। हाथ जोड़कर बोला, 'सरकार, मैं झाँसी चलूँगा। वहाँ सेना में भरती होने के उपरांत घर लौटूँगा और अपने साथियों को बटोरकर झाँसी ले आऊँगा। फिर उन सबको भरती कराऊँगा।'

'नहीं सागरसिंह', रानी ने कहा, 'मैं बरुआसागर तब छोड़ूँगी जब तुम्हारे सब साथी मेरे सामने आ जाएँ और सौगंध खा जाएँ। नहीं तो मैं उनको पकड़ूँगी और दंड दूँगी।'

'मेरा नाम कुँवर सागरसिंह नहीं, जो मैंने सरकार के सामने सबको पेश न किया।' सागरसिंह ने दंभ को दबाते हुए कहा।

आँखों में झेंप थी।

रानी जरा हँसीं और सोचने लगीं।

बोलीं, 'तुमको कुँवर शब्द से संबोधन करने के पहले, मेरा एक और सामंत इस पदवी के पाने का पात्र है। वही जो तुमको पकड़ने के लिए तुम्हारी हवेली में पहुँच गया था और जिसको तुमने घायल कर दिया था।'

सागरसिंह बोला, 'सरकार, उस दिन यदि मैं उस सामंत को घायल न कर पाया होता तो मैं किसी प्रकार भी न बच पाता।'

रानी—'वह यहीं है। अभी अस्वस्थ है।'

सागरसिंह—'मैं उसके दर्शन करना चाहता हूँ। क्षमा माँगूँगा।'

रानी ने खुदाबख्श की कुशल वार्त्ता मँगवाई। वह एक सिपाही का सहारा लेकर आ गया। सागरसिंह ने उसको अभिवादन किया।

रानी ने कहा, 'क्या हाल है ?'

खुदाबख्श ने उत्तर दिया, 'इतने बड़े स्वामी की दया होते हुए हाल बुरा हो ही नहीं सकता। जिस समय सरकार के पराक्रम की बात मालूम हुई, उसी समय दुःख-दर्द एक स्वप्न-सा हो गया।'

रानी ने कहा, 'तुमने सुन लिया होगा कि मैंने अपराधी को छोड़ दिया।'

खुदाबख्श बोला, 'मैंने सरकार की दया का सब हाल सुन लिया।'

रानी ने कहा, 'आज से तुम कुँवर खुदाबख्श कहलाओगे और यह कुँवर सागरसिंह। जितने लोग अनोखी शूरवीरी के काम करेंगे, वे सब कुँवर कहलाएँगे और उनका वर्ग 'कुँवर मंडली' के नाम से राज्य के कागज-पत्रों में संबोधित होगा।'

खुदाबख्श गद्गद हो गया। पैर छुए और बोला, 'सरकार, कुँवर मंडली का नाम सच्चा तब होगा जब आपके कदमों की सेवा करते हुए हम सबके सिर कटें।'

रानी ने कहा, 'जाओ कुँवर खुदाबख्श, आराम करो।'

खुदाबख्श बोला, 'माता का आशीर्वाद मिल गया, अब आराम-ही-आराम है।'

'सागरसिंह', रानी ने कहा, 'तुम्हारा नाम हमारे कागजों में कुँवर युक्त लिखा जाएगा, परंतु मुझको बराबर कुँवर, राव, दीवान इत्यादि कहने में अड़चन जान पड़ती है। क्या बुरा मानोगे ?'

सागरसिंह का गला रुद्ध हो गया। जिस मनुष्य ने एक दीर्घ समय डकैती और बटमारी में बिताया था, उसको जान पड़ा, मेरे भीतर कुछ पवित्र भी है।

हाथ जोड़कर बोला, 'नहीं सरकार, कभी नहीं। यदि मेरा आधा नाम ही लिया जाएगा तो बहुत है। मुझको क्षमा किया जाए।'

कुँवर रघुनाथसिंह ने कहा, 'जब हम लोग पूरे कुँवर की पदवी पर पहुँच जाएँगे तब हमारा नाम आधा लिया जाएगा।'



: ३० :

बरुआसागर में रानी कुल पंद्रह दिन रहीं। सागरसिंह का पूरा गिरोह हथियार डालकर उनकी शरण में आ गया और सेना में भरती हो गया।

खुदाबख्श चंगा तो उसी दिन से हो चला था, अब स्वस्थ हो गया। रानी ससैन्य झाँसी लौट आईं। लोगों की छाती रानी के पराक्रम से उमग उठी।

नवाब अलीबहादुर रानी को बधाई देने आए। इत्र-पान लेकर चले गए। कम-से-कम मोतीबाई को उनकी बधाई की सचाई में विश्वास नहीं था।

अलीबहादुर और पीरअली में सलाह हुई।

अलीबहादुर—'पीरअली, यह वही सागरसिंह है, जो झाँसी की जेल तोड़कर भागा था। रानी ने उसको ही नहीं, बल्कि उसके सारे गिरोही डाकुओं को फौज में भरती कर लिया है। यह सब सरकार बहादुर के खिलाफ तैयारी का सबूत है।'

पीरअली—'और हुजूर बुरा यह कि उनके नए-पुराने कामदार, अंग्रेज सरकार को इस धोखे में रखना चाहते हैं कि झाँसी का राज नवाब गर्वनर जनरल बहादुर की तरफ से किया जा रहा है और रानी साहब तो केवल मुंतजिम हैं।'

अलीबहादुर—'इसकी इत्तला जबलपुर पहुँचानी चाहिए, जैसे हो तैसे।'

पीरअली—'हुजूर का हुक्म हो तो मैं चला जाऊँ। मगर मेरे जाने से शक हो जाएगा।'

अलीबहादुर—'माल का सरिश्तेदार रानी के बुरे सलूक की वजह से नाराज है। इस काम के करने के लिए तैयार हो जाएगा। अगर जाए तो खर्चा मैं दे दूँगा।'

पीरअली—'मैं कहूँगा। वे मान जाएँगे। उनको टीकमगढ़ होकर भेजा जाए। वहाँ से दीवान नत्थे खाँ की चिट्ठी और उनके कुछ आदमियों को साथ लेते जाएँ, क्योंकि रास्ते में खतरा है।'

दूत टीकमगढ़ गया। वहाँ का राजा अल्पवयस्क था। नत्थे खाँ दीवान था। उसने झाँसी पर चढ़ाई का निश्चय किया और सेना लेकर झाँसी के निकट, राज्य की पुरानी राजधानी ओरछा में आ गया। तीसरे सितंबर को सवेरे ही उसने रानी के पास अपना दूत भेजा।

❑

: ३१ :

नत्थे खाँ के दूत ने जो संदेशा दिया, उसका सार यह था कि झाँसी पहले ओरछा का अंश था, वह अनुचित प्रकार से ओरछा से काट दिया गया, अब ओरछा को वापस मिलना चाहिए। अंग्रेज जो पाँच सहस्र मासिक वृत्ति रानी साहब को देते थे, उन्हें ज्यों-की-त्यों मिलती रहेगी। किला, नगर और शस्त्र हमारे हवाले कर दो।

नगर में समाचार फैलते देर न लगी। नई बस्ती से, जहाँ अलीबहादुर का निवास था, खबर फैली कि नत्थे खाँ फौज लेकर आ भी गया है, शहर में चारों ओर घेरा पड़ गया है। लोग घबरा गए।

मोतीबाई ने रानी को समाचार दिया, 'नत्थे खाँ बीस सहस्र सेना और अनेक तोपें लेकर ओरछा से कूच करनेवाला है।'

रानी ने पूछा, 'वह ओरछा में आया कब?'

'कल आया था', मोतीबाई ने उत्तर दिया।

रानी ने कर्मचारियों से विचार-विमर्श किया। झाँसी में तैयारी न थी। सब कर्मचारी घबराहट में थे।

अकेली रानी धैर्य धारण किए थीं। उन्होंने कहा, 'राजनीति की आप लोग जानो। युद्ध संचालन मैं करती हूँ। नत्थे खाँ को भागने के लिए कठिनता से गली मिलेगी।'

नाना भोपटकर ने अनुरोध किया, 'सरकार विजय की मूर्ति हैं। हमको युद्ध के अंतिम परिणाम के विषय में कोई संदेह नहीं। यदि सरकार को मेरी राजनीति में विश्वास है तो मेरी एक प्रार्थना मान ली जाए।'

रानी ने स्वीकार किया।

भोपटकर ने कहा, 'हमारे यहाँ अंग्रेजी झंडा, यूनियन जैक रखा हुआ है। अपने झंडे के साथ हम उसको भी खड़ा करेंगे। किले में जो अंग्रेज बंद हो गए थे, उनमें से मार्टिन नाम का व्यक्ति, फौजवालों के हाथ से भाग निकला था। वह आगरा में है। एक चिट्ठी मैं उसको इस प्रकार की लिखूँगा कि हम लोग नत्थे खाँ के विरुद्ध अंग्रेजों की ओर से लड़ रहे हैं। मेरी राजनीति को इस चिट्ठी से सहायता मिलेगी।'

रानी बोलीं, 'परंतु यह राजनीति चलेगी कितने दिन? हमको अंत में, सारे देश में स्वराज्य स्थापित करना है। यूनियन जैक झंडे के नीचे स्वराज्य की स्थापना असंभव है। चिट्ठी चाहे जिसको मनमानी लिखो, परंतु झंडा तो चिट्ठी से बहुत बड़ा होता है।'

'सरकार', भोपटकर ने कहा, 'चिट्ठी और झंडे का सामंजस्य है। हम कुछ समय तक अपने आदर्श को ढका-मुँदा रखना चाहते हैं। यदि स्वराज्य का प्रयत्न देश भर में ३१ मई को एकसाथ ही हो गया होता तो राजनीति की दिशा कुछ और होती, परंतु अब उसमें परिवर्तन आवश्यक है।'

लालाभाऊ बख्शी बोला, 'सरकार दिखाने के दाँत कुछ और खाने के कुछ और। भोपटकर साहब का यही तात्पर्य है।'

रानी मुसकराईं। दरबारियों ने समझ लिया कि उन्होंने कोई दृढ़ निश्चय कर लिया है।

'नाना की बात को मैं टाल नहीं सकती हूँ', रानी ने कहा, 'परंतु गेरुआ झंडा सबसे ऊपर की बुर्ज पर रहेगा और अंग्रेजों का झंडा चाहे जहाँ, नीचे की बुर्ज पर लगा लो।'

मंत्रिमंडल ने स्वीकार किया।

रानी बोलीं, 'लाला भाऊ, तोपों का तुरंत प्रबंध करो। जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह इत्यादि को सावधान करो। सब

फाटक बंद करके फाटकों के बुर्जों पर गोला-बारूद इसी समय जमा करो। नत्थे खाँ कई ओर से आक्रमण करेगा। किले पर बड़ी तोपें चढ़ी हैं?'

भाऊ ने उत्तर दिया, 'सरकार, केवल 'कड़क बिजली' नीचे रखी है। उसको अभी चढ़वाता हूँ और सरकार की अन्य आज्ञाओं का पालन करता हूँ। दीवान जवाहरसिंह यहीं हैं, परंतु दीवान रघुनाथसिंह उन्नाव की ओर गए हुए हैं।'

रानी—'तुरंत बुलाओ।'

भाऊ—'जो आज्ञा, सरकार।'

रानी—'बरुआसागरवाला सागरसिंह कहाँ है?'

भाऊ—'करेरा की ओर गए हुए हैं।'

रानी—'वहाँ से बुलवाओ। सेना हमारे पास बहुत थोड़ी है। यदि नत्थे खाँ वास्तव में बीस सहस्र सेना लेकर आ रहा है तो कड़ा सामना पड़ेगा, परंतु चिंता मत करो। हमारे पास किला है, बुर्ज और तोपें हैं, और गोलंदाज अच्छे हैं।'

भाऊ—'गोलंदाज हमारे पास कुछ कम हैं, परंतु सरकार का जैसा आदेश होगा, उनकी वैसी ही नियुक्ति कर ली जाएगी।'

रानी—'मैं कुछ स्त्रियों को तोपची का काम सिखाना चाहती थी, अभी उनकी शिक्षा पूरी नहीं हो पाई है, इसलिए गुलाम गौस खाँ को ओरछे दरवाजे के लिए तैयार रखो और तुम स्वयं किले के दक्षिणी बुर्ज पर कड़क बिजली चढ़ाकर काम करो। मैं अपनी स्त्री सेना को लेकर सब मोरचों पर जवाहरसिंह की और गौस की सहायता करूँगी। बस्तीवालों से कह दो कि निश्चिंत रहें, परंतु भीड़ बाँधकर बाहर न चलें-फिरें।'

भोपटकर ने मार्टिन के नाम एक पत्र आगरा भेजा और नीचेवाली बुर्ज पर यूनियन जैक झंडा चढ़ा दिया।

ओरछा के दूत को नत्थे खाँ के संदेश का उत्तर दिया कि लक्ष्मीबाई एक स्त्री हैं, खाँ साहब को अबला की रक्षा करनी चाहिए न कि उसके साथ इस प्रकार का व्यवहार। रानी अंग्रेजों की ओर से झाँसी का प्रबंध कर रही हैं। ओरछा अंग्रेजों का मित्र राज्य है, इसलिए ओरछा की ओर से झाँसी पर आक्रमण होना बिलकुल अनुचित है। यदि आक्रमण हुआ तो झाँसी अपनी रक्षा करेगी।

दूत संदेश का उत्तर लेकर तुरंत चला गया।

रानी ने दीवान से कहा, 'मुझे खेद है कि झाँसी के समग्र निवासी युद्ध विद्या में निपुण नहीं किए जा सके हैं। मैं नत्थे खाँ से निपट लूँ तब अवश्य इस ओर अधिक ध्यान दूँगी।'

इसके उपरांत वह अनंत चतुर्दशी की पूजा में संलग्न हो गईं।

जवाहरसिंह, कर्नल जमा खाँ, भाऊ बख्शी, गुलाम गौस खाँ इत्यादि अपने-अपने काम में जोर के साथ जुट पड़े। उनके लिए एक-एक क्षण महत्त्व का था। चार-पाँच घंटे के भीतर झाँसी ने रणक्षेत्र का रूप धारण कर लिया।

तीसरे पहर लगभग तीन बजे, रानी अनंत चतुर्दशी का पूजन समाप्त करने को ही थीं कि अचानक धड़ाका हुआ। रानी दामोदरराव को अनंत रक्षा का गंडा बँधवाकर बाहर आई थीं कि समाचार मिला, 'नत्थे खाँ ने चढ़ाई कर दी है और गोला शायद शहर में गिरा है।'

रानी ने दिन भर का उपवास किया था। थोड़ा सा फलाहार किया। इतने में समाचार आया कि टकसाल के पीछे एक सेठ के मकान में गोला गिरा है। रानी ने कल्पना की कि या तो नत्थे खाँ का गोलंदाज अनजान है, जो इतने बड़े किले को वह अनी पर नहीं साध पाया, या काफी चतुर है—अनुमान से महल को निशाना बनाया, परंतु गोले ने

करवट ले ली और महल को बचा गया।

रानी योद्धा वेश में तुरंत घोड़े पर सवार हुईं और अपनी तीनों सहेलियों को लेकर ओरछा दरवाजे पहुँचीं। गुलाम गौस खाँ को आज्ञा दी, 'शत्रु इसी ओर है। गोलों की लगातार वर्षा करो।'

काशीबाई से कहा, 'तू तुरंत किले पर जा। बख्शी से कहना कि जैसे ही नत्थे खाँ की सेना टौरियों पर आश्रय लेने के लिए पश्चिम में सैंयर फाटक की ओर बढ़े, परंतु कड़क बिजली की मार करें। जब तक उसकी सेना ओरछा फाटक से पश्चिम की ओर न बढ़े, कड़क बिजली चुप बनी रहे।'

काशीबाई तुरंत चली गई।

गौस ने अपने तोपखाने को सँभाला। एक के बाद दूसरी तोप पर पलीता पड़ना शुरू हुआ। ग्यारह तोपें थीं। जब तक अंतिम तोप गोला उगलती तब तक पहली विनाश-वमन के लिए तैयार हो जाती।

गोला-बारूद और काम करनेवाले सब सुव्यवस्थित।

ओरछा फाटक से पूर्व-उत्तर की ओर थोड़ी दूरी पर सागर खिड़की और उससे कुछ अधिक दूरी पर लक्ष्मी फाटक था। सुंदर और मुंदर के साथ रानी सागर खिड़की पर आईं। इस खिड़की से पश्चिम की ओर, ओरछा फाटक की तरफ कुछ ही डग के फासले पर एक मुहरी थी। नगर के दक्षिणी भाग के पानी का बहाव इसीमें होकर था। यह मुहरी इतनी बड़ी थी कि नाटे कद का आदमी आसानी से इसमें होकर निकल सकता था। सागर खिड़की के ऊपर जो तोपें थीं, उनमें से एक को रानी ने इस मुहरी के ऊपर दीवार के पीछे लगवा दिया। एक से अधिक तोपें वहाँ रखी भी नहीं जा सकती थीं।

सागर खिड़की पर दीवान दूल्हाजू गोलंदाज था। उसको रानी ने आदेश दिया, 'तुम पश्चिम-दक्षिण की ओर कुछ अंतर से तोप दागो। कोई दिखाई पड़े या नहीं, परंतु जब तक मेरा निषेध न मिले, ऐसा ही करते जाना।'

दूल्हाजू जरा ठमठमाया।

रानी ने समझाया, 'मैं चाहती हूँ कि नत्थे खाँ की सेना और तोपें दक्षिण की ओर ओरछा फाटक और सैंयर फाटक के बीच में ही बनी रहें। तुम्हारे पास से होकर पूर्व और उत्तर की ओर न बढ़ने पाएँ। मैं जहाँ चाहती हूँ, युद्ध वहीं हो। समझ गए।'

दूल्हाजू ने कहा, 'हाँ, सरकार।'

इसी प्रकार सब फाटकों पर आवश्यक आज्ञा देकर रानी ओरछा फाटक पर फिर आईं। नत्थे खाँ की सेना मार खाकर पीछे हटी, परंतु टौरिया पर नहीं चढ़ी। उनके बीच में जो खाइयाँ थीं, उनमें रक्षा का यत्न करने लगी।

इतने में रात हो गई। रानी मुंदर को वहीं छोड़कर महल चली आईं। गीता के अठारहवें अध्याय का पारायण या श्रवण वह यथासंभव नित्य करती थीं। पाठ समाप्त करके आधी घड़ी विश्राम किया था कि मुंदर ने समाचार दिया —'नत्थे खाँ ने नगर-कोट पर चारों ओर से आक्रमण किया है, ओरछा फाटक पर आक्रमण सबसे अधिक भयंकर है।'

रानी सहेलियों समेत सवार होकर तुरंत ओरछा फाटक पर पहुँचीं।

चाँदनी रात। आकाश निर्मल। पास का काफी अच्छा दिखाई पड़ रहा था और दूर का धूमरा। सागर खिड़की पर गोले बरस रहे थे और ओरछा फाटक तो ऐसा जान पड़ता था कि अब गया, अब गया।

रानी ने गुलाम गौस और उसके तोपचियों को समझाया, 'दो बाढ़ें जल्दी-जल्दी दागकर बिलकुल चुप हो जाओ। वैरी समझेगा कि तोपें बंद कर लीं। आगे बढ़ेगा। बढ़ते ही दीवार के छेदों में से बंदूकों की बाढ़ दागी जाए। वैरी अपनी तोपें ऊँची टौरियों पर चढ़ाकर ले जाएगा और वहाँ से फाटक तथा बुर्ज को ध्वस्त करने का उपाय करेगा।

उस समय तोपें दागना।

रानी ने काशीबाई से कहा, 'तुम भाऊ बख्शी से किले में जाकर कहो कि कड़क बिजली के प्रयोग का समय आ गया। जैसे ही ओरछा फाटक की हमारी तोपें बंद हों और अपनी बंदूकों की बाढ़ के उपरांत शत्रु के तोपखाने से बाढ़ दगे, वह कड़क बिजली और उसी बुर्ज के तोपखाने से ओरछा फाटक के बाहर की दाईं ओरवाली ऊँची टौरिया को अपना अचूक निशाना बनाए, अनवरत गोलाबारी करे।'

काशीबाई संवाद लेकर गई।

रानी ने मुंदर और सुंदर को कुछ हिदायतें देकर दूसरी दिशाओं में भेजा।

गुलाम गौस ने अपनी तोपों से जल्दी-जल्दी दो बाढ़ें छोड़ीं। नत्थे खाँ की सेना ने जवाब दिया। गौस की तोपें बिलकुल बंद हो गईं। नत्थे खाँ ने सोचा, तोपची मारे गए। उसके सिपाही दीवार पर चढ़ने के लिए बढ़े। इधर से बंदूकों की बाढ़ दगी। उसका कोई बड़ा असर नहीं हुआ। जब बाढ़ों-पर-बाढ़ें दगीं तब उसके सिपाही पीछे हटे। नत्थे खाँ ने निश्चय किया कि ऊँची टौरिया पर तोपखाना चढ़ाकर ओरछा फाटक और अगल-बगल की दीवारों पर गोलाबारी करने से शहर के लिए मार्ग मिल जाएगा और फिर किले को अधिकृत कर लेना सहज हो जाएगा। सागर खिड़की की ओर से बराबर गोलाबारी हो रही थी और उसका एक तोपखाना उस ओर मोरचा लगाए था। ओरछा फाटक की तोपें बंद थीं, इसलिए उसको अपना यही उपाय महाफलदायक जान पड़ा।

उसने ऊँची टौरिया पर अपनी तोपें चढ़ा दीं और फाटक पर बाढ़ दागी। दीवारों पर उस बाढ़ का विनाशकारी प्रभाव पड़ा। तोपची उकता उठे। रानी ने वर्जित किया।

नत्थे खाँ की तोपों से दूसरी बाढ़ नहीं दगने पाई। टौरिया पर धम-धम हुई और विकट चीत्कार। तुरंत किले से चली हुई तोपों का भयंकर गर्जन-तर्जन सुनाई पड़ा। भाऊ का निशाना अचूक बैठा। फिर बाढ़ आई। इधर रानी ने गुलाम गौस को अपनी तोपों पर पलीता देने की आज्ञा दी।

अब नत्थे खाँ को मालूम हुआ कि वह किसका सामना कर रहा है।

उसने स्थिति को सँभालने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ न बन पड़ा। तोपों और सामान को छोड़कर नत्थे खाँ भागा। वह केवल एक दाग लगा गया—लक्ष्मी फाटक पर कर्नल जमा खाँ मारा गया।

रात को लड़ाई बहुत धीमी गति से चली। परंतु रानी की सावधानी में रत्ती भर भी अंतर नहीं आया।

दूसरे दिन भी लड़ाई चली, परंतु शहर से जरा हटकर। नत्थे खाँ की सेना का एक बड़ा भाग झाँसी के उत्तर में जाकर प्रताप मिश्र के परकोटे की आड़ पा गया, परंतु यही उसके नाश का भी कारण हुआ।

दीवान रघुनाथसिंह एक दूसरे गाँव में था, इसलिए विलंब से समाचार मिला था। वह लड़ाई के दूसरे दिन उन्नाव की ओर से, जो झाँसी के उत्तर में है, आ गया। फाटक सब बंद थे। खुलवाने की जरूरत भी न थी। उसने नत्थे खाँ की सेना की उस टुकड़ी पर जोर के साथ हमला किया, जो प्रताप मिश्र के परकोटे से झाँसी के उत्तरी भाग को परेशानी में डाले थी। इस परकोटे के करीब ही एक पहाड़ी है। इस पहाड़ी की ओट से रघुनाथसिंह और नगर-कोट के पीछे से झाँसी की सेना की बंदूकों ने नत्थे खाँ की सेना को छलनी कर दिया। ठीक अवसर पाकर रघुनाथसिंह ने प्रचंड वेग के साथ प्रहार किया और उस टुकड़ी को तहस-नहस कर डाला।

फिर कई दिन तक झाँसी से जरा दूर नत्थे खाँ की सेना की छोटी-बड़ी टुकड़ियाँ भागते-भागते लड़ती रहीं। परंतु तोपें और बहुत सी युद्ध सामग्री छोड़कर नत्थे खाँ को पराजित होकर भागना पड़ा।

नत्थे खाँ एक टुकड़ी समेत नवाब अलीबहादुर के नई बस्तीवाले महल में आ गया था। नवाब अलीबहादुर नहीं चाहते थे, परंतु विवश थे।

नत्थे खाँ के भागने पर उनके महल पर एक दस्ते ने आक्रमण किया। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया। बच निकलने का प्रयत्न किया। उनके महल के पीछे बहुत निचाई पर, मेहँदी बाग नाम का उद्यान था। एक सुरंग में होकर इस बगीचे से निकल जाने का मार्ग था। जवाहर इत्यादि, जितना सामान बना, लेकर, पीरअली के साथ बाहर निकल आए। बाल-बच्चे और नौकर भी।

सुरक्षित स्थान में पहुँचने पर पीरअली ने कहा, 'आप अकेले भांडेर चले जाइए। मैं यहीं रहूँगा। रानी की सेना के साथ मिलकर महल पर मैं भी हमला करूँगा। उनका भला बन जाऊँगा और महल में जो कुछ बचाने योग्य है, बचाने की कोशिश करूँगा। यहाँ रहकर आपकी अधिक सेवा कर सकूँगा।'

'किस तरह?' अलीबहादुर ने आतुरता के साथ पूछा।

पीरअली ने उत्तर दिया, 'आपको समय-समय पर समाचार मिलता रहेगा और जब अंग्रेज यहाँ रानी से लड़ने के लिए आएँगे तब उनको आपके सेवक द्वारा बड़ी सहायता मिलेगी। आप फिर झाँसी आएँगे। फिर महल आपके होंगे और कोई बड़ी जागीर भी कंपनी सरकार की तरफ से आपको मिलेगी, क्योंकि रानी का राज थोड़े दिन ही और टिकेगा। इस वक्त तो खून का-सा घूँट पीकर रह जाइए। अपमान का बदला लिया जाएगा, आप प्रतीति रखिए।'

अलीबहादुर चले गए। पीरअली रानी के सैनिकों की ओर लौट पड़ा। उसको सैनिक पहचानते थे। वे मारने-पकड़ने को दौड़े। सागरसिंह उस भीड़ में था।

पीरअली ने कहा, 'क्या करते हो, मैं तुम्हारा मित्र हूँ। महारानी साहब का शुभचिंतक। बस्ती भर जानती है। नौकरी नवाब साहब की जरूर करता रहा हूँ, परंतु सदा उनको समझाता रहा कि सीधे रास्ते पर चलो। वे नहीं माने, उन्होंने भुगता। मैं तुम्हारी सहायता करने आया हूँ। यह महल गोला-गोली लायक नहीं है, इसमें आग लगाओ।'

सैनिकों को कुछ आश्वासन हुआ।

सागरसिंह ने पूछा, 'किधर से आग लगाएँ? नवाब साहब कहाँ हैं?'

'भीतर', पीरअली ने उत्तर दिया, 'आग फाटक से लगाना शुरू करो। दरवाजा अपने आप खुल जाएगा। भीतर काफी माल है। मुझको सब पता है। राई-रत्ती बताऊँगा।'

सिपाहियों ने फाटक में आग लगा दी। जल जाने पर घुसने का मार्ग मिल गया। फिर भीतर के फाटकों में आग लगाई। एक-दो जगह और पीरअली ने स्वयं कई जगह अग्नि प्रज्वलित की। जब भीतर पहुँचे तो वहाँ कोई न मिला।

'मालूम होता है, भगदड़ में नवाब साहब निकल भागे। मगर असबाब सामान तो मौजूद है।'

पीरअली ने उसकी साधारण धन-संपत्ति लुटवा दी। थोड़ी देर में आग शांत हो गई, परंतु काफी क्षति हो गई थी।

पीरअली का नाम हो गया कि रानी की सेना के साथ वह नवाब साहब और नत्थे खाँ की फौज के खिलाफ लड़ा। काशीनाथ और सागरसिंह ने विश्वास दिलाया। मोतीबाई को आश्चर्य था। परंतु विजय के हर्ष में अपने हितचिंतक पर संदेह करना ईश्वर के प्रति कृतज्ञता की मात्रा को कम करना था। इसलिए पीरअली शीघ्र विश्वासपात्र लोगों की गिनती में मान लिया गया।

रानी ने गुलाम गौस खाँ, रघुनाथसिंह और भाऊ बख्शी को विशेष तौर पर पुरस्कृत किया।



: ३२ :

मंगल और शुक्र के दिन रानी महालक्ष्मी के मंदिर में जाया करती थीं, जो लक्ष्मी फाटक के बाहर, लक्ष्मीताल के ऊपर है। कभी पालकी में, कभी घोड़े पर। कभी पालकी पर चिक डालकर, कभी बिना चिक के। कभी साड़ी पहनकर, कभी पुरुष वेश में सुंदर साफा बाँधे हुए। कभी बिलकुल अकेली और कभी धूमधाम के साथ। जब पालकी पर जातीं, कुछ स्त्रियाँ अलंकारों से लदी, लाल मखमली जूते पहने, परतले में पिस्तौल लटकाए, पालकी का पाया पकड़े साथ दौड़ती हुई जाती थीं। पालकी के आगे सवार गेरुआ झंडा फहराता हुआ चलता था। उसके आगे सौ घुड़सवार।

मार्ग में विनती भी सुनती थीं।

एक दिन एक भिक्षुक ब्राह्मण सामने आ खड़ा हुआ। काशी से आया था। पत्नी मर गई थी। दूसरा विवाह करना चाहता था। दरिद्र होने के कारण लड़कीवाला विवाह करने को तैयार न था। चार सौ रुपए की अटक थी।

उन्हीं दिनों कुँवर मंडली में एक नया व्यक्ति भरती हुआ था। नाम था रामचंद्र देशमुख। देशमुख को आज्ञा दी, खजाने से इस ब्राह्मण को पाँच सौ रुपए दिलवा दो।

देशमुख ने कहा, 'जो हुक्म।'

ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया।

रानी ने ब्राह्मण से मुसकराकर कहा, 'विवाह के समय मुझको न्योता देना न भूल जाना।'

ब्राह्मण गद्गद हो गया। आँखों से आँसू बह निकले। मुँह से एक शब्द न निकला। साथियों में, सहेलियों में, जनता में, ब्राह्मणों में, अब्राह्मणों में विद्युत् वेग के साथ यह बात फैल गई।

ऐसी रानी के लिए, ऐसी रानी की बात के लिए, ऐसी स्त्री के सिद्धांत के लिए, क्यों न लोग सहज ही प्राण दे डालने को सन्नद्ध होते?

दूसरे दिन रानी ने दीवानेखास में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह को बुलाया। रानी कार्य की प्रगति को और तेज करना चाहती थीं।

रानी—'तोपें ऐसी ढल रही हैं न, जो पीछे धक्का न दें और जल्दी गरम न हों?'

जवाहरसिंह—'हाँ सरकार, बख्शीजी और उनके कारीगर इस विद्या में निपुण हैं।'

रानी—'बारूद?'

रघुनाथसिंह—'तीन महीने की लड़ाई के लिए तैयार है। आज से कुँवर खुदाबख्श ने और भी तेजी पकड़ी है।'

रानी—'अच्छी बंदूकें और तलवारें भी बहुत संख्या में चाहिए।'

जवाहरसिंह—'बन गई हैं और बन रही हैं।'

रानी—'गोले?'

जवाहरसिंह—'भाऊ बख्शी आध सेर से लेकर पैंसठ सेर तक के गोले तैयार कर रहे हैं। ठोस और पोले—फटनेवाले भी।'

रानी—'मैं चाहती हूँ कि इन सब हथियारों के चलानेवाले भी अधिकता से तैयार किए जाएँ।'

जवाहरसिंह—'जनता में बहुत उत्साह है। ऊँची-नीची सब जातियाँ युद्ध की उमंग से उमड़ रही हैं।'

रानी—'सबसे अधिक किन लोगों में उत्साह है?'

जवाहरसिंह—'सरकार, यह बताना कठिन है। ठाकुरों और पठानों में तो स्वाभाविक ही है। कोरियों, तेलियों और काछियों में भी बहुत उमंग है। बनिए और ब्राह्मण भी पीछे नहीं हैं।'

रानी—'क्या शास्त्रियों में भी ?'

जवाहरसिंह—'वे भी तो झाँसी के ही हैं, परंतु उनको जब शास्त्र और पूजन से अवकाश मिलता है तब।'

रानी चुप रहीं। थोड़ी देर बाद बोलीं, 'मैं चाहती हूँ कि सब जातियों के चुने हुए लोगों को, तोप-बंदूक का चलाना सिखाया जाए।'

जवाहरसिंह ने बिना उत्साह दिखाए कहा, 'यह काम जारी है सरकार।'

रानी—'मैं अपनी सहेलियों और कुछ अन्य स्त्रियों को बहुत अच्छा गोलंदाज बनाना चाहती हूँ।'

रघुनाथसिंह—'आज्ञा मिल गई है। उसके अनुसार काम किया जाएगा।'

रानी—'किले में अन्न इत्यादि भी काफी जमा कर लो। कुछ ठीक नहीं कब घेरा पड़ जाए।'

जवाहरसिंह—'काफी अन्न एकत्र किया जा रहा है। और शीघ्र ही किले के कमठाने में जमा कर लिया जाएगा।'

रानी—'चूना, ईंट, पत्थर भी इकट्ठा करके रखना। कारीगर भी हाथ में रहें।'

जवाहरसिंह—'जो आज्ञा।'

रानी—'सेना का और युद्ध का कोई भी अंग निर्बल न रहने पाए।'



: ३३ :

उत्तर और पूर्व में अंग्रेजों की विजय-पराजय का क्रम चालू था। लखनऊ के पतन के उपरांत उसका फिर उत्थान हुआ। शहर में, बगीचों-बारहदरियों में, महलों में युद्ध होता रहा। कानपुर के सूत्र को तात्या टोपे ने फिर पकड़ा। वह ग्वालियर गया और वहाँ की अंग्रेजी-हिंदुस्तानी सेना को फोड़कर अपने साथ ले आया तथा उसने अंग्रेजों के जनरल विंढम को हराया। परंतु अंग्रेज सत्तर सहस्र गोरी सेना, नौ सहस्र गोरखों और बहुसंख्यक सिखों का एक दल लेकर लखनऊ पहुँच गए। विप्लवकारियों ने बहुत करारे युद्ध किए। उत्तर और पूर्व के युद्धों में तात्या टोपे ने बहुत भाग लिया। अंत में जब बिठूर मिट गया और कानपुर अंतिम बार अंग्रेजों की अधीनता में चला गया तब तात्या कालपी के आसपास से युद्ध करने लगा।

जनरल रोज ने, जो उस युद्ध का सर्वश्रेष्ठ अंग्रेज जनरल था, अपनी सेना के दो भाग किए। एक को उसने मऊ छावनी की ओर भेजा और दूसरे को लेकर सागर की ओर बढ़ा। राहतगढ़ सागर से चौबीस मील के फासले पर था। यहाँ के पठान जनरल रोज का मुकाबला कर रहे थे। चार दिन घनघोर युद्ध करने के बाद पठानों को किला छोड़ना पड़ा।

नर्मदा के उत्तरी किनारे का अधिकांश भूखंड विप्लवकारियों के हाथ में था। इसको अपने हाथ में किए बिना जनरल रोज झाँसी की ओर नहीं बढ़ सकता था। सागर और झाँसी के बीच में बानपुर का राजा मर्दनसिंह और शाहगढ़ का राजा बखतबली लोहा लेने को तैयार थे।

अंग्रेजों का प्रधान सेनापति सर कालिन कैंपबेल था। वह उत्तराखंड के विप्लव के दमन में संलग्न था। उसका मत था कि जब तक झाँसी नहीं कुचली जाती, तब तक उत्तराखंड हाथ नहीं आ सकता। इसलिए रोज सागर के द्वार से झाँसी की ओर आ रहा था। बीच में ऊबड़-खाबड़ भूमि और ऊबड़-खाबड़ लड़ाकू जन-समूह। परंतु रोज इत्यादि अंग्रेज जनरलों का विश्वास था—जहाँ विप्लवकारियों के नेता, राजा, नवाब, जागीरदार मारे गए, वहीं विप्लव समाप्त हो जाएगा।

परंतु जगह-जगह विप्लवकारियों के सशस्त्र दल बिखरे हुए थे। इनका दमन करने के लिए रोज ने अपनी सेना के कई भाग किए और उनको भिन्न-भिन्न दिशाओं में भेजा। वह स्वयं सेना के एक बड़े भाग के साथ झाँसी के लिए नारहट की घाटी की ओर आया। उसकी सेना का एक भाग शाहगढ़ के राजा बखतबली का मुकाबला करने के लिए गया। वहाँ देखा तो बखतबली काफी बड़ी सेना लिये मौजूद था। नारहट घाटी पर मर्दनसिंह की भी सेना बहुसंख्यक थी। रोज अपनी सेना लेकर मदनपुर घाटी की ओर बढ़ा। मर्दनसिंह ने भी उसी ओर बाग मोड़ी। रोज चाहता था कि बखतबली और मर्दनसिंह मिलने न पाएँ, इसलिए उसने सेना का एक भाग मर्दनसिंह को अटकाने के लिए नारहट घाटी की ओर लौटाया और स्वयं मदनपुर की ओर चल दिया। मदनपुर उस स्थल से पूर्व-दक्षिण की ओर लगभग दस मील था।

मर्दनसिंह रोज की इस चाल को न समझ सका और वह मदनपुर की ओर न बढ़कर नारहट घाटी पर लौट आया।

बखतबली के साथ रोज का घोर युद्ध हुआ। दो पहाड़ों के बीच में मदनपुर का गाँव और झील है। इस सुहावनी झील के पास ही वह भयंकर संग्राम हुआ था। बहुत अंग्रेजी सेना मारी गई। खुद रोज घायल हुआ, परंतु वह लड़ाई जीत गया। यदि मर्दनसिंह और बखतबली की सेनाओं का मेल हो गया होता तो रोज की पराजय निश्चित थी।

मदनपुर की झील में रोज के सेनापतित्व का अंतिम इतिहास उसी दिन लिख गया होता।

बखतबली के अनेक सरदार पकड़े गए और मार डाले गए। बखतबली की पराजय का हाल सुनकर मर्दनसिंह नारहट घाटी को छोड़कर भागा। रोज ने अपनी सेना की भिन्न-भिन्न टुकड़ियों को आदेश दिया कि विप्लवकारियों का पीछा करते हुए वे उसको झाँसी के निकट मिलें।



: ३४ :

बानपुर के राजा मर्दनसिंह ने मदनपुर की पराजय और नरसंहार का वृत्तांत झाँसी भेजा। झाँसी में, राज्य के बड़े-बड़े नगरों और ग्रामों में, जहाँ गढ़ और किले थे, तैयारी शुरू हो गई।

उन्हीं दिनों ग्वालियर से झाँसी में एक नाटक मंडली आई।

मुंदर ने अनुनयपूर्वक कहा, 'सरकार, लड़ाई के आरंभ होने के पहले एकाध खेल अपनी नाटकशाला में भी हो जाने की अनुमति दी जाए।'

'यह समय नाटक और तमाशों का नहीं है।' रानी मिठास के साथ बोलीं।

मुंदर ने अनुरोध किया, 'मैं लड़ाई में मारी गई तो फिर कब नाटक देखूँगी?'

रानी ने हँसकर कहा, 'दूसरे जन्म में। उसी समय तुमको स्वराज्य स्थापित किया हुआ मिलेगा।'

काशीबाई ने आग्रह किया, 'केवल एक खेल, सरकार, और फिर हम लोग जो खेल खेलेंगी, उसको स्वराज्यवाले सदा स्मरण किया करेंगे।'

'युद्ध वास्तव में है ही किस निमित्त?' रानी मुसकराकर बोलीं, 'अपने जीवन और धर्म की रक्षा के लिए, अपनी संस्कृति और कला को बचाने के लिए। नहीं तो युद्ध एक व्यर्थ का रक्तपात ही है। यह खेल जल्दी हो जाए और फिर उस खेल को ऐसा खेलो कि अंग्रेजों के छक्के छूट जाएँ और यह देश उनकी फाँस से मुक्त हो जाए।'

मुंदर ने हर्ष में कहा, 'सरकार, खेल मराठी में होगा।'

रानी बोलीं, 'झाँसी में मराठी, महाराष्ट्रीयन यहाँ बड़ी संख्या में हैं, यह ठीक है और वे लोग अपने मनोरंजन के लिए मराठी में नाटक खिलवाएँ; परंतु यह नाटक मंडली राज्य का आश्रय तभी पाएगी जब नाटक हिंदी में खेले। अवश्य मेरा जन्म महाराष्ट्र कुल में हुआ है, परंतु मैं अपने को महाराष्ट्रीयन न समझकर विंध्यखंडी समझती हूँ। मेरी झाँसी की भाषा हिंदी है। नाटक यदि हिंदी में हो तो हो, नहीं तो मुझसे कोई सरोकार न होगा। मेरा निश्चय है।'

सहेलियों ने स्वीकार कर लिया।

नाटक मंडलीवालों से कहा गया। उनमें थोड़े अभिनेता ही हिंदी जानते थे। उनकी यह कठिनाई दूर कर दी गई। झाँसी के हिंदी जाननेवाले अभिनेता शामिल कर लिये गए। उस मंडली ने हरिश्चंद्र का अभिनय उत्कृष्टता के साथ किया। मोतीबाई इत्यादि जानकारों तक ने सराहना की। रानी ने मंडली के प्रबंधक को चार सहस्र रुपया पुरस्कार दिया। मंडली ग्वालियर चली गई।

रानी ललित कलाओं की प्रबल पोषक थीं। उस कठिन और चिंताकुल समय में भी रानी प्रत्येक नवागंतुक गायक, वीणाकार, सितारवादक इत्यादि को सुनने के लिए थोड़ा-बहुत समय दिया करती थीं और उचित पुरस्कार भी। कवि, चित्रकार, शिल्पी कोई भी उन्मुख नहीं जाता था। शास्त्री, याज्ञिक, ज्योतिषी, वैद्य, हकीम इत्यादि भी पोषण पाते थे। अपनी इसी वृत्ति को वे स्वराज्य में विकसित और प्रसारित देखना चाहती थीं।

पीरअली देर-सवेर सब महत्त्वपूर्ण समाचार नवाब अलीबहादुर के पास बड़ी सावधानी के साथ भेजता रहता था। झाँसी छोड़ने के कुछ दिनों बाद वे घूमते-घामते दतिया पहुँचे। वहाँ थोड़े समय रहकर भाँडेर पहुँच गए। झाँसी से दतिया सत्रह मील और भाँडेर चौबीस मील है।

नवाब अलीबहादुर इन्हीं स्थानों से अंग्रेजों को काम के समाचार भेजते रहते थे। रोज इत्यादि अंग्रेज जनरल झाँसी को अधिकृत करने के महत्त्व को जानते थे। उन लोगों को नवाब से निरर्थक और सार्थक—सभी तरह के समाचार

समय-समय पर मिलते रहते थे। मदनपुर युद्ध के पश्चात् झाँसी रोज का प्रथम लक्ष्य और पहला कर्तव्य बनी।



अस्त
(क्या सचमुच ?)

: ३५ :

मदनपुर की लड़ाई जीतने के बाद रोज की सेना ने शाहगढ़ को अधिकार में किया। फिर मड़ावरा की गढ़ी को कब्जे में करने के उपरांत बानपुर राज्य को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया। बानपुर के महल के कुछ भाग को तोप से उड़ा दिया, बाकी को जला दिया और इन दोनों राज्यों के बड़े कर्मचारियों को फाँसी पर चढ़ा दिया गया। इन महलों में पुस्तकों और चित्रों का भी संग्रह था, परंतु विप्लवकारियों की संपत्ति होने के कारण वे अस्पृश्य हो गए थे।

वध और अग्नि बरसाती हुई, रोज की सेना १२ मार्च, १८५९ को तालबेहट आ पहुँची। तालबेहट का प्राचीन दृढ़ किला लड़ाई के लिए उपयुक्त था, परंतु उसमें विप्लवकारी बहुत थोड़ी संख्या में थे और उनका नायक कोई बड़ा आदमी न था। मुकाबले में रोज सरीखा चतुर और विजय प्राप्त सेनापति तथा अंग्रेजों की विशाल सेना और तोपें। विप्लवकारी भाग गए और रोज ने तालबेहट का किला सहज ही अधिकार में कर लिया। चंदेरी में बानपुर के राजा का दस्ता था। रोज ने सोचा, बगल के इस काँटे को पहले निकाल डालना चाहिए। उसने चंदेरी पर हमला करने के लिए अपने एक अफसर, ब्रिगेडियर स्टुअर्ट को भेजा। स्टुअर्ट ने बिना किसी कठिनाई के चंदेरी को पराजित कर दिया।

झाँसी की पूर्वी तहसील मऊ में एक छोटा सा गढ़ था। इस गढ़ में रानी की ओर से काशीनाथ भैया और आनंदराय इत्यादि छोटे-छोटे जागीरदार तैयारी कर चुके थे। मऊ के दमन के लिए रोज ने बानपुर विध्वंस के बाद अपना एक दस्ता सीधा भेज दिया था। रोज ने झाँसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास संवाद भेजा —

'आप अपने दीवान लक्ष्मणराव, लाला भाऊ बख्शी, मोरोपंत ताँबे (आपके पिता), नाना भोपटकर, दीवान जवाहरसिंह, दीवान रघुनाथसिंह, कुँवर खुदाबख्श और मोतीसाईं के साथ नि:शस्त्र चली आएँ अन्यथा कठोर और भयंकर परिणाम के लिए तैयार रहें।'

इस प्रकार के संवाद के लिए रानी तैयार थीं, परंतु जिस मोतीसाईं को जनरल रोज चाहते थे, उसके स्मरण से रानी के दीवानेखास में हँसी का तूफान खड़ा हो गया।

'नाना साहब', रानी ने हँसी को रोककर कहा, 'इस मोतीसाईं को कहाँ से पकड़ बुलाऊँ ?'

नाना भोपटकर ने कहा, 'सरकार के यहाँ यदि बनावट चलती होती और जाली सिक्के ढलते होते तो किसी-न-किसीको साईं का चोगा पहना दिया जाता।'

मोतीबाई, दीवानेखास में मौजूद थी। झुँझलाई हुई सूरत बनाकर बोली, 'सरकार, दूत को बुलाकर पूछा जाए कि मोतीसाईं किस हुलिया का आदमी है।'

मोरोपंत ने कहा, 'उसके लंबी दाढ़ी होगी, बड़े-बड़े केश और खूनी आँखें। साइयों और साधुओं ने अंग्रेजी फौज को भड़काने में ज्यादा भाग लिया है, इसलिए रोज को एक साईं भी चाहिए।'

दीवान लक्ष्मणराव गंभीर होकर बोला, 'सरकार, उत्तर जल्दी भेज दिया जाना चाहिए। दूत को शीघ्र लौटना है,

क्योंकि उसको कोई भी अपने घर नहीं ठहराना चाहेगा।'

भाऊ बख्शी ने कहा, 'और रोज यहाँ से बहुत दूर भी नहीं है। शायद दूत के पीछे-पीछे आ रहा हो।'

मोतीबाई ने पूछा, 'और यह मोतीसाईं कौन सी बला है? इसका क्या उत्तर होगा?'

रानी ने हँसी को दबाकर कहा, 'मैं बताऊँगी।'

लक्ष्मणराव फिर बोला, 'क्या उत्तर दिया जाए?'

रानी ने और भी अधिक गंभीर होकर कहा, 'मैं अकेली उत्तर देनेवाली कौन होती हूँ? झाँसी के समग्र मुखियों को, सब जातियों के पंचों को जोड़ो। अपने सब सरदार इस समय झाँसी में ही हैं। वे सब और आप लोग एकमत होकर कह दें तो मैं अकेली नि:शस्त्र चली जाऊँगी।'

वाक्य समाप्त होते-होते रानी ने श्वास और उच्छ्वास लिये तथा किसी उखड़ते हुए भाव पर कठिनता के साथ, कठोरता के साथ नियंत्रण किया।

तुरंत झाँसी के मुखिया, पंच, सरदार इत्यादि इकट्ठे किए गए। जो कुछ उन लोगों ने कहा, उसमें महत्त्व की बातें ये थीं—

'लड़ेंगे। अपनी झाँसी के लिए, अपनी रानी के लिए, मरेंगे।'

'हमारे पास जितना रुपया और आभूषण है, सब स्वराज्य की लड़ाई के लिए रानी के हाथ में संकल्प है।'

जनमत रानी के मत से मिला हुआ था ही, इस समय बहुत प्रबल हो गया। परंतु रानी ने झाँसी की हुंकार को, वीणा की टंकार में परिवर्तित करके भेजा। उन्होंने लिखा—

'मिलने के लिए क्यों बुलाया, इसका ब्योरा आपने कुछ न दिया। मिलाप के परदे में मुझे धोखा दिखाई पड़ता है। मैं स्त्री हूँ। नि:शस्त्र कैसे आ सकती हूँ? राज्य के दीवान और बख्शी ससैन्य आ सकते हैं।' रानी ने इस चिट्ठी पर अपने हस्ताक्षर किए।

भोपटकर से कहा, 'आपकी नीति का क्या फल हुआ?'

उसने उत्तर दिया, 'यही कि अंग्रेज लोग बिना सूचना के झाँसी पर नहीं चढ़ दौड़े।'

'मार्टिन को चिट्ठी लिखी थी?'

'हाँ सरकार, उसने जबलपुर के कमिश्नर को और इस जनरल को अवश्य कुछ लिखा होगा।'

'फल?'

'कुछ समय मिल गया, यही बहुत है।'

दूत को रानी की चिट्ठी दे दी गई। दूत गया। वह प्रस्थान न कर पाया होगा कि पीरअली ने रानी के पास संदेशा भेजा, 'सरकार की आज्ञा हो तो मैं अंग्रेज छावनी की खबर ले आऊँ कि कितनी और कैसी सेना है तथा कितनी तोपें हैं और वे लोग किस ढंग से झाँसी पर आक्रमण करेंगे।'

मोतीबाई ने इन बातों का पता लगाने का सामर्थ्य तो प्रकट किया, परंतु पीरअली के भेजे जाने पर आक्षेप नहीं किया। पीरअली को अनुमति मिल गई।

रानी ने मोतीबाई से कहा, 'तेरा नाम कैसे सुंदर रूप में अंग्रेजों के पास पहुँचा है। मुझको कोई संदेह नहीं, मेरे जासूसी विभाग के सरदार को ही साईं बना लिया गया है।'

'मैं तो दरबार में बड़ी कठिनाई से हँसी को रोक पाई', रानी ने कहा। मोतीसाईं! मोतीसाईं कितना बढ़िया नाम है। और वह खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

मोतीबाई भी हँसते-हँसते बोली, 'सरकार, मेरी चल नहीं सकती थी, नहीं तो मैं चिट्ठी के सिरनामे पर लिखवाती,

'मेंमसाहब' रोज को मोतीसाईं का सलाम। चुपचाप हिंदुस्तान को पीठ दिखाओ और अपनी विलायत में झख मारो।' जब यह चिट्ठी उसकी फौज में चर्चा पाती तब उस मुँहजले को मुँह दिखाने में लाज आती।

रानी गंभीर हो गईं।

'पीरअली कल तो लौट आएगा?'

'यदि उसको किसीने मार्ग में ही समाप्त न कर दिया तो।'

'आदमी तो चतुर है।'

'बहुत कांइया। मुझको उस पर कभी-कभी अविश्वास हो जाता था, परंतु कुछ दिनों से वह ऐसा जी लगाकर काम कर रहा है कि संदेह निवृत्त हो गया।'

'अंग्रेजों के साथ हिंदुस्तानी सिपाही हैं।'

'मैंने भी सुना है। भोपाल और हैदराबाद की रियासतों के दस्ते हैं। कुछ तिलंगा पलटन है, बाकी गोरे।'

'सब कितने होंगे?'

'सरकार, ठीक-ठीक पता तो नहीं। कई हजार हैं। ठीक बात पीरअली के लौटने पर मालूम होगी।'



: ३६ :

पीरअली इतनी तेजी के साथ गया कि उसको जनरल रोज का दूत मार्ग में ही मिल गया। उसने जनरल रोज के पास पहुँचाने की प्रार्थना की। पीरअली को रोज के पास पहुँचा दिया गया। उसके पास नवाब अलीबहादुर का संदेशा और पीरअली का नाम पहुँच चुका था। पीरअली को पाकर रोज प्रसन्न हुआ। पीरअली ने रोज को झाँसी की पक्की और कच्ची बात सुनाई। स्त्रियों की सेना का सविस्तार वर्णन सुनकर रोज हैरान हो गया। हिंदुस्तान की स्त्रियाँ सिपाहीगिरी का काम करती हैं। उसको विश्वास न होता था; परंतु अलीबहादुर की चिट्ठियों में और उसने बंबई में आते ही, विप्लवकारियों का जो वर्णन सुना था और उस वर्णन में रानी ने जो स्थान पाया था, उससे वह इस असंभव बात को मानने के लिए तैयार हो गया।

रोज ने पूछा, 'रानी ने अंग्रेज बच्चों और स्त्रियों का कत्ल करवाया?'

'हरगिज नहीं', पीरअली ने सच्चा उत्तर दिया।

रोज को मार्टिन की चिट्ठी की बात जबलपुर के कमिश्नर ने बताई थी और उसने मार्टिन की चिट्ठी पर अपना विश्वास भी प्रकट किया था। परंतु रोज और उसके साथी अंग्रेज, रानी की निर्दोषता को मानने के लिए तैयार ही न थे।

झाँसी के कुछ लोगों ने उनके बाल-बच्चों का वध किया था, इसलिए उनको सारी झाँसी और सारी भूमि से बदला लेना था। रानी झाँसी का सजग चिह्न थीं, इसलिए उनको दोषमुक्त कैसे माना जा सकता था? दूत ने रानी का जो उत्तर दिया, वह शिष्ट और मधुर होते हुए भी स्पष्ट था।

रोज ने १७ मार्च को तालबेहट से कूच करके बेतवा पार की। पीरअली आगे किस प्रकार जनरल रोज की सहायता करेगा, यह तय हो गया और वह शीघ्र झाँसी लौट आया। रोज झाँसी की ओर सावधानी के साथ बढ़ा। आसपास का प्रदेश दृढ़ता के साथ अपने अधिकार मैं करने में उसको दो-तीन दिन लग गए।

इसी समय रोज को प्रधान सेनापति कैंपबैल का आदेश मिला—'तात्या टोपे ने चरखारी के राजा को घेर लिया है। पहले चरखारी की सहायता करो।'

रोज ने आदेश का उल्लंघन किया—वह झाँसी के महत्त्व को जानता था।

उसने उत्तर दिया, 'मैं आज्ञा की अवज्ञा के लिए क्षमा चाहता हूँ। चरखारी का गिर पड़ना या खड़ा रहना कुछ मूल्य नहीं रखता। मुझको पहले झाँसी से निपटना है।'

तात्या टोपे ने चरखारी से चौबीस तोपें और तीन लाख रुपए छीन लिये और कालपी लौट आया।

पीरअली ने जो समाचार रानी के पास भिजवाया, वह बहुत अनोखा न था, परंतु उसको काफी महत्त्व दिया गया।

उसने बताया कि पलटनें अमुक-अमुक नंबर की हैं और प्रत्येक पलटन में इतने सिपाही हैं। तोपों की गिनती बताई और प्रबंध की खूबी को प्रकट किया। रोज की कुल सेना सात हजार कूती गई।

नाना भोपटकर तक को पीरअली का विश्वास हो गया और वह रहस्य के कार्यों में शामिल किया जाने लगा। जब मोतीबाई को ही पीरअली पर संदेह न रहा तब रानी को संदेह हो ही क्यों सकता था?

पीरअली ने नवाब साहब के पास भाँडेर समाचार कहला भेजा कि अब बहुत समय तक कोई खबर न मिल सकेगी। पीरअली भयानक खेल खेल रहा था।

जिस दिन पीरअली लौटकर आया, उसी दिन राहतगढ़ से भागे हुए लगभग पाँच सौ पठान रानी के शरणार्थी हुए।

रानी ने उनको नौकर रख लिया। उनके एक सरदार का नाम गुल मुहम्मद था। इन लोगों का समाचार पीरअली रोज को नहीं भेज पाया। इस बात का उसको खेद था।

जब ये पठान रानी के पास आए तब वे बड़ी हीन अवस्था में थे। कपड़े सब फट गए थे। न जाने कितने दिन से उनको भर पेट भोजन न मिला था। अच्छे हथियार पास न थे। कुछ के पास सिवाय लाठी या छुरी के और कुछ न था। रानी ने उनको सब प्रकार की सुविधाएँ दीं। उन्होंने प्रण किया, 'स्वराज्य के लिए रानी के कदमों में अपने सबके सिर देंगे।' इन पठानों ने अपने प्रण को जैसा निभाया, उसको इतिहास जानता है तथा झाँसी की लोक परंपरा उसको नहीं भूली और न कभी भूलेगी।

झाँसी नगर-कोट के सब फाटकों पर बड़ी और छोटी तोपों का उचित प्रबंध कर दिया गया। बारूद और गोले फाटकों पर की बुर्जों में इकट्ठे कर दिए गए और निरंतर युद्ध-सामग्री तथा रसद भेजने का प्रबंध कर दिया गया।

दीवान दूल्हाजू ओरछा फाटक पर, पीरअली सागर खिड़की पर, कुँवर खुदाबख्श सैंयर फाटक पर, कुँवर सागरसिंह खंडेराव फाटक पर, पूरन कोरी उन्नाव फाटक पर नियुक्त किए गए। दीवान जवाहरसिंह के हाथ में संपूर्ण नगर और नगर के फाटकों की रक्षा का भार सौंपा गया। किले में हर बुर्ज पर सब मिलाकर इक्यावन बड़ी-बड़ी तोपें साजी-सँभाली गईं। दक्षिणी बुर्ज की तोपें गुलाम गौस खाँ के संचालन में, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बख्शी के हाथ में और पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गईं। किले में पठान, चुने हुए बुंदेलखंडी सैनिक और रानी की स्त्री सेना की नियुक्ति कर दी गई। सब सैनिक लगभग चार हजार होंगे। पानी का प्रबंध बहुत अच्छा न था, परंतु संतोषप्रद था—किले के पश्चिमी भाग में, जहाँ महादेवजी का मंदिर है, एक कुआँ था। उसीसे सारी सेना को पानी पिलाने के लिए ब्राह्मण नियुक्त कर दिए गए।

चैत की अमावस हो गई। नवरात्र का आरंभ हुआ। किले में गौर की स्थापना हुई। रानी ने धूमधाम के साथ सिंदूरोत्सव मनाया। गौर के सामने चाँदी के बरतनों की तड़क-भड़क और मंदिर के बाहर सबके लिए भीगे चने एवं बताशों का प्रसाद। नगर की स्त्रियाँ सजधज के साथ उत्सव में शरीक हुईं।

फूलों की सुंदरता और सुगंधि से महादेवजी का मंदिर भर गया। स्त्रियाँ थोड़ी देर के लिए आनेवाली विपत्ति को भूल गईं। वे अपने किले में थीं, अपनी हँसती-मुसकराती रानी के पास। उनकी तोपें, उनके गोलंदाज, उनके सिपाही आसपास और अपनी रक्षा का पुख्ता हौसला अपने मन में। फिर किस बात की चिंता थी?

महादेवजी के मंदिर के समीप पलाश का एक वृक्ष था। उसमें इन दिनों प्रति वर्ष बड़े-बड़े लाल फूल लगते थे और तीक्ष्ण ग्रीष्म ऋतु में उसके हरे चिकने बड़े पत्ते छाया दिया करते थे। जंगल का अवशेष और स्मारक, महादेव के मंदिर का अकेला पड़ोसी वह वृक्ष काटने से बचा लिया गया था। नवरात्रि में वह पलाश लाल फूलों से गस गया। स्त्रियाँ फूलों की एक-एक माला उसकी भी डालों में पहना दे रही थीं, मानो सौंदर्य को सुगंधि प्रदान की गई हो। लाल फूलों पर बेला, चमेली, गेंदा और जूही की रंग-बिरंगी मालाएँ ऐसी लगती थीं, जैसे प्रभात के समय उषा की किरणों ने गुलाल बिखेर दी हो। इस वृक्ष के नीचे कुआँ था और कुएँ के ऊपर एक बारहदरी। इस बारहदरी की रक्षा के लिए ऊँचा परकोटा था। इसके पूर्व में बहुत ऊँचाई पर किले की पश्चिमी बुर्ज और उसके पीछे जरा दूर महल।

पूजन के पश्चात् स्त्रियाँ पलाश के वृक्ष के पास से सीढ़ियों द्वारा बारहदरी में इकट्ठी हो-हो जा रही थीं। रानी वहीं थीं। वहीं सिंदूरोत्सव हो रहा था—हलदी-कूँकूँ। रानी विधवा थीं, इसलिए वह स्वयं सिंदूर नहीं दे रही थीं, परंतु वहाँ भाऊ बख्शी की पत्नी थीं और भी अनेक सधवाएँ थीं, जो आपस में सिंदूर दे रही थीं और किसी-किसी बहाने एक-दूसरे के पति का नाम लिवाने का हँस-हँसकर प्रयत्न कर रही थीं।

विनोद की समाप्ति पर सब स्त्रियाँ महादेव के मंदिर के पास उतर आईं। वे उतरती जाती थीं और पलाश के पेड़ को हिलाती जाती थीं। उसके लाल फूल मालाओं सहित झूम-झूम जाते थे।

महादेव का मंदिर छोटा सा है और आसपास का आँगन भी सँकरा ही है, परंतु उसमें बहुत स्त्रियाँ इकट्‌ठी थीं।

चहल-पहल को बंद करके रानी ने स्त्रियों से कहा, 'दो-चार दिन के भीतर ही अपनी झाँसी के ऊपर गोरों का प्रहार होनेवाला है। तुममें से अनेक युद्ध विद्या सीख गई हो। जो जिस कार्य को कर सके, वह उस कार्य को हाथ में ले। लड़नेवालों के पास गोला, बारूद, खाना, पानी इत्यादि ठीक समय पर पहुँचता रहना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर हथियार भी उठाना पड़ेगा। तुममें से कोई मेरी बहिन के बराबर हो, कोई माता के समान। अपने बाप की, अपने ससुर की, अपने पति की, अपने भाई की लाज तुम्हारे हाथ है। ऐसे काम करना, जिनसे पुरखों को कीर्ति मिले। मैंने नगर का प्रबंध कर दिया है। तुम्हारी आवश्यकता मुझको किले में है। मेरे साथ रहना। बीच-बीच में छुट्‌टी मिल जाया करेगी, तब घर हो आया करोगी।'

सब स्त्रियों के कंठ से ध्वनित हुआ—'हर हर महादेव!'

उन कोमल, किंतु दृढ़ कंठों का वह निनाद किले की कठोर दीवारों से जा टकराया। उसकी झाँई महादेव के मंदिर में लौट पड़ी और हुआ 'हर हर महादेव!' अनंत दिशाओं में, अनंत काल में वह अनंत, अमर नाद समा गया। महल के पास सिपाहियों के कोठे थे। उनमें नवागंतुक पठान भी थे। इस हल्ले को सुनकर हथियार लेकर बाहर निकल आए। बुंदेलखंडी सिपाहियों ने उस हल्ले का सविस्तार अर्थ उनको समझाया।

उनका अगुआ गुल मुहम्मद बोला, 'बाई जहाँ की औरत लड़ने को ऐसा तैयार है, वहाँ का मरद तो आसमान को चक्कर खिला देगा। और अम लोग...अम लोग...खुदा कसम—इस मुलक के लिये सब मर मिटेगा। वकत आने दो, बाई वकत!' पठानों ने दाँत पीसकर मन-ही-मन प्रण किया।

❑

: ३७ :

जनरल रोज ससैन्य २० मार्च के सवेरे झाँसी के पूर्व-दक्षिण कामासिन देवी की टौरिया के पीछे, नगर से लगभग तीन मील के फासले पर आ गया। थोड़ी देर में तंबू तन गए। इन तंबुओं को रानी ने किले के महल की छत पर से दूरबीन द्वारा देखा। झाँसी भर में सनसनी फैल गई, परंतु वह सनसनी भय की न थी, उत्साह की थी।

किले के गोलंदाजों ने भी दूरबीन लगाईं। तोपों पर पलीते डालने के लिए हाथ सुरसुरा उठे, परंतु उस समय की तोपों के लिए अच्छा निशाना मारने के प्रसंग में तीन मील का फासला बहुत था। स्त्री गोलंदाजों ने भी दूरबीन पकड़ी।

मोतीबाई ने उमंग के साथ रानी से कहा, 'सवारों का हमला कर दिया जाए तो सब तंबू-कनातें तितर-बितर हो जाएँ।'

रानी बोलीं, 'समझ से काम लो। इन तंबुओं के बीच-बीच में अगल-बगल और आगे-पीछे तोपें लगी होंगी। एक सवार भी लौटकर न आ सकेगा। लड़ाई किले और परकोटे के भीतर से लड़नी पड़ेगी। घिर जाएँगे। परंतु एक दिन तात्या टोपे रावसाहब की सेना लेकर आ जाएँगे। तब रोज की सेना पर दुहरी मार पड़ेगी।'

'रावसाहब के पास संदेशा भिजवा दिया गया?'

'आज ही भेजती हूँ। सोचती हूँ किसको भेजूँ।' रानी ने कुछ क्षण सोचकर कहा।

मोतीबाई बोली, 'जो नाम मन में उठते हैं वे सब किसी-न-किसी काम पर लिख लिये गए हैं। मैं सोचती हूँ, जूही को सवार के साथ भेज दिया जाए।'

'वह सुकुमार है, कोमल है', रानी ने कहा।

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से रानी की ओर देखा। बोली, 'सरकार, संसार की जितनी मंजुलता है, वह हमारे मालिक में निहित है। उनसे बढ़कर कोई नहीं। इतनी मृदुल होते हुए भी वह फौलाद से भी बढ़कर कठोर हैं। तब उनकी चाकरानी क्या संवाद-वाहक का भी काम न कर सकेगी? और फिर वह दृढ़ भी काफी है। इस कार्य में उसका मन लगेगा। उसीको भेजने की अनुमति दी जाए। उसको तुरंत शहर छोड़ देना चाहिए। अंग्रेज लोग शीघ्र घेरा डालेंगे। सब फाटक बंद होने ही वाले हैं। फिर कोई भी न आ-जा सकेगा।'

रानी ने कहा, 'मैं जूही को भेजने की अनुमति देती हूँ। उसके साथ काशी को भेजना चाहती हूँ। तुमको उसके साथ कर देती; परंतु तुम्हारी यहाँ अधिक आवश्यकता पड़ेगी।'

रानी ने काशीबाई और जूही को उसी समय कालपी के लिए रवाना कर दिया। उन दोनों के घोड़े अच्छे थे। जरूरी सामान साथ था। दोनों सशस्त्र युवा के वेश में गईं।

काशीबाई और जूही के चले जाने पर नगर के सब फाटक बंद कर लिये गए।

झाँसी की अनेक स्त्रियों ने उसी दिन रानी के पास सैनिक वेश में अपना निवास बनाया। ये ही स्त्रियाँ जो घर पर बात-बात में चबड़-चबड़ किया करती थीं, जरा सा कारण पाने पर परस्पर लड़ बैठती थीं, संध्या के समय वस्त्राभूषणों और फूलों से सुसज्जित होकर, थालों में दिये रख-रखकर, मंदिरों में पूजन के लिए जाती थीं, वे ही स्त्रियाँ सैनिक वेश में, तलवार बाँधे और बंदूक कंधे पर साधे, चुपचाप अपना-अपना कर्तव्य पालन करने में निरत हो गईं! उनका श्रृंगार और वाक्-युद्ध सब तलवार की म्यान में समा गया! लोगों की कल्पना थी कि अंग्रेज रात को झाँसी पर हमला करेंगे। झाँसी सचेत थी। परंतु रात में हमला नहीं हुआ।

२१ मार्च को जनरल रोज ने अपने मातहत दलपतियों के साथ दूर से झाँसी का चक्कर काटा और भूमि का निरीक्षण किया। आक्रमण और रक्षा के स्थानों में सेना की टुकड़ियाँ और तोपें लगा दीं। शहर और किले के भीतर के लोगों को जिन-जिन मार्गों से सहायता या रसद मिल सकती थी, उन सबको उसने अपने अधीन कर लिया। शहर के सब फाटकों की नाकेबंदी कर ली। उसी दिन चंदेरी से ब्रिगेडियर स्टुअर्ट अपने दस्ते के साथ लौट आया। रोज को और बल मिला।

जहाँ-जहाँ अंग्रेज फौज के दल लगाए गए थे, वहाँ-वहाँ उनकी रक्षा के लिए खाइयाँ खोद ली गईं। एक स्थान से दूसरे स्थान तक तार लगा दिया गया। कामासिन टौरिया पर एक बड़ी दूरबीन लगाई गई और तारघर कायम किया गया।

झाँसी के आसपास की सब टौरियों की आड़ से अंग्रेजी तोपखाने मृत्यु-वमन करने के लिए वैज्ञानिक तौर पर सन्नद्ध हो गए और टौरियों के बीच-बीच में जो नीची जगह और खाइयाँ थीं, उनमें बंदूक चलाने के लिए छेद और नालियाँ बनाकर सैनिक अपने जनरल की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। रोज जैसा योग्य सेनापति था, सेना उसकी उतनी ही सीखी-सिखाई हिंसामय और अनुभवी थी।

मंगलवार (२३ मार्च) को रोज ने हमले की आज्ञा दी। युद्ध आरंभ हो गया।

झाँसी के तोपची और सिपाही रात भर जागते रहे। रानी ने दुहरी कुमुक का प्रबंध किया। दिन में अपनी-अपनी जगह पर गुलाम गौस, खुदाबख्श, रघुनाथसिंह, भाऊ बख्शी, दूल्हाजू, पूरन और सागरसिंह; रात में उनके स्थानापन्न रानी के स्त्री गोलंदाज।

परंतु यह बदली, सुबह होते ही नहीं हुई। स्त्रियाँ इन गोलंदाजों के पास पहुँच गईं और काम में मदद करती रहीं। दोपहर के उपरांत बदली होनी थी।

गुलाम गौस खाँ रात भर का जागा था। जो स्त्री उसके पास काम कर रही थी, उससे गौस का मन नहीं भर रहा था। उसने उसके बदले में लालता ब्राह्मण को माँगा। रानी ने लालता को भेज दिया। लालता के आते ही गौस की खुमारी चली गई।

गौस ने उससे कहा, 'रानी साहब की स्त्री-गोलंदाज चपल बहुत हैं, मुझको ठंडा आदमी चाहिए, जो काम करते समय गाता न हो।'

लालता हँसकर बोला, 'कभी मैं भी आल्हा गाते-गाते तो काम करता हूँ, खाँ साहब।'

'तब वह गीत याद रखना पंडितजी', गौस ने कहा, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहिं के लाने।'

लालता ने फसीने के छेद में होकर देखा कि जीवनशाह की पहाड़ी की आड़ में होकर बगलवाली टौरिया के पीछे कुछ तोपें और चढ़ाई जा रही हैं। गुलाम गौस ने भी देखा।

गौस की आँखें एक पल के लिए गिद्ध की तरह सधीं। बोला, 'पंडितजी, एक लोटा जल पिलाओ और मेरी घनगरज तोप और उसकी छोटी बहिनों का काम देखो। मैं बारह बजे छुट्टी लूँगा। खुदा ने चाहा तो खाना-वाना खाने के बाद शाम को मिलूँगा। फिर रात को सोऊँगा। हाँ तो, एक बार वह गीत तो मन से गा दो। एक सतर से ज्यादा नहीं।'

लालता ने स्वर में गाया, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहिं के लाने।' गीत की समाप्ति हुई कि गौस ने तोपखाने को पलीता छुआया। 'घनगरज और उसकी छोटी बहिनों' ने इतनी जोर की गरज की कि जमीन काँप गई। दक्षिणी सिरे की सब बुर्जों से एक-एक क्षण बाद बाढ़ दगना शुरू हो गई। तोपों के भरने का उत्कृष्ट प्रबंध था। एक तोपखाने की बाढ़ और दूसरे के दगने में थोड़ा ही अंतर पड़ता था। रोज के तोपखाने ने जवाब दिया, परंतु जवाब

कमजोर था। गौस के तोपखाने ने ऐसी मार बरसाई कि रोज का दम फूल उठा। उसका दक्षिणी दस्ता नष्ट-भ्रष्ट हो गया। कुछ तोपखाने बंद हो गए; परंतु एक तोपखाना कोलाहल कर रहा था। समय लगभग दोपहर का हो गया था।

गुलाम गौस ने कहा, 'मुझे भूख लग रही है और गोरों का यह तोपखाना मानता नहीं। अच्छा देखता हूँ।'

गुलाम गौस ने 'घनगरज' को एक अंगुल इधर-उधर सरकाया। निशाना बाँधा और एक फटनेवाला गोला छोड़ा।

बारूद इन तोपों की ऐसी थी कि धुआँ न होता था, इसलिए गौस ने अपने निशाने की सफलता तुरंत देख ली। उछलकर बोला, 'वह मारा!' उसके साथियों ने देखा कि गोरे तोपची मारे गए और तोप भी उलटकर बेकार हो गई।

अंग्रेजों का दक्षिणी मोरचा बिलकुल ठंडा हो गया। गौस भोजन और आराम के लिए चला गया। लालता ने स्थान पकड़ा।

पूर्व की ओर से अंग्रेजी तोपों के गोले आने लगे। कुछ किले से टकराते थे और कुछ शहर में गिरकर घरों का तथा लोगों का नाश करते थे। भाऊ बख्शी ने 'कड़कबिजली' का स्थान जरा सा परिवर्तित किया और निशाना साधकर पलीता दिया। थोड़ी देर में रोज का पूर्वी मोरचा भी ठंडा हो गया। तोपची मारे गए और तोपें बेकार हो गईं। बख्शी अपनी पत्नी को तोपखाना सौंपकर भोजन और आराम के लिए चला गया।

मुंदर ने रघुनाथसिंह की जगह ली। सुंदर ने दूल्हाजू की, मोतीबाई ने खुदाबख्श की। दीवान जवाहरसिंह को थोड़ी देर के लिए छुट्टी दे दी गई। रानी घोड़े पर सवार होकर शहर के सब मोरचों को देखने और सँभालने के लिए चली गईं। तीसरे पहर के अंत में लौट आईं। जवाहरसिंह फिर अपने काम पर डट गया।

चौथे पहर से लेकर संध्या तक स्त्री-तोपचियों ने दृढ़तापूर्वक काम किया। रात को भी उन्हींको काम पर रहना था। केवल खंडेराव फाटक और सागर खिड़की पर स्त्रियाँ काम नहीं कर रही थीं। खंडेराव फाटक पर सागरसिंह ने अपना नायक स्वयं चुन लिया और सागर खिड़की पर बहरामुद्दीन नाम का एक बुंदेलखंडी पठान भेज दिया गया।

इसका आना पीरअली को अच्छा नहीं लगा।

पीरअली ने कहा, 'खाँ साहब, आपको नाहक कष्ट दिया गया। मैं तो दिन-रात इस छोटी सी खिड़की को सँभालने को तैयार हूँ।'

'पीर साहब', बहरामुद्दीन बोला, 'आप थोड़ा आराम कर लें, रात भर के जागे हुए हैं।'

'गई रात सभी जागे हैं। आप भी तो न सोए होंगे?'

'हुक्म है। पालन करना होगा।'

'ऐसा भी क्या, अरे साहब, सोइए। कल रहिएगा मेरी मदद पर।'

'नहीं, जनरल साहब सुनेंगे तो नाराज होंगे। और रानी साहब सुनेंगी तो मैं अपना मुँह न दिखा सकूँगा।'

'तो रह जाइए, मगर एक बात है—किसीको मालूम न हो।'

'मुझे किस्से-कहानी कहते फिरने से मतलब ही क्या?'

'बात ऐसी है कि अगर फूटकर बाहर निकल जाए तो मेरे टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे।'

'आप कहिए, विश्वास करिए।'

'अंग्रेजी छावनी में क्या हो रहा है, क्या होनेवाला है, कहाँ-कहाँ नए मोरचे बनाए गए और किस तरफ से हमला जोर का होगा—इन सब बातों की जासूसी करने का भार मेरे सिर है। अंग्रेजी छावनी में भोपाल रियासत के भी सिपाही हैं। उनमें एक मेरा रिश्तेदार है। थोड़े दिन हुए जब मैं तालबेहट की ओर गया था तब उसको मैंने मिला लिया था। वह कुछ और लोगों से मिला हुआ है, इसलिए ठीक-ठीक खबर मिल जाएगी। वह खबर अपने बड़े काम की होगी। इस खबर के लाने के लिए मैं रात को चुपचाप बाहर जाऊँगा। सवेरे के बहुत पहले आ जाऊँगा।

यदि अंग्रेजों को खबर लग गई तो मैं मार डाला जाऊँगा और अंग्रेजी फौज में मेरा जो रिश्तेदार है, वह और उसके साथी सब मारे जाएँगे। रानी साहब का नुकसान होगा।'

'मैं किसीसे न कहूँगा, मगर मैं चला जाऊँ या सो जाऊँ तो आपका ठौर खाली हो जाएगा। फिर यदि दुश्मन यहाँ होकर रात में धावा बोल दे तो अपना कितना बड़ा नुकसान न होगा?'

'यह तो छोटी सी खिड़की है। इसकी खबर भी अंग्रेजों को न होगी।'

'जैसा आप उचित समझें। मैं सोचता हूँ, हर हालत में मेरा इस ठिये पर रहना आपके लिए लाभदायक होगा।'

'खूब, आप रहिए। मगर जब सब लोग सो जाएँगे तब मैं जाऊँगा।'

'लेकिन फाटक नहीं खोलना चाहिए।'

'फाटक पर ताले पड़े हैं। मैं मुहरी के रास्ते जाऊँगा।'

'मुहरी, कौन सी मुहरी?'

'वही, जो खिड़की की बगल में है।'

जब सब सो गए, पीरअली ने बहरामुद्दीन को मुहरी दिखाई और उसीमें होकर बाहर चला गया।

आध मील चलने के उपरांत वह अंग्रेजी छावनी के पास पहुँचा। टोका गया। उसने पूर्व-निश्चित संकेत को कहा। संतरी ने आगे बढ़ने दिया। कई अड्डों पर रोका जाने और अनुमति पाने पर पीरअली रोज और उसके मातहत दलनायकों के सामने पहुँचा। दुभाषिए के द्वारा तुरंत बातचीत हुई।

रोज—'किले में से जो गोलाबारी हुई, उसका प्रधान नायक कौन है?'

पीरअली—'गुलाम गौस खाँ और भाऊ बख्शी।'

रोज ने बागियों का रजिस्टर लौटवाया-पलटवाया। उसमें ये नाम न थे।

रोज—'ये लोग कौन हैं?'

पीरअली—'रानी साहब के नौकर हैं।'

रोज—'ओरछा फाटक और सैंयर फाटक पर कौन हैं?'

पीरअली—'दीवान दूल्हाजू ओरछा फाटक पर हैं और कुँवर खुदाबख्श सैंयर फाटक पर।'

फिर रजिस्टर देखा गया। ये नाम भी न निकले।

रोज—'कोई लालता ब्राह्मण है?'

पीरअली—'है, किले में है।'

रोज ने दाँत पीसे। बोला, 'जनरल कौन है?'

पीरअली—'खुद रानी साहब। उनके नीचे दीवान जवाहरसिंह जागीरदार काम करते हैं?'

रोज—'कुल कितने गोलंदाज हैं?'

पीरअली—'बे-हिसाब, बहुत सी औरतें गोलंदाज हैं।'

रोज—'बाई जॉव! स्टुअर्ट, यह झाँसी तो महज नरक (हैल) है। औरतें गोलंदाज! कल दूरबीन से अच्छी तरह देखूँगा।'

स्टुअर्ट—'बारूद बनाने का कोई कारखाना है या पहले से बनी रखी है?'

पीरअली—'पहले की बनी रखी है और बनाने का कारखाना भी है।'

रोज—'इट इज स्मोक लैस पाउडर (धुआँ न देनेवाली बारूद है।)

स्टुअर्ट—'उत्तरी दरवाजे किसके सुपुर्द हैं?'

पीरअली—'ठाकुरों, काछियों और कोरियों के हाथ में। दतिया फाटक तेलियों के हाथ में है।'

रोज—'दी होल पीपुल एगेन्स्ट अस (पूरी जनता हमारे खिलाफ है!) अच्छा तुम किस जगह काम करते हो?'

पीरअली—'सागर खिड़की पर।'

रोज—'हमारे हवाले कर सकोगे?'

पीरअली—'खुशी से, मगर आपको फायदा कुछ न होगा। सागर खिड़की की पीठ पर खजांची की कोठी है। उसपर तोपखाना है। वह मेरे काबू का नहीं है। वहाँ पठान और ठाकुर हैं।'

रोज—'कोई औरतें हाथ आ सकती हैं?'

पीरअली—'तौबा-तौबा! झाँसी की औरतें पूरी शैतान हैं। एक नाचनेवाली मेरी जान-पहचान की है, मगर वह जासूसी महकमे की प्रधान है और अब तोप भी चलाती है।'

रोज—'डांसिंग गर्ल ए गनर! (नाचनेवाली गोलंदाज!) व्हाट एल्स हैव आई टु हियर इन दिस डैम्ड एकरसैड प्लेस (इस सत्यानाशी पलीत जगह में मुझको अब क्या सुनना बाकी रह गया है)?'

स्टुअर्ट—'मगर जासूसी महकमे का अफसर तो एक मोतीसाईं सुना गया था?'

पीरअली—'जी नहीं, वह अफसर यही नाचनेवाली है और उसका नाम मोतीबाई है।'

वे सब हँस पड़े।

रोज ने कहा, 'वी हैव मेड फूल्स ऑफ अस। (हम लोग बेवकूफ बन गए।) अच्छा, किसी एक फाटकवाले से हमको मिला दो। तुमको और उसको बहुत इनाम मिलेगा।'

पीरअली—'कोशिश करूँगा।'

रोज—'तुम बता सकते हो, शहर और किले पर हमारी तोप का गोला कहाँ से अच्छा पड़ेगा?'

पीरअली—'जार पहाड़ी पर से।'

रोज—'ओ सिली, (मूर्ख) जार पहाड़ी से किले का बहुत कम नुकसान होगा।'

पीरअली—'जी नहीं, किले की पश्चिमी दीवार, जो मटीली टौरिया पर है, बहुत कम ऊँची है। उसकी दाहिनी बगल में शंकरगढ़ किले का उत्तर-पश्चिम हिस्सा है। इसीमें पानी पीने का कुआँ और रानी साहब के पूजन का मंदिर है। तमाम औरतें, जो सिपाहीगिरी का काम करती हैं, इसी जगह दुपहरी या शाम को जमा होती हैं। इस जगह के तोड़ने से किला हाथ में आ जाएगा और शहर की एक इमारत न बचेगी।'

रोज—'और उत्तर की ओर से?'

पीरअली—'उन्नाव फाटक और भाँडेरी फाटक की सीध में मटीले टेकड़े हैं, जिनकी वजह से आपका तोपखाना कामयाब न हो सकेगा।'

रोज—'अच्छा, तुम हमको दक्षिण तरफ का कोई फाटकवाला मिला दो।'

पीरअली—'मैंने अर्ज की न—कोशिश करूँगा।'

रोज ने पीरअली को धन्यवाद देकर वापस किया।

पीरअली जब सागर खिड़की पर वापस आया, उसने बहरामुद्दीन को सावधान पाया।

पीरअली ने कहा, 'खुदा करके लौट पाया हूँ। आज बहुत थोड़ा भेद मिल पाया है। कल मौका मिलते ही फिर जाऊँगा।'

बहरामुद्दीन ने पूछा, 'आज कुछ मालूम हो पाया या इतनी मेहनत सब बेकार हो गई?'

'बेकार तो नहीं गई', पीरअली ने उत्तर दिया, 'यह मालूम कर लाया हूँ कि एक भी तोप या तोपखाना हिंदुस्तानी

सिपाही के हाथ में नहीं है। सब तोपें अंग्रेजों ने अपने काबू में रख छोड़ी हैं।'

'इतना तो मुझको भी मालूम है कि अंग्रेजों ने हिंदुस्तानियों का भरोसा करना बिलकुल छोड़ दिया है।'

'इसपर भी गोरों के साथ भोपाल, हैदराबाद और ओरछा रियासत के दस्ते हैं और मद्रास की काली पलटन भी।'

'ओरछा रियासत का दस्ता उत्तर की ओर अंजनी की टौरिया पर तैनात है।'

'तुमको कैसे मालूम ?'

'किले में चर्चा थी। रानी साहब के जासूस ने खबर दी होगी।'

पीरअली ने सोचा, 'बहरामुद्दीन चतुर जासूस मालूम होता है, सावधान होकर काम करना चाहिए।'



: ३८ :

उसी रात रोज ने सतर्कता के साथ जार पहाड़ी पर तोपखाने के मोरचे बाँधे। सुबह होते ही तोपों के मुहरे ठीक किए, निशाने साधे। तोपों पर पलीते पड़े और शहर का विध्वंस आरंभ हो गया। लोग बेहिसाब मरने और घायल होने लगे। जहाँ-तहाँ आग लगी। बाजार बंद रहे। साधारण जनता भूखी-प्यासी मरने लगी। शहर में हाहाकार मच गया। झाँसी की गलियाँ वीरान दिखने लगीं। किले की पश्चिमी दीवार में सूराख हो उठे।

शहर का हाल जानकर रानी दु:खी हुईं। तुरंत सवार होकर किले से उतरीं और बरसते हुए गोलों में होकर प्रत्येक मुहल्ले को उत्साह दान किया। आग बुझाने का बहुत अच्छा प्रबंध किया। अन्न क्षेत्र और सदावर्त कायम किए। तब किले को लौटीं।

लौटते ही गुलाम गौस के पास पहुँचीं। उसने भक्तिपूर्वक प्रणाम किया।

'खाँ साहब, आज पश्चिम की ओर कोई नया मोरचा बना है। इसका निरोध होना ही चाहिए', रानी ने कहा, 'चौथाई नगर बरबाद हो गया है। कल न जाने क्या गति होगी।'

'दक्षिणी मोरचे का सरकार इंतजाम कर दें', गौस ने निवेदन किया, 'मैं अंग्रेजों के उस मोरचे को देख लूँगा।'

रानी ने कहा, 'मैं मोतीबाई को भेजती हूँ।'

गौस बोला, 'वह कमाल की गोलंदाज हैं, सरकार, मगर इस मोरचे को न सँभाल पाएँगी। अंग्रेज लोग दक्षिण के सिवाय और किसी ओर से नहीं आ सकते।'

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा ऐसा विचार क्यों है?'

'हुजूर', गौस ने उत्तर दिया, 'इसी दिशा से किला अत्यंत निकट पड़ता है।'

रानी ने कहा, 'बख्शिन को यहाँ भेज दूँ?'

'भेज दीजिए, सरकार', गौस ने सहर्ष स्वीकार किया, 'वह बड़े खानदान की हैं।'

रानी की त्योरी बदली, परंतु उन्होंने तुरंत नियंत्रण किया। सोचा—'आत्मत्याग में यह वेश्या-पुत्री किसी खानदानवाले से कम है? हे भगवान्, त्याग में भी ऊँच-नीच!' और चली गईं।

बख्शिन ने दक्षिणी बुर्ज की 'घनगरज' और उसकी 'छोटी बहिनों' को सँभाला। वह गौस के बताए क्रम पर काम करती रही।

गुलाम गौस तुरंत पश्चिमी बुर्ज पर पहुँचा। यहाँ लालता काम कर रहा था। गौस ने बारीकी के साथ दूरबीन द्वारा निरीक्षण किया। बोला, 'पंडितजी, अंग्रेजों का मोरचा पहचाना?'

'वह देखो, काली टौरों के पीछे है।'

'नहीं पंडितजी, काली टौरों के पीछे महज बारूद का धुआँ किया जा रहा है, जिससे हम लोग धोखा खाते रहें। वे जो ताजा लाल मिट्टी के ढेर लगे हुए हैं, तोपें वहाँ हैं।'

लालता ने दूरबीन पकड़ी और देखा। असहमत हुआ।

'खाँ साहब', लालता ने कहा, 'मिट्टी और बजरी के इन ढेरों में तोपें नहीं बिठाई जा सकतीं।'

'माफ कीजिएगा, पंडितजी', गौस बोला, 'तोपें खास मतलब से उन्हीं ढेरों में बिठाई गई हैं। जरा ठहरिए।'

गौस ने तोपों पर दूरबीनें कसीं। तोपों को इधर-उधर खिसकाकर ठीक किया। निशाने बाँधे, बारूद और गोले भरे। इस कार्य में उसको अधिक समय नहीं लगा।

इसके बाद इधर गौस ने तोपों को पलीते दिए, उधर वे मिट्टी के ढेर उधड़ गए। मरे हुए तोपची नजर आए, उलटी हुई और टूटी तोपें।

फिर बाढ़ें की गईं।

अंग्रेजों के पश्चिमी मोरचे का जवाब बिलकुल बंद हो गया। नगर में चैन हो गया। गौस ने जाकर रानी को प्रणाम किया। रानी ने सोने के चूड़े मँगवाकर गौस को अपने हाथ से पहनाए। रानी हर्ष में मग्न थीं और गौस का खुरदरा चेहरा आँसुओं से तर था। तीसरे पहर के उपरांत कुमुक बदली। स्त्रियों ने तोपें हाथ में लीं और भीषण गोलाबारी शुरू कर दी।

कामासिन की टौरिया पर से रोज ने दूरबीन से देखा। बगल में उसका फौजी डॉक्टर लो था और पास ही मातहत जनरल स्टुअर्ट।

रोज ने कहा, 'ओह, स्त्रियाँ तोप चला रही हैं! स्त्रियाँ गोला-बारूद ढो रही हैं। कुछ खाना-पीना बाँट रही हैं। टूटी हुई दीवारों और कँगूरों की मरम्मत में मदद दे रही हैं। इतनी तरतीब से, इतनी तेजी से हिंदुस्तानियों को काम करते आज देखा। अचरज होता है।'

लो ने दूरबीन हाथ में ली। देखते ही बोला, 'जनरल, पेड़ों की छाया में कुछ स्त्री-पुरुष काम कर रहे हैं। हमारा एक गोला उनके बीच में पड़ा। धूल फिंकी। फिर भी वे सब वहीं-के-वहीं।'

रोज और स्टुअर्ट ने भी निरीक्षण किया। स्टुअर्ट बोला, 'ये सब नेपोलियन हो गए क्या?'

लो ने कहा, 'तब झाँसी हमारा वाटरलू होगा।'

रोज ने मुसकराकर झिड़का, 'हिश, अभी बहुत घोर युद्ध करना पड़ेगा। यह रानी नेपोलियन नहीं, 'जॉन ऑफ आर्क' सी जान पड़ती है।'

स्टुअर्ट ने कहा, 'इसको जिंदा पकड़ सकें तो कमाल होगा।'

उसी समय तार खटखटाया।

मालूम हुआ कि पश्चिमी मोरचा सब-का-सब तहस-नहस हो गया। स्टुअर्ट को पश्चिमी मोरचे को फिर सँभालने की आज्ञा दी। वह चला गया। स्टुअर्ट के ब्रिगेड का अधिकांश दक्षिणी मोरचे पर था। उसके दलनायक को रोज ने तार द्वारा आदेश दिया, 'बहुत जोर के साथ किले की दक्षिणी बुर्ज पर गोलाबारी करो। उस 'व्हिसलिंग डिक' को किसी तरह बंद करो।'

गौस के 'घनगरज' तोपखाने के शोर और मृत्यु-वमन का नाम इन लोगों ने व्हिसलिंग डिक—हल्ला करनेवाला शैतान—रखा था।

आज्ञा पाते ही दक्षिणी ब्रिगेड ने अत्यंत तीव्रता के साथ काम शुरू किया। उनके तोपखाने लगातार भयंकर आग और गोले उगलने लगे। बख्शिन जवाब-पर-जवाब दे रही थी। बारूद और धुएँ से उसका सुंदर चेहरा काला पड़ गया था। पसीने की रेखाओं से जितना चेहरा धुल गया था, केवल उतना उसके स्वर्ण वर्ण को प्रकट कर रहा था। ब्रिगेड ने तोपों की रक्षा में किले की ओर दौड़ लगाई। घनगरज के तोपखाने ने उनका संहार कर दिया। बहुत सी अंग्रेजी फौज मारी गई। उनको लौटना पड़ा। परंतु उनके तोपखाने ने एक काम कर लिया।

एक गोला बुर्ज के कँगूरे को तोड़कर बख्शिन के कंधे पर लगा। कंधा टूट गया। वह अचेत होकर गिर पड़ी।

बख्शी को पूर्वी बुर्ज पर समाचार मिला। निर्मम होकर बख्शी ने उत्तर दिया, 'उससे बढ़कर झाँसी और झाँसी की रानी हैं। शाम को देखूँगा। तब तक दाह मत करना।'

बख्शी अपने काम पर जुट गया। उसने एक बार आकाश की ओर देखा। गीता के कृष्ण को याद किया और

अपने को कठोर-से-कठोर संकट में डालता हुआ, तोपों को दुगुनी तेजी के साथ चलाने लगा। रोज का पूर्वी मोरचा बुझ गया।

परंतु बख्शी का पलीता सुलगता और आग देता रहा।

बख्शिन चली गई। रानी तुरंत आईं। बख्शिन के रक्तमय शव को गोद में रख लिया। गला रुद्ध हो गया, एक शब्द भी मुँह से नहीं निकल रहा था और न आँखों से आँसू। तोपखाना बंद हो गया था। अंग्रेजों के गोले धड़ाधड़ बुर्जों तथा दीवारों से टकरा रहे थे और उनको ढा रहे थे। मुंदर ने दूरबीन से अपनी बुर्ज पर से देखा। दौड़कर आई।

घबराकर बोली, 'बाई साहब!'

रानी के मुँह से केवल एक शब्द निकला, 'गौस।'

मुंदर समझ गई। दौड़कर पश्चिमी बुर्ज से गुलाम गौस को बुला लाई।

गौस ने देखा, झाँसी की रानी धूल में बैठी बख्शिन के शव से लिपटी हुई हैं।

गौस ने कहा, 'यह क्या सरकार, अभी न जाने कितने सरदार कुरबान होंगे! हुजूर हम लोगों को समझाती हैं कि स्वराज्य की लड़ाई किसीके मरने-जीने पर निर्भर नहीं है। और फिर बख्शिनजू तो अमर हो गईं। उठिए, देखिए उस जवाँमर्द बख्शी को। वह अपने ठिये पर अटल है। ऐसा मोह करेंगी तो हम लोग गोरों से कितने दिन लड़ सकेंगे? आप यहाँ से हट जाएँ और दीवानेखास में बैठकर हुक्म भेजती रहें। इनको मजा चखाता हूँ।'

रानी बख्शिन के शव का आवश्यक प्रबंध करके दीवानेखास में चली गईं।

गौस खाँ ने 'बिसमिल्लाह' किया और घनगरज को सँभाला। तीन बाढ़ों में ही अंग्रेजी मोरचे का तोपखाना, तोपची और तोपखाने पर काम करनेवाले—सब स्वाहा हो गए।

गौस ने अपने साथियों से कहा, 'यह तो मेरे साथी सरदार को मारने का बदला हुआ, अब कुछ परसाद भी देता हूँ। देखो झोकनबाग के पूर्व में गुसाइयों के मंदिरों की आड़ में ये लोग सैंयर फाटक पर गोलाबारी कर रहे हैं। बिचारा खुदाबख्श मंदिरों के लिहाज के कारण जवाब नहीं दे पाता, परंतु मंदिरों के बीच में सँध है। उसी सँध में होकर अंग्रेजी तोपखाना काम कर रहा है। वह सँध खुदाबख्श की सीध में नहीं है, पर घनगरज की सीध में है।'

साथी ने अनुरोध किया, 'मंदिर पर गोला न पड़े, खाँ साहब। नहीं तो बड़ा अनर्थ हो जाएगा।'

'अगर मंदिर की ईंट भी मेरे गोले से टूट जाए तो तलवार से मेरी गरदन कलम कर देना।'

गौस ने घनगरज का मुहरा मोड़ा, परंतु वहाँ से सीध नहीं बैठती थी और न निशाना जमता था। तोप को ज्यों-का-त्यों करके वह रघुनाथसिंहवाली बुर्ज पर गया।

'दीवान साहब', गौस ने विनय की, 'दो पल के लिए तोप मुझे बख्श दीजिए। सैंयर फाटक के सामनेवाला अंग्रेजी तोपखाना बंद करना है।'

'तोप खुशी से लीजिए', रघुनाथसिंह ने कहा, 'परंतु अंग्रेजी तोपखाने पीछे मिटेंगे, मंदिर पहले।'

गौस ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'दूरबीन दीजिए, मुझको मंदिरों की सँध से केवल अंग्रेजी तोपखाना देखना है। मंदिरों को मैं देखूँगा ही नहीं।'

रघुनाथसिंह को गुलाम गौस की गोलंदाजी का भरोसा था। दूरबीन और तोप उसके हवाले कर दी।

गौस ने तोप के ठिये को सँभाला, सुधारा और दूरबीन लगाकर निश्चिंतता के साथ गोला छोड़ा। उसका जो कुछ फल हुआ, उसे रघुनाथसिंह ने दूरबीन से देखा।

अंग्रेज तोपची मारे गए। तोपें नष्ट हो गईं और मंदिर बच गए।

उसी समय गुलाम गौस खाँ को रानी ने अपनी तौल भर चाँदी का तोड़ा पुरस्कार में दिया।

संध्या समय बख्शिन के शव का दाह किया गया।

बख्शी हर्षोन्मत्त था, परंतु उसकी आँखों में पागलपन था।

कभी-कभी वह असंगत और अप्रासंगिक बात कहता था। 'नैनं छिदन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक:।' और कोई समझा हो या न समझा हो परंतु रानी इस महावाक्य को समझती थीं।

रात हुई। लड़ाई ने कुछ शांति पकड़ी। पीरअली के पास बहरामुद्दीन पहुँच गया।

पीरअली ने तुरंत कहा, 'देखा, मेरे पता लगाने के कारण गोलंदाजों को कितना लाभ हुआ।'

बहरामुद्दीन को शक हुआ। उसको दबाकर बोला, 'बेशक हुआ होगा, मगर मैं किले से गोलंदाजी नहीं कर रहा था, इसलिए कुछ कह नहीं सकता।'

पीरअली ने शेखी मारी, 'हमारी खिड़की के सामने अंग्रेजों का कोई मोरचा नहीं पड़ता, नहीं तो दाँत खट्टे कर देता।'

बहरामुद्दीन ने खुशामद की, 'पीर साहब, कहिए, दाँत और सिर तोड़ देते।'

पीरअली ने प्रसन्न होकर कहा, 'एक ही बात है।'

जब कुछ रात बीत गई, पीरअली ने बहरामुद्दीन से धीरे से कहा, 'अब मैं जासूसी पर जाता हूँ, आप यहाँ होशियार रहना।'

बहराम ने मंजूर किया।

पीरअली मुहरी के रास्ते से बाहर हो गया और उसके पीछे-पीछे चुपचाप बहराम। आध मील चलने के बाद, जब पहले छबीने के संतरी ने टोका तब पीरअली ने संकेत शब्द में उत्तर दिया। पीरअली आराम के साथ अंग्रेजी छावनी में दाखिल हो गया। बहराम बहुत उदास धीरे-धीरे सागर खिड़की को लौट आया।

जब पीरअली लौटा, बहराम ने प्रश्न किया, 'आज की क्या खबर लाए, पीर साहब ?'

उसने उत्तर दिया, 'ज्यादा पता नहीं लगा। सिर्फ इतना मालूम कर सका कि कल शहर पर गोलाबारी पश्चिम की तरफ से होगी।'

'आज तो सरदार गुलाम गौस ने कमाल कर दिया। जिधर की तोप सँभाली उसी तरफ कहर बरसा दिया।'

'हमारी बारूद भी बहुत अच्छी है। धुआँ होता ही नहीं। अंग्रेजों को पता नहीं लगता कि तोपखाने किधर लगे हुए हैं।'

'तो भी वे लोग हमारे गोलंदाज-पर-गोलंदाज मार रहे हैं। खैर है कि हमारे यहाँ तोपचियों की कमी नहीं है, वरना झाँसी का घंटे भर भी बचना मुश्किल था।'

'बारूद कहाँ बनाई जाती है, खाँ साहब।'

'महल के उत्तर में इमली के पेड़ों के नीचे। आपने क्या नहीं देखा ?'

'नहीं तो, मैं उस तरफ नहीं गया, खाँ साहब।'

'एक बात मुझको भी बताइए, पीर साहब, आप अंग्रेजी छावनी में पहुँच कैसे जाते हैं ?'

'कुछ न पूछो, खाँ साहब, गड्ढों, खाइयों और झाड़-झंकाड़ की आड़ें लेता हुआ जाता हूँ। जरा चूकूँ तो गोली सिर पर पड़े। जोखिम का काम है। सीटी का एक बँधा हुआ इशारा करता हूँ। मेरा रिश्तेदार आ जाता है और बातें बता देता है। मैं लौट आता हूँ। फिर वही मुहरी की मुसीबत। इतना बदबूदार कीचड़ है कि तोबा!'

बहराम के पैरों में भी कीचड़ लगा हुआ था, पीरअली ने देख लिया।

उसने पूछा, 'खाँ साहब, तुम्हारे पैरों में कीचड़ कैसा ?'

उसने भोलेपन के साथ उत्तर दिया, 'मैं भी मुहरी में होकर बाहर थोड़ी दूर चला गया था। देखना था कि कैसा रास्ता है? आपके जाने के बाद गया और तुरंत लौट आया।'

पीरअली को संदेह हो गया। उसने एक निश्चय किया। बहराम का संदेह जाग्रत हुआ, उसने भी एक संकल्प किया।



: ३१ :

सुंदर को उस रात दूल्हाजू की कुमुक सौंपी गई। उसने दूल्हाजू से गोलंदाजी सीखी थी, इसलिए वह उनका आदर करती थी। संध्या के उपरांत सुंदर ओरछा फाटक के ऊपर दूल्हाजू के पास पहुँच गई।

दूल्हाजू ने दिन में खूब तोप चलाई थी। वह प्रसन्न था और सुंदर उस दिन के काम से संतुष्ट थी, केवल बख्शिन के देहांत पर कभी-कभी मन कसक उठता था।

दूल्हाजू ने सुंदर से कहा, 'आज तो बाई मैं थक गया हूँ। सारा शरीर दुख रहा है।'

'आप विश्राम करिए। मैं रात भर सावधान रहूँगी।'

'दिन भर फिर वही करना पड़ेगा।'

'मैं दिन में भी आपकी जगह काम करती रहूँगी।'

'और कल रात?'

'रात को भी काम कर दूँगी। तब तक आप सुस्ता लेंगे। परसों दिन में आप तोपखाना सँभाल लेना। मैं सो लूँगी। रात का काम फिर पकड़ लूँगी।'

'सुंदर, तुम बहुत प्रबल हो।'

'आपकी कृपा।'

'और अत्यंत सुंदर।'

'इसका उत्तर कुछ नहीं दे सकती। भगवान् ने जैसा बनाया, वैसी हूँ।'

'तुमको देखते ही, तुम्हारे दर्शन करते ही, न जाने मेरा चित्त कैसा हो जाता है। तुम तो महल की रानी होने योग्य हो।'

'रानी तो एक ही हैं— और एक ही हो सकती हैं।'

'सुंदर, मैं तुमको अपने हृदय से लगाना चाहता हूँ। क्या कहती हो?'

'यही कि आप बहुत नीच हैं।'

दूल्हाजू इस उत्तर की आशा नहीं कर रहा था। उसने अपनी ठेस को मुश्किल से सँभाला। उत्तेजित हुआ। बोला, 'जानती हो, मैं ठाकुर हूँ।'

सुंदर ने दृढ़ सुहावने स्वर में कहा, 'जानते हो, मैं कुणभी हूँ, जिस जाति की सहायता से छत्रपति ने एकछत्र राज्य स्थापित किया था।'

दूल्हाजू यकायक हँस पड़ा। बोला, 'सुंदरबाई, मैं तुमसे परम प्रसन्न हुआ। मैंने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही यह सब कहा था।'

सुंदर ने स्थिरता के साथ कहा, 'हर्ष है कि आपकी परीक्षा शीघ्र समाप्त हो गई।'

दूल्हाजू की आँख से लौ छूट पड़ी, परंतु सुंदर ने नहीं देखी।

'तोपखाना सँभालो।' दूल्हाजू बोला, 'मैं सवेरे काम पर आ जाऊँगा।' और अधिक वह कुछ न कह सका। चला गया।

अब सुंदर का क्षोभ जाग्रत हुआ। खीझकर अपने मन में कहा, 'दो जूते मुँह पर न लगा पाई। बड़ा सरदार बना फिरता है। मेरे स्त्रीत्व को इतना दुर्बल समझा!'

सवेरा होते ही दूल्हाजू अपने ठिये पर आ गया। सुंदर से कोई बात नहीं हुई। उसने ऐंठ के मारे क्षमा-प्रार्थना तक नहीं की। सुंदर ने रात का सब हाल रानी को सुनाया।

रानी ने सुंदर को वर्जित किया, 'किसीसे कुछ मत कहना। गोलंदाज बहुत मारे गए हैं। यदि मेरे पास काफी आदमी होते तो दूल्हाजू को अपने हाथ से कोड़े लगाती और झाँसी के बाहर कर देती, परंतु इस समय जरा सह लेना चाहिए। तुझे अनुमति देती हूँ कि यदि वह फिर कोई बेहूदी बात कहे तो अकेले में जूते लगा देना। तू उसे कुश्ती में पछाड़ सकती है।'

सुंदर को अच्छा लगा। चुप रही। रानी ने समझा कि इतने से संतुष्ट नहीं हुई।

उन्होंने दूल्हाजू को बुलाया और अकेले में काफी डाँटा-फटकारा। कहा, 'अबकी बार तुमको क्षमा किया। अपना काम करो। ऐसा ओछापन न करना।'

दूल्हाजू काम पर शीघ्र लौट गया।

उसने सोचा, एक ने नीच कहा, दूसरी ने ओछा। मेरे सच्चे प्रेम को किसीने न पहचाना। सुंदर एक छोटी जाति की स्त्री है। मैं उसको खुल्लम-खुल्ला रख लेता। ठकुराइन बन जाती। लेकिन बड़ी पाजी औरत है और रानी औरतों की तरफदार। मैंने कहा ही क्या था? विश्वास दिलाया कि उसकी परीक्षा कर रहा था, परंतु रानी ने विश्वास नहीं किया। इस प्रकार का बरताव तो बड़े-बड़े महाराज भी मेरे साथ नहीं कर सकते।

दूल्हाजू उस बरताव को अपना अपमान समझता था। उसपर भी वह अपना कर्तव्य शिथिलता और अन्यमनस्कता के साथ करता रहा। कुशल यही थी कि पिछले दिन गुसाइयों के मंदिरों के पासवाले तोपखाने के मिट जाने के कारण और रोज के पश्चिमी मोरचे पर अधिक जोर देने के कारण, ओरछा फाटक ने गोलाबारी का आह्वान नहीं किया।

दोपहर के बाद धूप कड़ी हो गई। लू भी चल उठी। दोनों ओर के तोपखाने और सिपाही अवकाश लेने लगे।

पीरअली दूल्हाजू के पास आया। राम-रहीम होने के उपरांत बातचीत होने लगी। पीरअली चाहता था कि कम-से-कम एक सरदार को अपने पक्ष में कर लूँ।

पीरअली—'दीवान साहब, आपको तो बड़ा कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। आपकी वजह से मेरी खिड़की पर दुश्मन कोई दबाव ही नहीं डाल पाता।'

दूल्हाजू—'परिश्रम तो सचमुच मुझको बहुत करना पड़ता है, पीर साहब। मारे जाने पर मेरे परिश्रम का कोई मूल्य भी आँका जाएगा या नहीं, इसमें संदेह है।'

पीरअली—'रानी साहब तो इनाम खुले हाथ देती हैं। गुलाम गौस को सोने के कड़े, अपनी तौल भर चाँदी का तोड़ा और कुँवर का खिताब बख्शा है।'

दूल्हाजू—'होगा। रानी पठानों और परदेसियों की केवल हेकड़ी पर ही प्रसन्न हो जाती हैं। खजाना उनके हाथ में है, चाहे जिसको लुटाएँ। मैं कितनी बार ओरछा के फाटक के सामने से अंग्रेजों को हटा चुका हूँ, कितनी बार मैंने उनके तोपखाने नष्ट किए, परंतु मुझको तो एक पैसा भी पुरस्कार में नहीं मिला। जी चाहता है कि यह लड़ाई समाप्त हो या अवसर मिले तो अपने घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'मैं ही, देखिए दीवान साहब, जासूसी में कितनी जान खपा रहा हूँ। पता लगाने के लिए रात में इधर-उधर अकेला भटकता हूँ। एक गोली या तलवार का वार पड़ जाए कि बस खतम हूँ, मगर कोई पूछनेवाला नहीं कि भैया तुम्हारा क्या हाल है। मेरे साथ एक गँवार पठान को और जोड़ दिया है। उसके मारे परेशान रहता हूँ।'

दूल्हाजू—'इधर मेरी भी यही परेशानी है। सुंदरबाई मेरी नायबी में है। उसकी परीक्षा लेने के लिए एक बात कही

कि वह पाजीपन पर आ गई। मैंने डाँटा। उसने रानी से मेरी शिकायत कर दी। रानी ने मुझसे ऐसी बातें कही हैं आज कि दिल टूट रहा है।'

पीरअली ने प्रयत्न किया अपने को रानी का जासूस प्रकट करने का, दूल्हाजू ने प्रयास किया अपने को दुखाया-सताया निर्दोष सिद्ध करने का। दोनों के मन परस्पर निकट आए, परंतु एक-दूसरे की बात को उनमें से किसीने नहीं समझा।

दूल्हाजू ने कहा, 'मुझे दिखता है कि हम लोग अंग्रेजों को हरा नहीं सकेंगे।'

पीरअली—'उन्होंने दिल्ली और लखनऊ को सहज ही तोड़ लिया। कानपुर को भी पराजित कर दिया है। सच्ची बात तो दीवान साहब, यह है कि झाँसी बेचारी का कोई बिरता नहीं।'

दूल्हाजू—'जी चाहता है कि आज ही इस्तीफा देकर, तुम्हारी मुहरी से घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'इस्तीफा देने की क्या जरूरत है? वैसे ही चले जाइए, परंतु चारों तरफ तार लगे हुए हैं और संतरियों के छबीले पड़े हुए हैं। जिनमें होकर छिपकर निकलना कठिन है।'

दूल्हाजू—'पीर साहब, आप अंग्रेजी छावनी में से खबर कैसे लाते हैं?'

पीरअली—'छावनी में मेरे कुछ रिश्तेदार भोपाली दस्ते में हैं। उनकी मदद से पहुँच जाता हूँ और वहाँ का हाल ले आता हूँ—और दीवान साहब, मैं अंग्रेजों के बड़े जनरल रोज साहब के सामने भी हो आया हूँ।'

दूल्हाजू—'आप लड़ाई शुरू होने के पहले गए थे?'

पीरअली—'नहीं, कल रात को ही तो पहुँचा था।'

दूल्हाजू—'फिर बचे कैसे?'

पीरअली—'सीधी सी बात। उनसे कह दिया कि मैं तो आपकी तरफ से जासूसी कर रहा हूँ।'

दूल्हाजू—'जनरल मान गया?'

पीरअली—'क्यों न मानता? दो-एक बातें बता दीं, उसको भरोसा हो गया।'

दूल्हाजू—'मैं भी जनरल के पास चलना चाहता हूँ।'

पीरअली—'यदि रानी साहब को खबर लग गई तो?'

दूल्हाजू—'तो जो हाल आपका होगा, वही मेरा भी।'

पीरअली—'मैं तो जासूस हूँ।'

दूल्हाजू—'मुझको भी उसी रंग में रँग लीजिए।'

पीरअली—'मगर जनरल के सामने आप अपने को जासूस नहीं कह सकेंगे।'

दूल्हाजू—'तब क्या कहूँगा? जाना तो उसके सामने अवश्य चाहता हूँ। शर्त यह है कि बचकर लौट आऊँ और यहाँ भी कोई गड़बड़ न हो।'

पीरअली—'जनरल ने यदि आपसे किसी काम को करने के लिए कहा तो?'

दूल्हाजू—'हाँ करनी पड़ेगी।'

पीरअली—'तो पहले हमारा-आपका ईमान हो जाए और कहीं भी, किसी प्रकार की बात न फूटने पाए।'

पीरअली ने दीन की और दूल्हाजू ने धर्म की पक्की सौगंध खाई।

पीरअली ने कहा, 'यदि अवसर मिला तो आज रात को, नहीं तो कल रात को चलेंगे।'

दिन भर पश्चिमी और दक्षिणी मोरचों पर घोर युद्ध होता रहा। उत्तर में उन्नाव, भाँडेरी और सूजा खाँ फाटकों पर भी गोलाबारी हुई। इस दिशा में ओरछा की सेना रोज के दस्ते के साथ काम कर रही थी, परंतु इस ओर झाँसी के

सैनिक और गोलंदाज ऐसी मुस्तैदी के साथ कर्तव्य पालन कर रहे थे कि झाँसी की इस दिशा से अंग्रेजों का कोई दस्ता नहीं आया था। इस राज्य को चरखारी-पराजय का पता लग गया था। राजा विजयबहादुर का देहांत हो चुका था। उत्तराधिकारी नाबालिग था। रोज के आक्रमण के पहले दतिया की रानी का भय था और अब तात्या टोपे का। इसलिए दतिया राज्य भयग्रस्त तटस्थता में था।

झाँसी का दतिया फाटक निर्भय था। किले की पश्चिमी बुर्ज का तोपखाना इसकी रक्षा किए हुए था। यही हाल खंडेराव फाटक का था। फिर भी इन फाटकों के तोपची हाथ-पर-हाथ धरे न बैठे थे।

संध्या हो गई, परंतु रात में गोलाबारी बंद न हुई। रात में गोले सर्राती हुई छोटी-छोटी लाल गेंदों की तरह मालूम पड़ते थे। इस गोलाबारी से शहर का थोड़ा सा नुकसान हुआ, परंतु किले का कुछ नहीं बिगड़ा। उस रात पीरअली बाहर नहीं जा पाया। दूल्हाजू कम सोया। उसने पीरअली की बाट जोही।

दिन निकलने पर फिर जोरों का युद्ध हुआ। अब तक गोरी पलटनें आगे बढ़-बढ़कर मर रही थीं। अब अधिकांश देशी पलटनें दिखाई पड़ीं, परंतु तोपखाने सब अंग्रेजों के हाथ में थे।

दोनों ओर के तोपची मर रहे थे और दूसरे तोपची उनकी जगह पर आ रहे थे। संध्या के समय किले के पश्चिमी मोरचे का तोपखाना बंद हो गया, कारण था दीवार का धुस्स हो जाना।

दीवार के टूट जाने से तोपखाना दिखाई पड़ने लगा। मुश्किल से तोपों को आड़ में किया। जार पहाड़ी की ओर से एक दस्ता झपटा। खंडेराव फाटक पर से सागरसिंह ने देख लिया। फाटक पर ताले पड़े थे। वैसे भी फाटक खोलने की आज्ञा न थी। सागरसिंह ने तोप चलाई, परंतु वह जल्दबाज था, इसलिए निशाना ठीक न बैठता था। खीझ उठा।

अपने साथियों से बोला, 'आज बुंदेलों की नाक कटती है और कुँवर सागरसिंह की मूँछ जाती हैं। जो मेरे साथ इन गोरों का सामना कर सके, वह तुरंत नीचे उतरे।'

एक ने कहा, 'रानी साहब की या दीवान जवाहरसिंह की आज्ञा ले लो।'

सागरसिंह ने उत्तर दिया, 'बावले हुए हो? जब तक किसीकी आज्ञा आएगी तब तक ये लोग किले में घुस आएँगे। तब उस आज्ञा को क्या हम चाटेंगे?'

रस्से की सीढ़ी लगाकर धड़ाधड़ सौ आदमी नीचे उतर गए। सबसे पहले सागरसिंह। ये लोग सपाटे से बगल की टौरिया की ओट में पहुँच गए। जैसे ही अंग्रेजी दस्ता आया, इन लोगों ने बंदूकों की बाढ़ छोड़ी। दस्ते ने भी बंदूक दागी। सागरसिंह की टुकड़ी की कोई हानि नहीं हुई, परंतु अंग्रेजी दस्ता छिन्न-भिन्न हो गया। इकट्ठा होने को था कि सागरसिंह अपने साथियों सहित तलवार लेकर पिल पड़ा। अंग्रेजी दस्ता सब नष्ट हो गया। कुँवर सागरसिंह भी खंडेराव फाटक के पास ही मारा गया। उसके कुछ आदमी बच गए। वे भीतर वापस आ गए। इन आदमियों की वीरता ने उस दिन झाँसी का किला बचा लिया।

रात हो गई। रानी को सागरसिंह के शौर्य का समाचार मिल गया। रानी की आँखों के सामने बरुआसागर की घटना का पूरा चित्र खिंच गया। रानी ने मन में कहा—'जिस देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं, वह स्वराज्य से बहुत दिनों तक वंचित नहीं रह सकता।'

रानी ने दीवार की मरम्मत अपने सामने करवाई। कारीगर कंबल ओढ़कर दीवारों की मरम्मत पर चिपट गए और रात भर में दीवार को ज्यों-का-त्यों कर लिया।

सवेरे पश्चिमी दरवाजे के अंग्रेजी मोरचे ने दूरबीन से देखा—जैसे दीवार का कभी कुछ बिगड़ा ही न था!

उस दिन अत्यंत भीषण युद्ध हुआ। दोनों ओर से निरंतर और तीव्र गोलाबारी हुई। इधर दीवारें टूट रही थीं उधर अंग्रेजों के मोरचे नष्ट हो रहे थे। इधर तोपची-पर-तोपची मारे जा रहे थे, उधर तोपखाने-पर-तोपखाने बंद हो रहे

थे। तुरंत दूसरे तोपची तोपों को सँभाल लेते थे। रानी की स्त्री सेना इस तरह काम कर रही थी जैसे देवी दुर्गा ने अनेक शरीर और अनेक रूप धारण कर लिये हों।

दीवार टूटी कि उसकी मरम्मत हुई। वह भी दिन–दहाड़े। मरम्मत करने का काम पुरुष कर रहे थे और पत्थर तथा चूना इत्यादि देने का काम स्त्रियाँ। गोले बरस रहे थे। ऐसे गोले जो फटकर अपने भीतर के कील–काँटे चारों ओर सनसना देते थे, परंतु न तो झाँसी की हिम्मत टूट रही थी और न झाँसी की रानी की। जैसे–जैसे संकट बढ़ता, वैसे–वैसे इनका साहस बढ़ता जाता।

यकायक एक गोला किले के भीतरवाले गणेश मंदिर पर गिरा और वह ध्वस्त हो गया। केवल मूर्ति बची। दूसरा शंकर किले में गिरा। उस समय आठ–दस ब्राह्मण पानी भर रहे थे। उनमें से आधे मारे गए, बाकी भाग गए। ये गोले पश्चिमी मोरचो से आए थे।

पानी की टूट पड़ी। तीन–चार घंटे लोगों को प्यासा रहना पड़ा। किले का पश्चिमी मोरचा सँभाला गया। अंग्रेजी मोरचे का मुँह बंद हुआ तब कुएँ से पानी आ पाया। फिर रात हुई और बहुत कुछ शांति। दोनों पक्ष थकावट में चूर थे।

इस रात पीरअली और दूल्हाजू को अवसर मिला।



: ४० :

बहरामुद्दीन सागर-खिड़की की तोप पर पीरअली की जगह आ गया। पीरअली ने उससे कहा, 'आज बहुत से पते लगाने के लिए अंग्रेजी छावनी में जाना है।'

'शौक से जाइए', बहराम बोला, 'अकेले ही जाइएगा? बड़ा खतरनाक काम है।'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'अकेले ही जाऊँगा। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जाएगा।'

पीरअली खिड़की पर से उतरा। थोड़ी देर ही ठहरा था कि दूल्हाजू आ गया। ओरछा फाटक पर उसकी जगह सुंदर आ गई थी।

दूल्हाजू को बहरामुद्दीन नहीं देख पाया।

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी में धँसे। धँसते ही दूल्हाजू ने नाक दबाई। धीरे से कहा, 'मीर साहब यह तो बहुत सँकरा और गंदा रास्ता है।'

पीरअली धीरे से बोला, 'दीवान साहब, वहाँ पहुँचने का यही एकमात्र मार्ग है।'

उन दोनों के निकल जाने पर धीरे से बहरामुद्दीन मुहरी में उतरा और आड़-ओट लेता हुआ पहले संतरी के छबीले तक चला गया।

संतरी ने टोका। पीरअली ने बँधे हुए संकेत की भाषा में जवाब दिया। वे दोनों छावनी में चले गए।

बहरामुद्दीन ने सोचा, पीरअली अवश्य कोई घातक षड्यंत्र रच रहा है और वह झाँसी के लिए शुभ नहीं जान पड़ता। आज दूसरा आदमी इसके साथकौनहै?

बहरामुद्दीन सावधानी के साथ लौट आया। हाथ-पैर धोकर मुहरी की बगल में बैठ गया और पीरअली की बाट जोहने लगा।

दूल्हाजू के साथ परीअली रोज के सामने पेश हुआ। स्टुअर्ट पास था। पूछताछ शुरू हुई।

रोज—'तुम्हारे साथ दूसरा आदमी कौन है?'

पीरअली—'दीवान दूल्हाजू ठाकुर साहब। ओरछा फाटक का तोपखाना इन्हींके हाथ में है।'

रोज—'मैं खुश हुआ। यह किसी राज-परिवार का पुरुष है?'

पीरअली—'जी हाँ।'

रोज—'आप क्या काम करोगे, दीवान साहब?'

दूल्हाजू—'जो कहा जाए।'

पीरअली—'यह सच्चे आदमी हैं, साहब। गंगाजली की सौगंध लेंगे।'

रोज समझ गया।

दूल्हाजू के पसीना छूट गया। निकल भागने को जी चाहा, परंतु वहाँ बाल बराबर भी साँस न थी।

रोज ने एक हिंदू सिपाही से लोटा भरकर मँगवाया।

दूल्हाजू से कहा, 'आपको गंगाजी की सौगंध खानी पड़ेगी।'

रानी का कुपित चेहरा सामने घूम गया। उसने आँखें खोल लीं।

दूल्हाजू ने लोटा दोनों हाथों में ले लिया। आँखें बंद कर लीं। रोज ने सोचा, शपथ गंभीरतापूर्वक ले रहा है।

पीरअली ने अनुरोध किया, 'सौगंध ले लीजिए, दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'गंगाजी मुझको मारें, जो मैं बेईमानी करूँ।'

रोज—'बेईमानी किसके साथ? शपथ लो कि कंपनी सरकार के साथ, अंग्रेजों के साथ बेईमानी नहीं करूँगा।'

पीरअली—'ले लीजिए सौगंध, दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'कंपनी सरकार के साथ, अंग्रेजों के साथ बेईमानी नहीं करूँगा।' और उसने लोटा नीचे रख दिया।

रोज ने कहा, 'अभी नहीं। लोटा फिर हाथ में लीजिए और यह कहिए कि ओरछा फाटक का तोपखाना या तो बेकार कर देंगे या तोपखाने से गोला नहीं छोड़ेंगे और ओरछा फाटक हमारे हवाले कर देंगे।'

दूल्हाजू ने तदनुसार कसम खाई।

पीरअली ने विनय की, 'हुजूर को इनाम भी इसी समय बता देना चाहिए।'

रोज ने तुरंत वरदान दिया, 'दो गाँव जागीर में दीवान साहब, हमेशा के लिए।'

दूल्हाजू ने क्षीण मुसकराहट के साथ स्वीकार किया।

दूल्हाजू ने प्रश्न किया, 'कब?'

रोज ने उत्तर दिया, 'जब हम झाँसी पर अधिकार करके शांति स्थापित कर लेंगे।'

'यह नहीं पूछा', दूल्हाजू ने कहा, 'वह काम कब करना होगा?'

रोज और स्टुअर्ट ने सलाह की।

रोज बोला, 'जब हमारे मोरचे के पीछे लाल झंडा देखो। लेकिन जब तक लाल झंडा न देखो तब तक गोले टेकड़ी के निचले हिस्से में लगें, हमारे तोपखाने या दस्ते पर गोला न आवे और हमारे तोपखाने का गोला तुम्हारे ऊपर न गिरेगा। या तो दीवार की जड़ में पड़ेगा या तुम्हारी बगल में, जो ऊँचाई पर बुर्ज है, उसपर पड़ेगा। यदि तुमने हमारे साथ बेईमानी की तो सबसे पहले तुमको फाँसी दी जाएगी।'

दूल्हाजू का चेहरा तमतमा गया।

'मैंने बहुत बड़ी कसम खाई है। इन मीर साहब को मालूम है कि रानी साहब से मेरा दिल बिलकुल फिर गया है।'

पीरअली ने समर्थन किया।

इसके उपरांत वे दोनों चले गए।

रोज ने स्टुअर्ट से कहा, 'राज-खानदान के लोगों को हाथ में रखना जरूरी है। डलहौजी ने इन लोगों को अपमानित करके हिंदुस्तान को बिलकुल ही खो दिया होता।'

स्टुअर्ट—'लेकिन आगे चलकर इन लोगों को सिर पर भी नहीं बैठाना है।'

रोज—'नहीं जी। वे सिर पर नहीं बैठना चाहते। वे तो अपनी मखमली गद्दियों पर बैठे रहना चाहते हैं। वहीं अडिग बने रहेंगे।'

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी पर आ गए। दूल्हाजू ने फिर नाक दबाई।

पीरअली ने मुहरी के सिर पर पहुँचकर कहा, 'दीवान साहब, लाल झंडेवाली बात याद रखना!'

दूल्हाजू धीरे से 'हुँ' करके ओरछा फाटक की ओर चला गया। उसके चले जाने पर पीरअली ने दीवार से सटा हुआ किसीको देखा। काँप गया।

बोला, 'कौन?'

बहराम ने आगे बढ़कर उत्तर दिया, 'मैं हूँ, मीर साहब।'

हृदय की धड़कन को दबाते हुए पीरअली ने कहा, 'म्याँ खाँ साहब, यहाँ क्या कर रहे थे?'

'मुहरी में छप-छप की आवाज सुनकर शक हुआ, इसलिए यहाँ आ गया। आपके साथ दूसरा आदमी कौन था?'

'होगा। आपको क्या मतलब?' पीरअली ने होश सँभालते हुए कहा, 'जासूसी महकमे की बातों में दखल नहीं देना चाहिए।'

बहराम—'आप तो कहते थे कि अकेले ही जाएँगे। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जाएगा।'

पीरअली—'आपको साथ ले जाता तो खतरा जरूर बढ़ जाता।'

बहराम—'यह दीवान साहब कौन आदमी था?'

पीरअली—'दीवान साहबों और खाँ साहबों की झाँसी में कोई कमी नहीं।'

बहराम—'हाँ, मीर साहब अलबत्ता बहुत थोड़े हैं।'

पीरअली—'अपना काम देखिए। मैं तो जाकर सोता हूँ। इतना खयाल रखिए कि किसीके राज में अपना पैर नहीं पटकना चाहिए।'

बहराम, 'मान लिया, मीर साहब, मान लिया। लेकिन इतना तो बता दीजिए कि आज किस तरह पहुँचे और क्या-क्या कर आए।'

पीरअली—'आप पीछे-पीछे क्यों न चले आए?'

बहराम—'गया था, लेकिन लाल झंडे की बात समझ में नहीं आई।'

पीरअली सन्नाटे में आ गया; परंतु उसको मनोनिग्रह का काफी अभ्यास था। बोला, 'लाल झंडेवाली बात रानी साहब को बताई जाएगी, आपको नहीं।'

बहराम ने कहा, 'रानी साहब से मैं कुछ अर्ज करूँगा।'

पीरअली अपने शयनागार में चला गया। उसको नींद नहीं आई। दो दिन पहले उसने एक निश्चय किया था। सबेरा होते ही वह रानी के पास पहुँचा।

पिछले दिन बहुत तोपची और सैनिक मारे गए थे। रानी ने रात में तोपचियों का प्रबंध कर लिया था। तड़के के पूर्व ही वह नए सैनिकों की भरती के उपायों में व्यस्त थीं। जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह भी उसी चिंतन में वहीं थे।

पीरअली ने तुरंत निवेदन किया, 'श्रीमंत सरकार, आज पश्चिमी मोरचे से बहुत जोर का हमला होगा। जब आपका ध्यान उस ओर अटक जाएगा तब दक्षिणी मोरचे से जो जीवनशाह की टौरिया की बगल में है, धावा बोला जाएगा। रात की जासूसी का यही समाचार है।'

रानी ने उपेक्षा के साथ कहा, 'देखूँगी। प्रबंध हो गया है।'

वह किसी काम के लिए शहर में जाने के लिए उद्यत थीं।

पीरअली हाथ जोड़कर बोला, 'श्रीमंत सरकार, उस बहरामुद्दीन को मेरे ठिये से हटा दिया जाए। वह मेरे काम में बहुत दखल देता है।'

'देखूँगी', रानी ने कहा, 'कुछ और कहना है?'

'हुजूर', पीरअली ने जरा थर्राए हुए स्वर में कहा, 'एक लाल झंडे के बारे में निवेदन करना है।'

रानी—'लाल-पीले झंडे के विषय में जो कुछ कहना हो, जल्दी कहो।'

पीरअली—'अंग्रेज धोखा देने के लिए खूनी झंडा किसी टेकड़ी पर उठाएँगे और वहाँ से गोलाबारी धूमधाम के साथ करेंगे, परंतु हमला करेंगे किसी दूसरी दिशा से।'

रानी—'समझ लिया। कुछ और?'

पीरअली—'बस हुजूर, केवल यह कि बहरामुद्दीन को मेरी बुर्ज पर से हटा दिया जाए।'

रानी अनसुनी करके जवाहरसिंह के साथ शहर की ओर गईं। पीरअली दूसरी ओर चला गया।

रानी को मार्ग में बहरामुद्दीन मिल गया, उसने रोक लिया।

अनुनय के साथ प्रार्थना की, 'पीरअली से होशियार हो जाएँ, सरकार। वह रात को अंग्रेजी छावनी में जाते हैं।'

रानी रात भर की जागी थीं। सैनिकों का तुरंत प्रबंध करना अत्यंत आवश्यक था। मार्ग की टोका-टाकी सहन नहीं हो रही थी।

बोलीं, 'तुमको कैसे मालूम?'

बहरामुद्दीन ने उत्तर दिया, 'मैं पीछे-पीछे गया था। अंग्रेज संतरी ने इनको टोका। इन्होंने इशारे की बोली में जवाब दिया। संतरी ने तुरंत छावनी में जाने दिया। यह पहले दिन की बात है, सरकार। गई रात वे किसी एक दीवान साहब को साथ ले गए थे। मैं फिर पीछे-पीछे गया। संतरी ने उसी तरह चिल्लाकर टोका। इन्होंने उसी तरह चिल्लाकर इशारे की बोली में जवाब दिया। दोनों को खट से छावनी में जाने की इजाजत मिल गई। ये लोग देर से लौटकर आए। जब दोनों अलग हुए, पीरअली ने दूसरे से कहा, 'दीवान साहब, लाल झंडेवाली बात याद रखना। मैं उन दीवान साहब को नहीं पहचान पाया। हुजूर, इस कार्यवाई में दगा है। द्रोह है। खतरा है।'

घोड़ा आगे बढ़ने के लिए लगाम चबा रहा था, पैर पटक रहा था।

रानी ने रुखाई के साथ कहा, 'तुम मूर्ख मालूम होते हो। अपना काम न करके दूसरों के पीछे-पीछे घूमते हो। अपना ठिया देखो।'

रानी आगे बढ़ गईं। साथ में जवाहरसिंह। जवाहरसिंह ने विनय की, 'सरकार, पठान मूर्ख नहीं है। पीरअली की जाँच होनी चाहिए।'

रानी ने उत्तर दिया, 'सामने का काम पहले निपटा लो और फिर जाँच करो। पता लगाना, यह कौन दीवान साहब है, जो पीरअली के साथ गया था।'

नए सैनिकों का प्रबंध करके रानी किले को लौट आईं। जवाहरसिंह शहर के इंतजाम में उलझ गया।

रानी ने जरा सा अवकाश मिलने पर मोतीबाई से बहरामुद्दीनवाली बात कही।

मोतीबाई बोली, 'पीरअली बेईमानी कर सकता है। साथ में दीवान दूल्हाजू गए होंगे। आप उनसे रुष्ट हुई थीं।'

रानी ने कहा, 'जब तक जाँच नहीं होती इन दोनों पर नजर रखनी चाहिए, परंतु सहसा ऐसा कोई काम न करना जिसके लिए पीछे पछताना पड़े। पीरअली ने पहले अच्छे कार्य किए हैं और दीवान दूल्हाजू ने ओरछा फाटक की अच्छी सँभाल की है। इस समय हाथ में कोई बढ़िया गोलंदाज दूल्हाजू की जगह भेजने के लिए नहीं है।'

'मेरे मन में आता है', मोतीबाई बोली, 'सुंदर को दीवान साहब के साथ दिन के काम के लिए कर दीजिए। रात के काम के लिए किसी और को भेज दिया जाएगा।'

रानी ने स्वीकार किया।

सुंदर रात की जागी थी। सोने के लिए तैयार हुई थी कि उसको यह योजना बताई गई। सुंदर की नींद भाग गई। वह नहा-धोकर और थोड़ा सा खा-पीकर ओरछा फाटक पर पहुँच गई।

उस दिन भी घनघोर युद्ध हुआ। दोनों तरफ विकट नरसंहार। केवल दो बातें विशेष हुईं—ओरछा फाटक की वह तोप जो दूल्हाजू के हाथ में थी अच्छी नहीं चली और एक गोला महल के सामने, जहाँ बारूद बन रही थी गिरा, फटा और बारूद जलकर धड़ाके के साथ पच्चीस-तीस स्त्री-पुरुषों को अपने साथ हवा में उठा ले गई, उनके अंगों

का भी पता न चला कि कहाँ गए।

बारूद में आग लग जाने के कारण किले में खलबली मच गई। भीषण नरसंहार तथा नगर के मकानों के भयानक विध्वंस के कारण लोगों में निराशा फैलने लगी। किले की दीवारों में जगह-जगह छेद हो गए थे। संध्या के उपरांत रानी शहर में गईं। दीवारों का निरीक्षण किया। मरम्मत कराई। उस समय जबकि अन्य रातों की अपेक्षा इस रात अधिक गोलाबारी हो रही थी और, इतनी शीघ्रता के साथ मानो कोई कल काम कर रही हो। रानी रात को देर से लौटीं। सीधी महादेव के मंदिर में गईं। ध्यान के उपरांत बारादरी में थोड़ी देर के लिए जा लेटीं। एक झपकी आई और उन्होंने स्वप्न में देखा—

'एक गौरवर्ण युवती, सुंदर आकृतिवाली। बड़े-बड़े काले नेत्र, लाल रंग की साड़ी का आंचल बाँधे हुए। आभूषणों से लदी हुई। वह स्त्री किले की बुर्ज पर खड़ी हुई अंग्रेजों के लाल-लाल गोलों को अपने कोमल करों में झेल रही है। कह रही है—'लक्ष्मीबाई, देख, इन गोलों को झेलते-झेलते मेरे हाथ काले हो गए हैं, चिंता मत कर। स्वराज्य की देवी अमर है।' रानी की आँख खुली। भयंकर गोलाबारी हो रही थी और होती रही। पर उन्हें कोई चिंता न थकान। झटपट जीने से उतरीं और स्वप्न का संवाद सेनापति और मुख्य-मुख्य दलपतियों को सुनाया। सवेरा होते-होते यह संवाद सर्वत्र किले और नगर में फैल गया। तमाम स्त्री-पुरुषों की नसों में बिजली-सी कौंध गई। डटकर युद्ध होने लगा। पहले दिन से भी अधिक घोर। उस दिन पीरअली और बहरामुद्दीनवाले मामले की जाँच-पड़ताल न हो सकी; परंतु संध्या समय रानी को मालूम हो गया कि दूल्हाजू ने अनमने होकर काम किया।

❑

: ४१ :

तात्या टोपे चरखारी को जीतकर कालपी वापस लौटा। उसकी सेना में ग्वालियर का वह यूथ भी था जिसने कानपुर में जनरल विंढम को पराजित करने में हाथ बँटाया था। सिपाही विजयोत्सव मना रहे थे और तात्या कालपी के विशाल शस्त्रागार का निरीक्षण कर रहा था। भाँति-भाँति के गोले ढाले जा रहे थे। बंदूकें बनाई और बाँधी जा रही थीं। दो हजार मन बारूद के होते हुए भी और बारूद तेजी के साथ तैयार की जा रही थी। अन्य प्रकार के शस्त्र और उनके अंगोपांग बनाए और खराद मशीनों पर सँभाले जा रहे थे। बहुत सी मशीनें नई और विलायती थीं।

उसी समय जूही और काशीबाई पहुँचीं। झाँसी का समाचार दिया। तात्या एक बड़ा सैन्य खंड लेकर झाँसी की सहायता के लिए आया, परंतु वह झाँसी के निकट नहीं पहुँच पाया। थोड़ी दूरी पर रोज से मुठभेड़ हो गई। काशीबाई इस युद्ध में मारी गई। तात्या अपनी बची-बचाई सेना और सामग्री को लेकर कालपी लौट आया। जूही उसके साथ आई।

रानी को तात्या के लौट जाने का हाल दूरबीनों से मालूम हो गया था, परंतु वह विचलित नहीं हुईं।

किले में रानी का वही क्रम जारी रहा—एक मोरचे से दूसरे मोरचे पर पहुँचना, निरीक्षण करना और उत्साह प्रदान करना। एक स्थल पर जवाहरसिंह से भेंट हो गई।

रानी ने पूछा, 'उस मामले की जाँच-पड़ताल की?'

जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'जी हाँ, सरकार, पीरअली झूठी कसम खाता है। कहता है कि दीवान दूल्हाजू को रक्षा के लिए साथ ले गया था। रात में जो जासूसी उसने की उससे और कुछ पता तो नहीं लगा, क्योंकि रोज ने अपनी योजना केवल अपने मातहत जनरलों को बताई थी, परंतु यह अवश्य मालूम हो गया है कि अंग्रेजों को अभी तक दो लाख रुपए की बारूद ही खर्च करनी पड़ी है। उनके पास बारूद की कमी हो गई है और गोले भी बहुत नहीं हैं। शायद कलकत्ते से कुमुक मँगवाई है।'

रानी ने कहा, 'मुझको भासता है, अंग्रेज लोग कल विकट युद्ध करेंगे। तात्या का जो सामान उन लोगों के हाथ में पड़ा होगा उससे उनको बहुत सहायता मिलेगी। न जाने बेचारी काशी और जूही कहाँ होंगी।'

जवाहरसिंह उत्तर ही क्या दे सकता था?

रानी ने एक क्षण सोचकर कहा, 'दीवान दूल्हाजू मिले? उनसे पूछा?'

'नहीं मिले', जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'कुमुक बदल गई है। सुंदरबाई ओरछा फाटक पर है। दीवान साहब कहीं चले गए हैं।'

'बहरामुद्दीन?' रानी ने प्रश्न किया।

जवाहरसिंह ने जबाव दिया, 'सागर खिड़की पर था। मैंने उसको सावधान रहने के लिए झिड़क दिया है।'

इसी समय किलेवाले महल पर जोर का धड़ाका हुआ। रानी किले की तरफ चलीं। जवाहरसिंह भी। रानी ने निवारण किया, 'आप शहर के मोरचों को एक बार फिर देखकर थोड़ा विश्राम कर लो। मैं देखती हूँ यह क्या है?'

रानी ने किले में जाकर देखा—गोला महल पर पड़ा था। महल के दो खंड नष्ट हो गए। पानी भरनेवाले ब्राह्मण और मंदिरों के पुजारी महल के बीचोबीच नीचेवाले खंड में छिपे हुए थे। रानी ने उनको दिलासा दी। खुद महल के पास टहलने लगीं। दो बज गए। गुलाम गौस पश्चिमी तोपखाने पर अन्य तोपचियों के साथ था। लालता मारा जा चुका था। दक्षिणी तोपखाने पर मोतीबाई, पूर्वी पर भाऊ बख्शी और केंद्रीय पर मुंदर। इन लोगों को महल का हाल

बताया। उन्होंने निशाने साधे। अनुभव से दुश्मन के ठीक स्थलों की सही जानकारी हो गई थी। गोलाबारी से अंग्रेजी तोपखाने बंद हो गए। महल में छिपे हुए ब्राह्मण इत्यादि पसीने में तर बाहर निकल आए और सुखपूर्वक सो गए।

सवेरे एक चिट्ठी बहरामुद्दीन ने रानी के हाथ में दी। वह उसका इस्तीफा था। उसमें लिखा था—

'मेरा विश्वास नहीं किया। मुझको उलटा डाँटा-फटकारा गया। मेरा मन काम में नहीं लगता। मैं नौकरी छोड़ता हूँ। हथियार पीरअली को दे दिए गए हैं। पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहिएगा।'

रानी को क्रोध आने को हुआ, परंतु उन्होंने संयम कर लिया। बोलीं, 'ऐन समय पर तुम जैसे लोग ही काम छोड़ते हैं। जाओ हटो।' और चिट्ठी उन्होंने अपने अँगरखे की जेब में रख ली।

दूसरे दिन जैसा युद्ध हुआ, उससे रोज की सेना के छक्के छूट गए। बहुत उपाय करने पर भी रोज उस दिन एक अंगुल बराबर भी सफलता प्राप्त न कर सका। नित्य की वही कहानी—दीवारों में छेद हुए, बुर्जों की मुँडेरें जगह-जगह पर टूटीं, शहर में मकान ध्वस्त हुए, आगें लगीं, कुछ लोग मरे, दीवारों और बुर्जों की मरम्मत तुरंत कर ली गई, आग बुझा ली गई। लोगों के मरने से जीवितों में और अधिक हिंसा जागी, दृढ़ता बढ़ी। रात को भी वही क्रम। युद्ध की भयंकरता ने स्थिरता पकड़ ली। वह झाँसीवालों के जीवन में एक नित्य की बात हो गई।

रानी ओरछा फाटक पर पहुँचीं। दूल्हाजू अभी ठिये से हटा न था। सुंदर भी मौजूद थी।

रानी ने यकायक पूछा, 'दूल्हाजू, तुम पीरअली के साथ अंग्रेज छावनी में कभी गए थे?'

'अंग्रेज छावनी में मैं', रुँधे गले से दूल्हाजू ने जवाब दिया, 'मैं, सरकार, कब?'

रानी—'कभी सही। गए या नहीं?'

दूल्हाजू—'मैं! मैं तो, कभी कहाँ गया?'

रानी—'नहीं गए?'

दूल्हाजू—'नहीं सरकार।'

रानी—'पीरअली कहता है कि तुम उसके साथ गए थे।'

दूल्हाजू—'वह झूठ बोलता है, सरकार।'

रानी—'संभव है। और वह लाल झंडा क्या है?'

दूल्हाजू—'लाल झंडा! लाल...कैसा? झंडा क्या, सरकार?'

रानी—'घबराओ मत, मैं लाल झंडे की सब बात जानती हूँ।'

दूल्हाजू—'मैं थक गया हूँ, सरकार। दिमाग काम नहीं कर रहा है। कुछ समझ में नहीं आ रहा है। लाल झंडा! पीरअली बड़ा बेईमान और झूठा है।'

सुंदर—'आज इनसे तोप ठीक नहीं चली।'

दूल्हाजू—'ये मुझसे व्यर्थ रुष्ट हैं। इनको बराबर प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता हूँ।'

रानी—'कोई बात नहीं। कल ठीक-ठीक काम करना। सुंदर साथ है। यह सहायता करेगी।'

रानी को बहरामुद्दीन याद आ गया। वह और अधिक इस्तीफे नहीं चाहती थीं।

सुंदर बोली, 'इनको किले में रख लीजिए। मैं आज रात और कल दिन भर तोपखाना सँभाले रहूँगी।'

रानी ने कहा, 'आज रात आराम के साथ काम कर लो, कल दिन में अवकाश नहीं मिलेगा। कल रात इस मोरचे का ऐसा प्रबंध करूँगी जिससे तुम दोनों को काफी विश्राम मिल जाए।'

रानी सागर खिड़की पर पहुँचीं। उस समय पीरअली कार्यभार अपने स्थानापन्न को सौंप रहा था।

उनको देखते ही हड़बड़ा गया।

रानी ने कहा, 'दूल्हाजू कहते हैं कि कल तुम्हारे साथ कहीं बाहर नहीं गए। तुमने दीवान जवाहरसिंह से कहा कि तुम्हारे साथ गए थे।'

पीरअली हिम्मत बाँधकर बोला, 'वे मेरे साथ जरूर गए थे, सरकार। डर के मारे उन्होंने सच्ची बात नहीं कही। व्यर्थ झूठ बोले। मैं उनके मुँह पर कह सकता हूँ। दिशा-मैदान के बाद हाजिर हो जाऊँगा।'

रानी ने कहा, 'कोई जल्दी नहीं, थोड़ी देर में किले में आओ?'

'बहुत अच्छा, हुजूर', पीरअली ने मुक्ति की साँस लेकर कहा।

रानी पूर्वी और उत्तरी फाटकों पर होती हुई उन्नाव फाटक पर आईं। यहाँ पूरन कोरी अन्य कोरियों के साथ तोप पर था। कोरियों को शबाशी दी।

पूरन से पूछा, 'झलकारी कहाँ है? अच्छी तरह तो है?'

'सरकार', पूरन ने कहा, 'घरै है, अबई बुलवाउत, दिन भर इतै काम करत रई, अबई थोड़ी देर भई जब गई।'

'नहीं, बुलाओ मत।' रानी बोलीं, 'वैसे ही पूछा।'

वे आगे बढ़ गईं।

सब फाटकों से घूमती हुई हलवाईपुरे में आईं। बाजार का चौधरी मिला। लखपतियों में से था। सवेरे इतने पानी से हाथ-मुँह धोया करता था कि पानी सौ गज तक बह जाता था।

रानी ने मुसकराकर कहा, 'अब भी उतने ही पानी से हाथ धोते हो?'

'सरकार', चौधरी ने उत्तर दिया, 'आजकल सब व्योपार बंद है। मुँह-हाथ धोते-धोते इतने व्यापारियों से बात करनी पड़ती थी कि पानी बहने का ध्यान ही न रहता था।'

रानी ने कहा, 'अब व्यापार के साथ पानी बहाना भी बंद है।'

उस महा कठिन परिस्थिति में भी रानी की इस बात पर बाजारवाले हँसे, हँसते रहे और विपत्ति में धैर्य तथा साहस पाते रहे।

जो मिला उससे कोई-न-कोई मीठी बात कहकर, ढाढ़स बँधाती हुई रानी किले पर लौट आईं। गोलाबारी का क्रम जारी था।

रात समाप्त हुई।

रानी ने सवेरा होते ही सिपाहियों और उनके सरदारों में समाचार भेजा—'आज मैं स्वयं अपने लोगों के लिए कलेवा तैयार करूँगी। खूब खाओ और डटकर लड़ो।'

सुनते ही थके-माँदे और अर्धमृत सिपाहियों तक की छातियाँ फूल उठीं।

ब्राह्मणों ने आटा गूँधा। रानी ने उसमें हाथ लगाया। ब्राह्मणों ने ही पूड़ियाँ सेंकीं। रानी ने उसमें भी सहयोग दिया। किले के भीतरवाले सरदारों को उन्होंने अपने हाथ से उनके ठियों पर जा-जाकर कलेवा वितरित किया।

हर्ष और अभिमान के मारे वे सब-के-सब उन्मत्त हो गए। रानी की छूई हुई पूड़ी तक के एक-एक टुकड़े को पगड़ी के, अँगरखे के छोर में कसके बाँध लिया और कसकर बाँधे प्राणों की गाँठ में प्रण।

रानी को पीरअली का स्मरण आया—भूलती तो वे कभी कुछ थीं ही नहीं। बुलवाया। मालूम हुआ कि दिशा-मैदान के लिए जाने के बाद फिर नहीं दिखाई पड़ा; यह भी पता लगा कि दिशा-निस्तार के लिए मुहरी के रास्ते से गया था।

रानी एक क्षण के लिए असमंजस में पड़ीं।

उनको विश्वास हो गया कि पीरअली झूठ बोलता था और कदाचित् दूल्हाजू सच, परंतु बहरामुद्दीन ने लिखकर

दिया था—पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहिएगा। किसी निश्चय पर पहुँच चुकी थीं कि चारों दिशाओं से अंग्रेजों ने गोलाबारी शुरू कर दी।



: ४२ :

रानी ने झटपट दलपतियों और गोलंदाजों को यथोचित आज्ञाएँ दीं।

अंग्रेजों का निश्चय जान पड़ता था कि कहीं से भी परकोटे की दीवार को फोड़ें और झाँसी में घुस पड़ें। इधर झाँसीवालों का निश्चय था जब तक शरीर में रक्त है तब तक दुश्मन का पैर झाँसी के भीतर न पड़ने देंगे।

झाँसी की गोलाबारी से आकाश में जलते हुए गोलों की आग की चादर तन गई। इस चादर में से अंग्रेजी सेना के सिर पर फटे हुए गोलों से गोलियाँ, कीलें-किरचे बरसती थीं। भूनकर खाक कर डालनेवाली हवाइयाँ विस्फोट कर रही थीं। दक्षिणी मोरचे पर जीवनशाह की टौरिया से लेकर ओरछा फाटक के सामनेवाली टेक[6] तक अंग्रेजी तोपखाने अत्यंत वेग के साथ जवाब दे रहे थे।

अपने तोपखानों की रक्षा में अंग्रेज बंदूकची जीवनशाह की टौरिया से ओरछा फाटक की टेकड़ी के बीच में सतरें बाँधकर ओरछा फाटक और सैंयर फाटक की ओर बढ़े। परकोटे की बुर्जों और कोट की दीवार के छेदों में से बंदूकों और हलकी तोपों ने यमराज के शापों को उगला। अंग्रेजी पलटन बिछने लगी। पैर उखड़े। पीछे भागने को हुई। परंतु उस क्रिया में भी उद्धार न पाकर मार्ग के पत्थरों की ओट में छिप गई। लेकिन एक दस्ता ओरछा फाटक की ओर बढ़ आया। अंग्रेजी तोपखाने ने भीषणतर गोलाबारी आरंभ की। सैंयर फाटक की ओर भी एक दस्ता बढ़ा।

रानी और मोतीबाई ने दूरबीन से देखा। ओरछा फाटक के सामनेवाली टेक के पीछे लाल झंडा उठा। ओरछा फाटक पर का तोपखाना कुछ धीमा पड़ा।

'सरकार', मोतीबाई ने अनुनय किया, 'मुझको उस ओर जाने दीजिए। सुंदर अकेली है। दूल्हाजू के हाथ-पाँव ढीले हो गए हैं।'

'जाओ मोती। हीरा बनकर लौटना', रानी ने कहा।

मोतीबाई चली गई। खुदाबख्श सैंयर फाटक पर था। उसने मोतीबाई को आगे नहीं बढ़ने दिया।

बोला, 'ओरछा फाटक पर मत जाओ। यहीं मेरे साथ रहो। आज अपने देश, अपनी रानी का नमक अदा करूँगा। मरूँगा। मेरी लाश को ठिकाने लगा देना।'

मोतीबाई का चेहरा कुम्हलाया हुआ था। परंतु उसके सौंदर्य की किरणें छिटकी पड़ रही थीं। आँखों में आँसू आ गए।

तोप पलीता डालते-डालते खुदाबख्श ने चिल्लाकर कहा, 'यह वक्त आँसुओं का है ?'

मोतीबाई ने बारूद की कालोंचवाले हाथों से आँसू मसल डाले। बोली, 'नहीं। अब आँसू नहीं आवेंगे।'

खुदाबख्श ने उमंग के साथ कहा, 'आज मैं हमेशा के लिए आपका कैदी हो गया।'

मोतीबाई आँख मिलाकर बोली, 'और हमेशा के लिए मैं आपकी।'

खुदाबख्श ने देखा कि रास्ते पर गोरे फाटक की ओर बढ़े चले आ रहे हैं। तोपों और बंदूकों की बाढ़ हुई।

खुदाबख्श ने मोतीबाई को आदेश दिया, 'दाहिने हाथ की पूरी सतर तक बंदूकें, पत्थर, कटे हुए पेड़ों के लक्कड़ इन लोगों के सिर पर पटकवाओ। दौड़ो। अंग्रेज वहाँ से सीढ़ी लगाकर चढ़ने का उपाय कर रहे हैं।'

मोतीबाई दौड़ी। सीढ़ी लगाने का उपाय करनेवाले सब-के-सब मारे गए—उनके ऊपर गोलियाँ, पत्थरों के बड़े-बड़े ढोंके और कटे हुए पेड़ों के लक्कड़ जो वहाँ पहले से जमा थे, बरसाए गए। शहर और किले से ढोल, ताशे

और तुरही का कान फोड़नेवाला नाद हुआ। अंग्रेजों ने अपनी पैदल पलटन को वापस बुलाने का बिगुल बजाया। पलटन गिरते-मरते लौट पड़ी।

रोज जीवनशाह की टौरिया के पीछे घोड़े पर था और उसके मातहत अफसर बगल में।

रोज ने कहा, 'नाऊ ऑर नैव्हर (या तो अभी या कभी नहीं)।' तार से यह आदेश ओरछा फाटक टेक और पहाड़ी के तोपखाने को दिया गया। ओरछा फाटक टेक ने इसका जो अर्थ लगाया वह लाल झंडे को और ऊँचा करना था।

इधर रोज के चार अफसर—चारों लैफ्टिनेंट यौवन प्रमत्त—टेकड़ियों, पत्थरों और अपनी तोपों की बाढ़ों की आड़ें लेते हुए सैंयर फाटक की दाहिनी बगल की टेकड़ी की दीवार के नीचे पहुँच गए। उस जगह दीवार थोड़ी देर पहले ही आधी धुस्स हो गई थी। साथ ही उस जगहवाले झाँसी के सैनिक मारे गए। इन अफसरों में से दो ने देह की सीढ़ी बनाई। उसपर से बाकी दोनों चढ़ गए। इन दोनों ने अपनी सेना के दस्ते को संकेत किया। दस्ता आगे बढ़ा। इतने में तलवार लिये मोतीबाई टूट पड़ी। लैफ्टिनेंट ने पिस्तौल चलाई। खाली गई। मोतीबाई ने एक वार में ही उसको खतम कर दिया। दूसरे लैफ्टिनेंट ने तलवार के वार किए परंतु मोतीबाई ने उसको समाप्त किया। नीचेवाले दोनों अफसर एक पत्थर की आड़ में छिप गए। इतने में झाँसी के दूसरे सिपाही वहाँ आ गए। खुदाबख्श के तोपखाने ने आगे बढ़ते हुए दस्ते को नष्ट कर दिया और मोतीबाई के निकटवाले सिपाहियों ने उन दोनों लैफ्टिनेंटों को बंदूक से समाप्त कर दिया। यह अंग्रेजी सेना की दूसरी हार हुई।

उत्तरी फाटकों पर भी जोर का हमला था परंतु ठाकुरों, काछियों, कोरियों और तेलियों की चतुरता तथा बहादुरी के कारण वहाँ अंग्रेज कुछ नहीं कर पा रहे थे।

इधर दक्षिणी मोरचों पर अंग्रेजों ने तीसरा आक्रमण शुरू किया।

रानी ने किले पर से देखा कि ओरछा फाटक का तोपखाना बहुत मंद गति से काम कर रहा है। उन्होंने रामचंद्र देशमुख को तुरंत भेजा; परंतु देशमुख को वहाँ तक पहुँचने के लिए समय चाहिए था।

मोतीबाई खुदाबख्श के पास पहुँच गई। ओरछा फाटक की टेक के पीछे लाल झंडा और ऊँचा हुआ। खूब हिला और फिर छिप गया। दूल्हाजू ने केवल बारूद भर-भरकर तोप चलाई—उसमें से गोले निकलते ही कैसे?

सुंदर उससे पश्चिम की ओर जरा हटकर ऊँची बुर्ज पर से तोप चला रही थी। उसके साथी गोलंदाज मारे जा चुके थे। केवल उसकी तोप कुछ काम कर रही थी। उसने दूल्हाजू का व्यापार देख लिया।

सामने की टेक के पीछे से गोरी पलटनें टिड्डी दल की तरह उमड़ पड़ीं और 'हुर्रा' घोष करती हुई भरोसे के साथ ओरछा फाटक पर दौड़ीं। दूल्हाजू लोहे की एक छड़ हाथ में लेकर बुर्ज से नीचे तुरंत उतरा। सुंदर को समझने में एक क्षण की भी देर नहीं लगी। उसने भी तोप छोड़ दी। केवल तलवार उसके पास थी। तलवार खींचकर अपनी बुर्ज से नीचे उतरी। वहाँ से ओरछा फाटक दूर था।

सुंदर के नीचे उतरने के पहले ही दूल्हाजू फाटक के पास पहुँच चुका था। फाटक पर मोटी साँकलों और कुंदों में मोटी झरवाले ताले पड़े हुए थे। कुंजियाँ किले में थीं परंतु दूल्हाजू के हाथ में लोहे की मोटी छड़ तो थी। उसने जरा भी विलंब नहीं किया।

उछलकर ताले में छड़ डाली। तड़ाक से ताला टूट गया। दूसरे और तीसरे में डाली और सब टूट गए। दो साँकलों को भी तोड़ दिया और तीसरी साँकल खोल दी। फाटक केवल भिड़े रह गए। दूल्हाजू फाटकों को खोल नहीं पाया था कि नंगी तलवार लिए सुंदर आ पहुँची।

'देशद्रोही, नरक के कीड़े', सुंदर ने कड़ककर कहा, 'तू अंग्रेजों से कुछ नहीं पावेगा।' सुंदर दूल्हाजू पर पिल

पड़ीं।

उसकी तलवार का वार दूल्हाजू ने लोहे की छड़ पर झेला। तलवार झन्नाकर बीच से टूट गई। तलवार का जो टुकड़ा सुंदर की मुट्‌ठी में बचा था उसीको तानकर सुंदर दूल्हाजू पर उछली। दूल्हाजू ने छड़ को सीधा हूल दिया। वह ठप से बाएँ वक्ष पर लगा। साथ ही बाहर 'हुर्रा' घोष हुआ।

चोट की परवाह न करके सुंदर ने फिर वार किया। दूल्हाजू पीछे हटा। परंतु उसने सुंदर के पेट पर छड़ अड़ा दी। उधर गोरों ने धक्के से फाटक खोल दिया। सुंदर के मुँह से 'हर हर महादेव' निकला था कि एक गोरे की गोली ने सौंदर्यमयी सुंदर को अमर कर दिया। गोली उसके सिर पर पड़ी थी।

दूल्हाजू ने छड़ पृथ्वी पर टेक दी। दूल्हाजू पर भी गोरों की बंदूकें सीधी हुईं; परंतु उनके अफसर ब्रिगेडियर ने तुरंत निवारण किया, 'आवर मैन।' (अपना आदमी है)।

गोरों ने बंदूकें नीची कर लीं। टिड्‌डी दल की तरह भीतर घुस पड़े।

अफसर ने कहा, 'यह रानी है?'

दूल्हाजू ने उत्तर दिया, 'नहीं साहब, महज नौकरानी।'

अफसर ने अपने साथियों से कहा, 'बट ए सोल्जर। शी विल हैव ए सोल्जर्स ऑनर।' (लेकिन सिपाही है। सिपाही की इज्जत उसको मिलेगी।)

स्वर्गवासिनी सुंदर की दृढ़ मुट्‌ठी अभी ढीली नहीं हुई थी। तलवार का छोटा सा टुकड़ा अब भी उसकी मुट्‌ठी में था। दो गोरे उसके शरीर को बाहर ले गए और पत्थरों से दबा दिया, जहाँ उनके और नत्थे खाँ के भी अनेक सिपाही दबे हुए थे। उसके उपरांत वे लोग सब दिशाओं में, शहर में घुसने लगे।

टेक के पीछे रोज के पास तार द्वारा नगर-विजय का संवाद पहुँचा।

रोज ने अफसरों से कहा, 'उस आदमी को जागीर में दो गाँव पक्के हुए।' दूल्हाजू के उस कृत्य का समाचार बहुत शीघ्र चारों ओर फैल गया।

फिर रोज ने तुरंत आदेश दिया कि सैंयर फाटक को तोड़ो, शहर में बढ़ो और सब बागियों का नाश करो।

खुदाबख्श के फाटक पर कहर-पर-कहर बरसने लगा। इसी समय रामचंद्र देशमुख घोड़े पर आया। उसी समय एक गोली खुदाबख्श को लगी। सैंयर फाटक का तोपखाना बंद हुआ। एक अंग्रेज दीवार पर चढ़ा। मोतीबाई ने तलवार से उसका सिर कलम कर दिया और खुदाबख्श की लाश को टाँगकर नीचे उतर आई। रामचंद्र ने मोतीबाई को अपने पीछे घोड़े पर बिठाया और लाश को सामने लादकर किले पर चढ़ आया। उसके किले में आते ही किले का फाटक बंद कर लिया गया। लाश को महल के पास रखकर ढक दिया गया। मोतीबाई की आँख से आँसू नहीं निकला।

रानी आ गईं।

रानी ने कहा, 'मोतीबाई, तुम लोगों का अक्षय कर्म मैंने अपनी आँखों देखा है।'

'सरकार', मोतीबाई ने भर्राए हुए स्वर में कहा, 'आप काम देखिए। अपने पास किला अब भी है और आप हैं। मैं इनका प्रबंध करती हूँ।'

रानी कंठ को संयत करके बोलीं, 'कुँवर साहब को महल के बिलकुल निकट ही दफनाया जाए।'

देखमुख ने पूछा, 'सुंदर?'

'ओरछा फाटक पर मारी गई', मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'दूल्हाजू ने देशद्रोह करके फाटक खोल दिया।'

रानी ने होंठ सटाए।

धीरे से बोलीं, 'जीवन में यही बड़ा भारी धोखा खाया।'

फिर उन्होंने जरा जोर से कहा, 'बहरामुद्दीन ने ठीक कहा था। उसके साथ अन्याय हुआ। कहाँ है वह, कुछ जानते हो, देशमुख?'

'नहीं सरकार', देशमुख ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

रानी ने अँगरखे की जेब में हाथ डाला।

बहरामुद्दीन का इस्तीफा जेब में था—उसको उन्होंने वहीं पड़ा रहने दिया।

मोतीबाई ने महल के पास ही कब्र के लिए जमीन खुदवानी आरंभ कर दी और बहुत शीघ्र ही एक बड़ा गड्ढा खुदवा लिया।

रानी दूरबीन लेकर ऊपर की बुर्ज पर चढ़ गईं।

रोज नगर की बुर्ज-पर-बुर्ज अपने अधिकार में करता चला जा रहा था। गोरे शहर भर में फैलते चले जा रहे थे। झाँसी की सेना मरती-कटती जा रही थी। आग लगाई जा रही थी। झाँसी में हाहाकार हो रहा था और उसके साथ तुमुल 'हुर्रा' घोष। रानी ने देखा कि गौरे शहरवाले महल, नाटकशाला तथा महल के सामनेवाले विशाल पुस्तकालय को घेरने का प्रयास कर रहे हैं और इन स्थानों के भीतर बंद झाँसी के सैनिक लड़ रहे हैं। तब वह बुर्ज से नीचे उतर आईं।

एक पेड़ के नीचे पत्थर पर बैठकर सोचने लगीं, 'झाँसी का सर्वनाश होने को है। स्वराज्य की स्थापना अभी दूर है। परंतु कर्म करने मात्र का अधिकार है, फल से हमको क्या?'

उठ खड़ी हुईं।

जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, गुलाम गौस, भाऊ बख्शी, गुलमुहम्मद, भोपटकर इत्यादि सरदारों को बुलवाया। उन लोगों को अपना निश्चय सुनाया—

'बाहर निकलकर लड़ो, गोरों को शहर से निकालो और झाँसी की रक्षा करो।'

सलाह-सम्मति का न तो समय था और न मौका।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'हुजूर को शुक्रिया। फौरन चलें। गोरों को निकालें।'

रानी ने आदेश दिया, 'गोलंदाज अपने-अपने ठियों पर काम करते रहें।'

भाऊ बख्शी ने आगे बढ़कर रानी के पैर पकड़ लिये।

प्रार्थना की, 'सरकार, मुझको बाहर साथ जाने की आज्ञा दी जाए। मेरी तोप पर किसी और को नियुक्त कर दिया जाए।'

'अच्छा, गोलंदाजों में से केवल तुम', रानी ने कहा, 'जल्दी करो। विलंब का काम नहीं।'

बख्शी साथ हो गया।

भोपटकर की इच्छा न थी कि रानी बाहर जाकर लड़ें, परंतु वह स्तब्ध रह गया। रानी फुरती के साथ तैयार होकर किले के बाहर हो गईं। साथ में पठान, बुंदेलखंडी इत्यादि पंद्रह सौ सैनिक। पीछे भोपटकर भी गया। दक्षिण की ओर से आ-आकर गोरे महल के पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे।

रानी झंझावात की तरह पहले दक्षिण की ओर झपटीं, जहाँ से अंग्रेजी सेना घुसी चली आ रही थी। रानी का छापा इतना प्रचंड था कि अंग्रेजी सेना भागी। पूर्वी ओर के मकानों की आड़ से बंदूकें चलाने लगीं। तलवारों की मार के सामने वह बिलकुल न ठहर सकी।

रानी ने चिल्लाकर कहा, 'आज प्रमाणित कर दो कि हिंदुस्तानी सिपाही की तलवार के सामने संसार का कोई

योद्धा नहीं टिक सकता।'

उनके दस्ते ने ऐसी तलवार चलाई कि गोरी पलटन बिखरकर हट गई; परंतु मकानों की आड़ से गोलियाँ चलाने लगी। पाँच सौ पठान दक्षिण और पूर्व दिशाओं में फैलकर फिर भी गोरों को पीछे हटाते रहे, और मरते रहे। रानी के महल और हाथीखाने के आसपास[7] गोरी सेना फैली हुई थी और उसके लिए मकानों की आड़ थी। जवाब देने के लिए रानी की सेना भी उसी प्रकार और उसी दिशा में फैली। गोरी सेना के कुछ सिपाही दबाव पड़ने के कारण पश्चिमी दिशा की ओर खंडेराव फाटक की ओर बढ़े। वहाँ उनको अटकना पड़ा।

रानी उसी ओर बढ़ रही थीं कि उन्होंने देखा एक सिपाही किसी मकान में से निकल पड़ा और अकेला उन कई गोरों से भिड़ गया। उसने ऐसी तलवार चलाई कि कई गोरे हताहत हुए। कुछ और गोरे आ गए। वह सिपाही घिर गया। तो भी वह अकेला उनको पछेलता गया। रानी ने अपने घोड़े को तेज किया। पीछे-पीछे उनके सिपाही दौड़े। उस अकेले सिपाही ने फिर कई गोरों को तलवार के घाट उतारा; परंतु यकायक उसपर कई वार पड़े, वह गिर गया। इतने में रानी सैनिकों सहित आ पहुँचीं। गोरे भाग गए।

रानी ने पास आकर देखा—बहरामुद्दीन था। उसके मरने में कुछ क्षण बाकी थे। बेचैन था। रानी घोड़े पर से उतरीं। बहराम के सिर पर हाथ फेरा। बहराम ने पहचान लिया। उसने आँखें फाड़ीं। पूरा बल लगाया। लेकिन कठिनाई से बोल पाया, 'हुजूर, माफी।'

मुश्किल से रानी के मुँह से निकला, 'तुम सच्चे सिपाही हो। माफ किया।'

फिर जोर लगाकर बहराम ने कहा, 'सरकार, जान नहीं निकलती। मेरी चि...ट्ठी।'

रानी ने जेब से उसके इस्तीफे का कागज निकाला। 'यह लो', रानी बोलीं।

'नहीं, स...र...का...र', बड़ी मुश्किल से बहराम ने कहा, 'फाड़ डा...लि...ए... तब जान नि...क...ले...गी।'

रानी ने तुरंत चिट्ठी की चिंदी-चिंदी कर डाली।

बहरामुद्दीन के मुखमंडल पर उस घोर पीड़ा में आनंद की छाप लग गई। उसके अंतिम शब्द थे, 'ज...ल...बा अल्ला...है।'

भाऊ ने आकाश की ओर दृष्टि करके कहा, 'आहा, कैसा मीठा मरण है यह! भगवान् मेरी भी ऐसी ही सद्गति हो।'

बहरामुद्दीन का प्राणांत हो गया।

पास के रहनेवालों को कब्र का प्रबंध देकर रानी और उनके सैनिक गोरों पर झपटे। वे भागे। अब पश्चिम से पूर्व होती हुई दक्षिण तक रानी के सैनिकों की एक पाँत-सी बन गई। पीठ पर किला था।

यकायक वृद्ध नाना भोपटकर रानी के सामने आ गया। बोला, 'पहले इस बूढ़े ब्राह्मण का वध करिए तब आप गोली खाइए।'

रानी—'नाना साहब, यह क्या?'

नाना—'आप देखती नहीं हैं, गोरे मकानों की आड़ से गोली चला रहे हैं और आपके

सैनिक हताहत हो रहे हैं। आप पर गोली पड़ी कि समग्र झाँसी रसातल को गई। अभी अपने हाथ में किला है। लड़ाई जारी रखी जा सकती है। लौटिए या मेरा वध करिए।'

रानी की समझ में आ गया।

गुलमुहम्मद पास आ गया था। उसने भी कहा, 'सरकार, बुड्ढा ठीक बोलता है। आप अंदर चलें।'

उत्तरी फाटक से रानी भाऊ और नाना भोपटकर के साथ किले में चली गईं। गुलमुहम्मद के साथ तीन सौ पठान

ही भीतर जा सके। बाकी सब लड़ाई में मारे गए। बुंदेलखंडी सैनिक लगभग सब कट मरे। किले के फाटक बंद कर लिये गए।



: ४३ :

गोरों ने शहर के सब फाटकों पर अपना प्रबंध कर लिया। उनको अपने उन निश्शस्त्र पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के खून का बदला लेना था जिनको बख्शिशअली इत्यादि बहुत थोड़े हिंदुस्तानियों ने मारा था। पाँच वर्ष की आयु से अस्सी वर्ष तक के जितने पुरुष मिले उनका कत्ल शुरू कर दिया। हलवाईपुरा में आग लगा दी। कुछ स्त्रियाँ अपने सतीत्व के नष्ट होने के भय से कुओं में गिरकर मर गईं। रोज का आदेश था कि स्त्रियों को न मारा जाए, उनको जान-बूझकर गोरों ने नहीं मारा; लेकिन अपने पति की रक्षा के लिए जो स्त्रियाँ उनकी आड़ बनने के लिए आ गईं, वे गोलियों से मरीं। झाँसी के कवि और गायक भी लड़े थे, वे मारे गए या घायल हुए।

गोरों ने घरों में घुसना और सोना-चाँदी इत्यादि सामान लूटना शुरू किया।

शहरवाले राजमहल के चारों ओर अंग्रेजी सेना का सबसे अधिक उपद्रव हुआ। नाटकशाला के सामने दक्षिण की ओर रानी का अस्तबल था। उस अस्तबल को रानी के बुंदेलखंडी सिपाहियों ने किले की लड़ाई में परिवर्तित कर दिया। ये थे लगभग कुल पचास ही। परंतु जब तक एक भी जिंदा रहा, अंग्रेज अस्तबल पर कब्जा नहीं कर पाए। एक-एक दीवार, एक-एक कोठरी, एक-एक ईंट पर कब्जा करने में अंग्रेजों को न जाने कितने सिपाही बलिदान करने पड़े।

इसके बाद महल की एक-एक इंच भूमि के लिए युद्ध हुआ। जब महल के सब सिपाही खत्म हो गए तब उसपर भी कब्जा हो गया। सब सामान लूटा। महल के सिरे पर अंग्रेजी झंडा लगा दिया गया। महल के केवल उस भाग को छोड़कर जिसपर यह झंडा फहरा रहा था, बाकी महल में आग लगा दी गई। नाटकशाला भी न बची। सुंदर परदे, जिनकी सहायता से शकुंतला, रत्नावली और हरिश्चंद्र नाटक खेले जाते थे, खाक कर दिए गए।

और इसके बाद जो कुछ हुआ उससे उन बर्बरों की पाशविकता इतिहास में अमिट अक्षरों में लिखी गई—महल के सामनेवाले विशाल पुस्तकालय में आग लगा दी गई। थोड़ी ही देर में कलाओं का वह भंडार अग्नि की गगनभेदी लपटें फेंकने लगा। कभी रोम, सिकंदरिया और राजगृह में भी ऐसा हुआ था; परंतु वह बर्बर युग था! और यह विज्ञान का सभ्य युग!!

रानी ने किले पर से देखा। उनके हाथ में दूरबीन न होती तो भी दिखाई पड़ सकता था, पर दूरबीन ने सबकुछ स्पष्ट दृष्टिगोचर करा दिया।

अस्तबल मिटा—फिर बन सकता था। राजमहल जला—उसके बनानेवाले उत्पन्न हो जाएँगे। लेकिन पुस्तकालय? वेद, शास्त्र, पुराण, काव्य, इतिहास इत्यादि संस्कृत और अरबी-फारसी के अनेक हस्तलिखित ग्रंथ, जिनकी प्रतिलिपि करने के लिए दूर-दूर के विद्याव्यसनी आते थे, फिर कौन पैदा करेगा? रानी का माथा घूमने लगा। जिसको कोई कष्ट, कोई समस्या, कोई विपत्ति कभी नहीं हिला पाई थी, वह जलते हुए पुस्तकालय को देखकर मूर्छित होने को हुई। मुंदर साथ थी। उसने सँभाल लिया। रानी ने प्रबल प्रयत्न करके मूर्छा को दूर किया। पानी मँगवाया, पिया। इतने में हलवाईपुरा और कोरियों के मुहल्लों से आग की लपटें दिखाई दीं। क्रंदन, पुकार और चीत्कार की समग्र ध्वनियाँ यकायक सुनाई पड़ीं—जन-वध, कत्लेआम, लोक-संहार का प्रत्यक्ष प्रमाण। रानी का हृदय धँसने लगा।

'मुंदर, मुंदर, मेरी प्यारी झाँसी की यह कुगति, यह दुर्गति! और मेरे जीते-जी! मेरी आँखों के सामने!' रानी ने भरे गले से कहा। गला फट-सा गया। मुंदर उनको खींचकर नीचे ले आई।

महल की चौखट पर बैठकर वह रोईं। लक्ष्मीबाई रोईं! वह लक्ष्मीबाई, जिसकी आँखों ने आँसुओं से कभी परिचय भी न किया था! वह जिसका वक्षस्थल वज्र का, हाथ फौलाद के थे! वह जिसके कोश में निराशा का शब्द न था! वह जो भारतीय नारीत्व का गौरव थी! मानो उस दिन हिंदुओं की दुर्गा रोई।

मुश्किल से आँसुओं की अविरल धारा टूटी थी कि रामचंद्र देशमुख ने कर्तव्यवश समाचार दिया, 'सरकार, कुँवर गुलाम गौस खाँ दुश्मन की गोली से मारे गए।'

रानी सिंहनी की तरह उछलकर खड़ी हो गईं। अँगरखे के छोर से आँसू पोंछ डाले। गला साफ किया।

आज्ञा दी, 'भाऊ को उनकी जगह भेजो और लाश को महल के पास।'

आज्ञापालन के लिए देशमुख चला गया। रानी मुंदर को साथ लेकर दक्षिणी बुर्ज के नीचे आईं, जहाँ खुदाबख्श के शव के लिए कब्र तैयार हो चुकी थी। मोतीबाई वहाँ पहले से थी।

पश्चिमी बुर्ज से भाऊ बख्शी अंग्रेजी शिविर पर धड़ाधड़ गोलाबारी कर रहा था। केंद्रीय बुर्ज से रघुनाथसिंह। दक्षिणी बुर्ज शांत थी।

रानी ने कहा, 'मोतीबाई, मैं दफनाने का प्रबंध करती हूँ, तुम तब तक इस बुर्ज के तोपखाने को जगा दो।'

खुदाबख्श के शव के मोह में मोतीबाई जरा ठमठमाई।

रानी बोलीं, 'अभी विलंब है। कुँवर गुलाम गौस खाँ का भी शव यहीं आ रहा है।'

विस्फारित लोचन मोतीबाई ने विस्मय के साथ कहा, 'क्या उस्ताद मारे गए?'

'हाँ, मोती', रानी ने उत्तर दिया। मोतीबाई तोप पर चली गई। पहली बाढ़ दागी थी कि उसपर नजदीक से गोलियों की बौछार हुई। अंग्रेज किले के सदर फाटक के पास आ गए थे। उनको पास से निशाना लेने का सुअवसर था। बुर्जों की मुँडेरें उस दिन के युद्ध में टूट गई थीं और उनकी मरम्मत न हो पाई थी। अन्य गोलियाँ तो मोतीबाई के आसपास से निकल गईं, परंतु एक ने कंधा नीचे से फोड़ दिया। हृदय उसका बच गया, मृत्यु अवश्यंभावी थी।

उधर गुलाम गौसखाँ की लाश आई। इधर से एक सैनिक मोतीबाई को उठा लाया। उसको पानी पिलाया गया। रुधिर बहुतायत से जारी था; परंतु वह अचेत न थी।

मुंदर ने रानी से दक्षिणी बुर्ज के तोपखाने को सँभालने की अनुमति चाही।

रानी ने दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया, 'नहीं, यहीं ठहर। तुमको अब सहज ही नहीं खोऊँगी।'

मोतीबाई का सिर रानी ने अपनी गोद में रख लिया।

मोतीबाई की आँखों में आँसू भर आए। बोली, 'इस गोदी में सिर रखे हुए मरना किसी और के भाग्य में नहीं, बाई साहब।'

रानी ने सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, 'मेरी मोती, तू आज हीरा हुई।'

'सरकार', मोतीबाई ने व्याकुल स्वर में कहा, 'मैं कुछ भी हूँ, परंतु शुद्ध हूँ।'

'नहीं, तू शुद्ध ही नहीं', रानी बोलीं, 'तू पवित्र है। देख हीरा, एक दिन सबको मरना है, परंतु सत्कार्य में प्राण देना, भगवान् का ध्यान करते-करते मरना, यह जन्म भर की अच्छी कमाई से ही प्राप्त होता है।'

मोतीबाई ने आँखें मीची। उसका चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने कहा, 'आत्मा अमर है। शरीर का चाहे जो कुछ हो, वही एक प्रकाश शेष रहता है।'

मोतीबाई अचेत हो गई।

रानी ने दो कब्रें और तैयार करने के लिए आज्ञा दी। कब्रें तुरंत तैयार हो गईं।

रानी की गोदी मोतीबाई के खून से तर हो गई। मोतीबाई का पीला मुरझाया चेहरा एकदम प्रदीप्त हुआ। आँखें

अधमुँदी हुईं। होंठ फड़के। उसके मुँह से निकला—'रानी...उजाला...ला...' और वह मुरझाया हुआ फूल अनंत विकास पाकर बिखर गया।

मुंदर ने कहा, 'सरकार, इनको और कुँवर खुदाबख्श को एक ही कब्र में रखा जाए।'

रानी बोलीं, 'ऐसा नहीं होता, और फिर यह कुमारी थी।'

तीनों को अलग-अलग कब्रों में, परंतु पास-पास दफना दिया गया। अंत्येष्टि क्रिया गुलमुहम्मद ने की। रघुनाथसिंह ने उन तीनों वीरों को तोप की सलामी दी।

संध्या होने को आ रही थी। इसलिए जल्दी-जल्दी में इन तीनों का चबूतरा पक्का और एक ही बाँध दिया गया। चबूतरे के ऊपर निशान इन तीनों के अलग-अलग बना दिए गए।

इसके उपरांत रानी ने स्नान किया। कपड़े बदले, वेश वही पुरुष सैनिक का।

महल के नीचे के खंड में मुख्य लोगों को इकट्ठा किया।

बोलीं, 'आज तक आप लोगों ने अप्रतिम वीरता से झाँसी की रक्षा की। प्राणों की होड़ लगा दी। परंतु अब चिह्न अच्छे नहीं दिख पड़ते हैं। हमारे लगभग सभी सूरमा, दलपति और गोलंदाज काम आ गए। दीवारों और फाटकों के रक्षक वीर मारे गए। किले की चार सहस्र सेना में से उतने सौ भी नहीं बचे हैं। अंग्रेजों ने किला घेर लिया है। वे एकाध दिन में ही भीतर आ जाएँगे। आप लोगों में से जो लड़ते-लड़ते बचेंगे उनको कैद और फाँसी होगी। मैं पकड़ी तो नहीं जा सकती, परंतु मेरे शव को फिरंगी स्पर्श करेंगे। इतने से ही मेरे पुरखों का, मेरे विख्यात ससुर का अपमान हो जाएगा। अब शिवराम भाऊ की बहू के लिए केवल एक साधन शेष है। बारूद की कोठरी में सैकड़ों मन बारूद है। मैं वहाँ जाती हूँ और पिस्तौल के धड़ाके के साथ अपने पुरखों में मिल जाती हूँ। किले से बाहर जाने के लिए कई गुप्त मार्ग हैं। आप लोग उनसे होकर निकल जाएँ। अभी संध्या होने में कुछ देर है। रात का काफी अँधेरा आप लोगों को मिल जाएगा।'

भाऊ बख्शी भर्राते हुए कंठ से बोला, 'मैं भी उसी बारूद के साथ सरकार की सेवा के लिए यात्रा करूँगा।'

नाना भोपटकर ने तुरंत कहा, 'आप आत्मघात करने जा रही हैं। यही न? कृष्ण का पूरा गीता जिनको कंठाग्र याद है, और जो गीता के अठारहवें अध्याय को अपने जीवन में बरतती चली आई हैं, और जो प्रत्येक परिस्थिति में स्वराज्य की स्थापना के यज्ञ की वेदी पर संकल्प कर चुकी हैं, वह आत्मघात करेंगी! करिए कृष्ण का, गीता का अपमान! आप रानी हैं, आपकी आज्ञा का पालन तो सबको करना ही है। परंतु आपके उपरांत की जनता आपके लिए क्या कहेगी, जिसकी रक्षा के लिए आपने बीड़ा उठाया था?'

रानी ने सिर नीचा कर लिया।

वृद्ध भोपटकर कहता गया, 'आप राजमाता हैं। आपके नन्हा सा दामोदरराव पुत्र है। वह आपके पुरखों का प्रतीक, झाँसी की आशा है। कालपी में अभी पेशवा की सेना मौजूद है। दिल्ली, लखनऊ, कानपुर इत्यादि के पतन हो जाने पर भी जनता का पतन नहीं हुआ है। विंध्यखंड, महाराष्ट्र और अवध अक्षय हैं। आप किले के बाहर होइए, अंग्रेजों की सेना को चीरती हुई निकल जाइए और कालपी पहुँचकर पुनश्च हरिओम् कीजिए।'

रानी सोचने लगीं। भोपटकर ने मुंदर को दामोदरराव को लिवा लाने के लिए इशारा किया। वह उसको लेने के लिए चली गई।

रानी की आँखों के सामने एक दृश्य घूम गया—

कुरुक्षेत्र का मैदान है, कौरव-पांडवों की सेनाएँ एक-दूसरे के सामने डटी हुई हैं। अर्जुन ने कृष्ण से कहा, 'भगवन् मेरा साहस डिग रहा है। मेरा सामर्थ्य हिल गया है। मैं असमर्थ हूँ। लड़ना नहीं चाहता।' भगवान् कृष्ण ने

उद्बोधन किया। अर्जुन ने फिर गांडीव धनुष हाथ में ले लिया।

आँखों के भीतर ही रानी को एक चमत्कार की अभिव्यक्ति हुई।

इतने में दामोदरराव वहाँ आ गया। दौड़कर रानी की गोद में बैठ गया।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'सरकार, अमारा सारा कौम मुलक वास्ते कट मरेगा।'

रानी उठीं। उन्होंने नाना भोपटकर के पैर छुए। कहा, 'एक दिन मैंने आपकी राजनीति पर आक्षेप किया था। मुझको क्षमा करना, नाना साहब।' फिर एक क्षण बाद बोलीं, 'भाइयो, मेरी इस क्षणिक दुर्बलता को भूल जाना। मैं लड़ूँगी। आज सबके सामने प्रण करती हूँ कि यदि समस्त अंग्रेजों का मुझे अकेले सामना करना पड़े, तो भी करूँगी।'

उस अत्यंत हीन परिस्थिति में भी किले के भीतरवाले नर-नारियों में उमंग का उजाला भर गया।

रानी ने कहा, 'थोड़ा सा खा-पी लो। जो लोग शस्त्र ग्रहण नहीं कर सकते वे गुप्त मार्ग से निकल जाएँ। शेष मेरे साथ उत्तरी द्वार से भाँडेरी फाटक होते हुए कालपी की ओर चलें। भाँडेरी फाटक का प्रबंध कौन करेगा?'

भाऊ बख्शी ने जिम्मा लिया। उसका मकान कोरियों के मुहल्ले के निकट था और वह उन लोगों को अच्छी तरह जानता था। बख्शी गुप्त मार्ग से किले के बाहर चला गया। रानी ने पुराने सेवक-सेविकाओं को पुरस्कार देकर विदा किया। वे पैर छू-छूकर, रो-रोकर वहाँ से चले गए। नाना भोपटकर भी चला गया।

जवाहरसिंह को रानी ने आज्ञा दी, 'आप अपने इलाके में जाकर सैन्य संग्रह करिए और कालपी आ जाइए।'

जवाहरसिंह ने प्रार्थना की, 'मैं आपको सुरक्षित स्थान पर पहुँचाकर लौटूँगा, अन्यथा नहीं। केवल इस आज्ञा का जीवन में उल्लंघन किया है। इस अपराध के लिए क्षमा चाहता हूँ।'

रानी ने स्वीकार किया।

थोड़े समय उपरांत रानी और मुंदर महादेव के मंदिर में गईं। वंदना की, ध्यान किया।

समाप्ति पर रानी ने मुंदर से कहा, 'वह पलाश अब भी फूल रहा है। सिंदूरोत्सव के दिन की मालाएँ अब भी उससे लिपटी होंगी।'

मुंदर बोली, 'एक बार उसको भेंट लीजिए, बाई साहब।'

'अवश्य', रानी ने कहा, 'वह हर साल फूलेगा और झाँसी हर साल सिंदूरोत्सव मनाएगी। झाँसी का सिंदूर अमर हो।'

उन दोनों ने उस पलाश से भेंट की?

मुंदर बोली, 'फूल की मालाएँ सूख गई हैं।'

रानी ने कहा, 'उनकी आत्मा तो हरी-भरी है। ये उनके चढ़ाए फूल हैं, जो इस युद्ध में बलिदान हो गई हैं।'

इसके बाद दोनों महल पर आईं।

मोरोपंत ताँबे ने बहुत सा द्रव्य और जवाहर इकट्ठे किए। किले के उत्तरी भाग में नीचे की ओर द्वार की बगल में एक हवेली, हाथीखाना और घुड़साल थी। लड़ाई के दिनों में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह इसी हवेली में रहते थे। मोरोपंत ने एक हाथी पर जवाहर और अशर्फियाँ लादीं। अन्य लोगों ने कमर में अशर्फियाँ बाँधीं। रानी और मुंदर पुरुष वेश में घोड़ों पर सवार हुईं।

उस समय रात बहुत नहीं गई थी। पूर्व दिशा में बड़ा तारा ऊपर चढ़ आया था। घना अँधेरा केवल शहर की आगों से फट-फट जा रहा था। अँधेरे के ऊपर बड़े-छोटे तारे दमदमा रहे थे। नीचे शहर के अँधेरे पर उन आगों के बड़े-बड़े लाल-पीले छपके से पड़ जाते थे।

रानी ने एक चादर से दामोदरराव को पीठ पर कसा और अपने तेजस्वी सफेद घोड़े को किले के उत्तरी भाग से निकालकर आगे किया। पीछे-पीछे पठान, मुंदर, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह इत्यादि। द्वार से निकलते ही उन्होंने किले को नमस्कार किया, झाँसी को नमस्कार किया। कंठ में कुछ अवरोध-सा अवगत हुआ। इस भय से कि कहीं आँखों में आँसू न आ जाएँ। उन्होंने उत्तर दिशा की ओर मुँह मोड़ा और किले के नीचे आ गईं। किला बिलकुल सूना छोड़ा।

मोरोपंत का हाथी बीच में था। सवार अधिक न थे। उनकी रक्षा हेतु बाकी सैनिक पैदल थे नंगी तलवारें लिये हुए।

यह टोली टकसाल के पश्चिमवाले मार्ग से भाँडेरी फाटक की ओर अग्रसर हुई। जैसे ही कोतवाली की बराबरी पर आई, अंग्रेजी सेना से भिड़ा-भिड़ी हो गई। रानी 'हर हर महादेव' उच्चारण करती हुईं उनको चीरती-फाड़ती मुंदर सहित निकल गईं। पठान शत्रुओं से बेतरह लड़े। बहुत से मारे गए, बाकी आगे बढ़े।

जगह-जगह जलते हुए मकानों से उजाला हो रहा था। रानी और उनके संगी द्रुतगति से भाँडेरी फाटक के निकट पहुँच गए। वहाँ बख्शी कोरियों को लिये हुए अंग्रेजी फौज की एक टुकड़ी को तलवार के युद्ध में उलझाए हुए था। इधर से रानी की टुकड़ी पहुँची। जलते हुए मकानों के प्रकाश में थोड़ी देर के लिए विकट युद्ध हुआ। बख्शी ने फाटक खोल दिया और फिर अपने कोरी सैनिकों को लेकर अंग्रेज टुकड़ी पर टूट पड़ा। जान पड़ता था कि उसको जीवन-मोह नहीं। वैसे ही निर्मोही पठान थे। बख्शी फाटक की बगल में मारा गया। उसने मरने के पहले रानी को देख लिया था। उसने 'हर हर महादेव' और 'झाँसी की रानी की जय' का घोष किया था। उसके शरीरपात को रानी ने देखा, परंतु इतना समय न था कि मुँह से 'धन्य' भी कह पातीं।

थोड़े से लोगों के साथ रानी बाहर हो गईं। मरने से बचे हुए अंग्रेज सैनिक भाग गए। कोरियों ने भाँडेरी फाटक फिर बंद कर लिया[8] और भाऊ बख्शी को एक जलते हुए मकान के अंगारों में डालकर उसकी अंत्येष्टि कर दी।

रानी और उनके साथियों को कोट के बाहर की भूमि का राई-रत्ती पता था। अँधेरे में वह सहज ही बढ़ती चली गईं। बातचीत बिलकुल धीरे-धीरे होती थी। अंजनी की टौरिया के पास ओरछे की सेना का पहरा था और एक अंग्रेजी छावनी का। यहाँ रोक-टोक हुई, लड़ाई भी। यहाँ से रानी के साथ केवल दस-बारह सवार रह गए और मुंदर।

आगे निर्गम मार्ग। अगाध अँधेरा। झींगुर झंकार रहे थे। उनके ऊपर घोड़ों की टापों की आवाज हो रही थी। सब ओर सन्नाटा छाया हुआ था। पीछे झाँसी में आग जल रही थी और आवाजें आ रही थीं। आगे अंधकार में जंगल और गढ़मऊ का पहाड़ लिपटे हुए, दबे हुए-से दिखाई पड़ रहे थे। चिड़ियाँ पेड़ों पर से भड़भड़ाकर उड़तीं और घोड़ों को चौंका देतीं। घोड़े तेज चलाए जाने के कारण ठोकर ले-ले पड़ते थे। आगे का मार्ग अंधकारपूर्ण और भविष्य तिमिराच्छन्न। ज्यों-त्यों करके आरी नामक ग्राम के पास से यह टोली आगे बढ़ गई।

पहूज नदी मिली। लोगों ने चुल्लुओं से पानी पिया और फिर आगे बढ़े। कभी धीमी गति से, कभी तेजी के साथ। जब दस-बारह मील निकल आए तब ये लोग कुछ क्षण के लिए ठहरे।

रानी ने जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से कहा, 'अब आप लोग लौट जाओ और सेना एकत्र करके मुझे कालपी में आकर मिलो।'

रघुनाथसिंह ने तुरंत कहा, 'यह कार्य दीवान जवाहरसिंह अच्छा कर सकते हैं। मैं तो साथ चलूँगा।'

रानी मान गईं। जवाहरसिंह ने उनके पैर छुए और कटीली की ओर चला गया।

रानी की टोली आगे बढ़ी। इसमें गुलमुहम्मद और उसके कुछ पठान भी थे।

जनरल रोज को रानी के निकल जाने का पता बहुत शीघ्र लग गया। उसने तुरंत लैफ्टिनेंट बोकर नामक अफसर

को कुछ गोरों और निजाम हैदराबाद के एक दस्ते के साथ रानी का पीछा करने के लिए भेजा।

मोरोपंत भाँडेरी फाटक से निकलकर अंजनी की टौरिया तक आया; परंतु जैसे ही यहाँ लड़ाई छिड़ी उसने समझ लिया कि हाथी महान् संकट का कारण होगा। उसने दतिया की दिशा में हाथी को मोड़ दिया और जितनी तेजी संभव थी उतनी तेजी के साथ भागा। कुछ अंग्रेज सवारों ने पीछा किया। उसकी जाँघ में किसी घुड़सवार की तलवार का घाव भी लगा, परंतु वह निकल गया और सवेरा होते दतिया पहुँच गया। एक तमोली के यहाँ ठहरा। परंतु छिपाए छिप नहीं सकता था। राज्याधिकारियों को मालूम हो गया। राज्य ने हीरे-जवाहर सब जब्त कर लिये और मोरोपंत को पकड़कर तुरंत झाँसी भेज दिया।

रोज ने दिन के दो बजे जलते हुए महल और भस्मीभूत पुस्तकालय के बीचोबीच मोरोपंत को फाँसी दे दी।

जैसे ही झलकारी को मालूम हुआ कि रानी भाँडेरी फाटक से बाहर निकल गईं, उसने चैन की साँस ली। घर के एक कोने में थोड़ी देर पड़ी रही। पूरन बाहर से आया।

बोला, 'अब इतै सें भगने पर है।'

झलकारी—'तुम चले जाओ। मैं घरै हों। गोरा लुगाइयन सें नई बोल हैं।'

पूरन—'मैं कहत इतै से चल। जिद्द जिन कर। तय मारी जैय और मैं मारो जैंओं।'

झलकारी—'देखो मोसें हट न करौ, कऊँ जा दुको। मैं घर न छोड़ हों, न छोड़ हों, बालाजी की सौगंध।'

पूरन उसके हठीले स्वभाव को जानता था। वह एक लोटा पानी लेकर एक खंडहर में जा छिपा।

थोड़ी देर में झलकारी को अपने दरवाजे के सामने घोड़े की टाप का शब्द सुनाई पड़ा। झाँककर देखा। बिना सवार का बढ़िया घोड़ा जीन-लगाम समेत। जीन से जान पड़ता था कि झाँसी की सेना का है। झलकारी समझ गई कि सवार मारा गया और घोड़ा भाग खड़ा हुआ है।

झलकारी ने किवाड़ खोले। घोड़े को पकड़ा और घर के पासवाले पेड़ से बाँध दिया। भीतर चली गई।

उसने एक योजना सोची और उसको कार्यान्वित करने का निश्चय किया। जब उसने निश्चय किया तब वह सीधी तनकर खड़ी हो गई थी।

झलकारी ने अपना श्रृंगार किया। बढ़िया-से-बढ़िया कपड़े पहने, ठीक उसी तरह जैसे लक्ष्मीबाई करती थीं। गले के लिए हार न था, परंतु काँच की गुरियों का कंठा था। उसको गले में डाल लिया। प्रात:काल की प्रतीक्षा करने लगी।

प्रात:काल के पहले ही हाथ-मुँह धोकर तैयार हो गई।

पौ फटते ही घोड़े पर बैठी और बड़ी ऐंठ के साथ अंग्रेजी छावनी की ओर चल दी। साथ में कोई हथियार न लिया। चोली में केवल एक छुरी रख ली।

थोड़ी दूर पर गोरों का पहरा मिला। टोकी गई।

झलकारी को अपने भीतर भाषा और शब्दों की कमी पहले-पहल जान पड़ी। परंतु वह जानती थी कि गोरों के साथ चाहे जैसा भी बोलने में कोई हानि न होगी।

झलकारी ने टोकने के उत्तर में कहा, 'हम तुम्हारे जंडेल के पास जाउत हैं।'

यदि कोई हिंदुस्तानी इस भाषा को सुनता तो उसको हँसी आए बिना न रहती।

एक गोरा हिंदी के कुछ शब्द जानता था। बोला, 'कौन?'

'रानी—झाँसी की रानी, लक्ष्मीबाई', झलकारी ने बड़ी हेकड़ी के साथ जवाब दिया।

गोरों ने उसको घेर लिया।

उन लोगों ने आपस में तुरंत सलाह की—

'जनरल रोज के पास अविलंब ले चलना चाहिए।'

उसको घेरकर अपनी छावनी की ओर बढ़े।

शहर भर के गोरों में हल्ला फैल गया कि झाँसी की रानी पकड़ ली गई। गोरे सिपाही खुशी में पागल हो गए और उनसे बढ़कर पागल झलकारी थी।

उसको विश्वास था कि मेरी जाँच-पड़ताल और हत्या में जब तक अंग्रेज उलझेंगे तब तक रानी को इतना समय मिल जाएगा कि काफी दूर निकल जाएँगी।

झलकारी रोज के समीप पहुँचाई गई। वह घोड़े से नहीं उतरी। रानियों की-सी शान, वैसा ही अभिमान, वही हेकड़ी—रोज भी कुछ देर के लिए धोखे में आ गया।

शक्ल-सूरत वैसी ही सुंदर। केवल रंग वह नहीं था।

रोज ने स्टुअर्ट से कहा, 'हाउ हैंडसम, दो डार्क एंड टैरिबल!' (कितनी सुंदर है, यद्यपि श्यामल और भयानक)।

स्टुअर्ट बोला, 'लैफ्टिनेंट बोकर को ससैन्य व्यर्थ ही भेजा।'

परंतु छावनी में राव दूल्हाजू था। वह खबर पाकर तुरंत एक आड़ में आया। उसने बारीकी के साथ देखा।

रोज के पास आकर दूल्हाजू बोला, 'यह रानी नहीं है, जनरल साहब। झलकारी कोरिन है। रानी इस प्रकार सामने नहीं आ सकतीं।'

झलकारी ने दूल्हाजू को पहचान लिया। उसको क्रोध आ गया और वह अपना अभिनय नितांत भूल गई।

क्रुद्ध स्वर में बोली, 'अरे पापी, ठाकुर होकै तैनें जौ का करौ।'

दूल्हाजू जमीन में गड़-सा गया।

रोज को झलकारी की वास्तविकता समझाई गई।

रोज के मुँह से निकला, 'यह औरत पागल हो गई है।'

रोज ने झलकारी को घोड़े पर से उतरवाया।

रोज—'तुम रानी नहीं हो, झलकारी कोरिन हो। तुमको गोली मारी जाएगी।'

झलकारी ने निर्भय होकर कहा, 'मार दै, मैं का मरवे सों डरात हों? जैसे इत्तै सिपाही मरे तैसें एक मैं सई।'

रोज ने झलकारी के पागलपन का कारण तलाश किया।

मालूम होने पर दंग रह गया।

स्टुअर्ट बोला, 'शी इज मैड।' (वह पागल है)।

रोज ने सिर हिलाकर कहा, 'नो स्टुअर्ट, इफ वन परसेंट ऑफ इंडियन वीमन बिकम सो मैड एज दिस गर्ल इज, वी विल हैव टु लीव आल दैट वी हैव इन दिस कंट्री।' (नहीं स्टुअर्ट, यदि भारतीय स्त्रियों में से एक प्रतिशत भी ऐसी पागल हो जाएँ जैसी यह स्त्री है तो हमको हिंदुस्तान में अपना सबकुछ छोड़कर चला जाना पड़ेगा)।

स्टुअर्ट की समझ में न आया।

रोज ने समझाया, 'यह स्त्री हम लोगों को अपने धोखे में उलझाकर रानी के भाग निकलने का समय पाने के लिए यह प्रपंच रचकर आई है, परंतु बोकर पीछे गया है। आशा है वह इस धोखे से बच गया होगा।'

जनरल रोज ने झलकारी को तंग नहीं किया। केवल कैद में डाल दिया और एक सप्ताह उपरांत छोड़ दिया।

सवेरा होते-होते रानी भाँडेर के नीचे बहनेवाली पहूज नदी के किनारे पहुँच गईं। हाथ-मुँह धोया ही था कि लैफ्टिनेंट बोकर अपनी टुकड़ी सहित आ धमका। रानी ने तुरंत ओट लेकर सामना किया। बोकर के कई साथी मारे

गए। बोकर स्वयं घायल होकर झाँसी लौट गया। रानी का घोड़ा घायल हो गया। थोड़ी दूर चलकर मर गया। उन्होंने एक गाँव से दूसरा घोड़ा लिया और लगभग आधी रात के समय कालपी पहुँच गईं।

इधर झाँसी में कई दिन विजन हुआ। लगभग तीन सहस्र व्यक्तियों का वध किया गया।

जब रानी कालपी पहुँचीं, रावसाहब—नाना का भाई—और तात्या वहीं थे। रानी का इन लोगों ने जी खोलकर आदर-सत्कार किया।

परंतु रानी आदर की भूखी न थीं। वह काम चाहती थीं। लेकिन वह कालपी में अस्त-व्यस्त था।



: ४४ :

रानी ने कालपी में दूसरे ही दिन पेशवा की सेना को व्यवस्थित करने की योजनाएँ बनानी प्रारंभ कर दीं, कुछ कार्यान्वित हुईं। अनेक पेशवा की ढील में यों ही पड़ी रहीं।

कालपी की सेना का शिथिल संगठन देखकर रानी का जी दु:ख-दु:ख जाता था।

रावसाहब और उनकी सेना पर भंग-रंग छाया हुआ था। इस सेना में बहुत से चोर और डाकू भी भरती हो गए थे। नायकों का यह हाल था कि 'अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग।'

रोज ने कालपी पर चढ़ाई कर दी। कोंच में युद्ध हुआ। पेशवा की सेना हारी। फिर कालपी में युद्ध हुआ। रानी ने जिस प्रकार सैन्य-संचालन और मोरचे बाँधने की बात कही थी, वह नहीं चल पाई। कालपी की लड़ाई में रानी के पास ढाई सौ लालकुरती सवार थे। रानी ने अपने शौर्य, चातुर्य और इन सवारों के संचालन से रोज के कई मोरचों को कँपा दिया; परंतु प्रधान सेनापतित्व रावसाहब के हाथ में था, इसलिए विद्रोही इस युद्ध में भी हार गए। बहुत सी युद्ध-सामग्री कालपी में ही छोड़कर उनको ग्वालियर की दिशा में भागना पड़ा। भागकर गोपालपुरा में दम लिया।

रावसाहब के पास रईस और सरदार तो काफी हो गए थे, परंतु सेना बहुत कम थी। तोपें नहीं थीं, सामान नहीं बचा था और व्यवस्था तो कभी भी न थी।

दिन भर लू चली। रात को भी काफी गरम हवा चल रही थी। तारे धूल की पतली चादर से ढके हुए थे। गोपालपुरा के एक बगीचे में रावसाहब, तात्या, बाँदा के नवाब इत्यादि आगे की योजना के आकार-प्रकार बना-बिगाड़ रहे थे। रात अँधेरी थी। पास में कोई उजाला न था, इसलिए किसके चेहरे पर क्या गुजर रही थी, कोई नहीं देख सकता था।

रानी लक्ष्मीबाई अपने शिविर में थीं। उस दरबार में न थीं।

रात भर विवाद जारी रहा, परंतु ये लोग किसी भी निश्चय पर न पहुँच सके।

प्रात:काल के उपरांत तात्या रानी को लिवा लाया। तात्या ने उनको रात के अधिवेशन का संक्षिप्त में वृत्तांत सुना दिया था।

लोग भंग पीकर निवृत्त हो गए थे। हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे कि वे आ गईं। लोग उनका अदब करते थे, इसलिए हुक्के हटा दिए गए।

पेशवाई सेना की अधोगति का उनको पता था। फिर भी उन्होंने अपने क्षोभ को दबाकर परिस्थिति को भली-भाँति समझने के लिए प्रश्न किए। जो उत्तर मिले उनका निचोड़ वही था जो रात की बैठक में बाँदा के नवाब ने बताया था—'हम लोग पिंजड़े में फँस गए हैं।'

रानी ने कहा, 'अब तक हम लोग जहाँ-जहाँ अंग्रेजों से जमकर लड़ पाए, वहाँ-वहाँ किलों का आश्रय लेकर। फिर किसी मजबूत किले को हाथ में करना चाहिए। तोपें सहज ही ढल जाएँगी। काम चालू हो जाएगा।'

रावसाहब—'परंतु झाँसी और कालपी के किले तो फिर नहीं मिल सकते। कम-से-कम अभी हाथ नहीं आ सकते।'

रानी—'इनको कुछ दिनों के लिए विचार से अलग रखिए।'

तात्या—'नरवर का किला बहुत अच्छा है। निकट ही सिंध नदी है। आसपास पहाड़ और जंगल हैं।'

नवाब—'करेरा का भी किला अच्छा है।'

रानी—‘न।’

रावसाहब—‘तब फिर कौन सा किला?’

रानी—‘ग्वालियर का। वही यहाँ से अत्यंत निकट है।’

रावसाहब—‘ग्वालियर का किला! ’

नवाब—‘ग्वालियर का!’

रानी—‘हाँ, ग्वालियर का। ग्वालियर की वस्तुस्थिति का पुन: अनुसंधान करके तुरंत ग्वालियर पर आक्रमण कर देना चाहिए। राजा और वहाँ के दो-तीन सरदार अंग्रेज कंपनी के पक्षपाती हैं; परंतु सेना और जनता नहीं। सेना यदि हमारा पक्ष प्रबलता के साथ न भी पकड़ेगी तो ढुलमुल अवश्य रहेगी। ग्वालियर में बनी-बनाई, सजी-सजाई बढ़िया तोपें, गोले-गोली, सैकड़ों मन बारूद और अन्य प्रकार की युद्ध-सामग्री तथा अटूट कोष है।’

नवाब—‘लेकिन...’

रावसाहब—‘हाँ, परंतु।’

रानी—‘किंतु-परंतु कुछ नहीं। बिना किले के कोई भी प्रयास आत्मवध के समान होगा और सिवाय ग्वालियर के किले के हमारे लिए सब किले स्वप्न हैं।’

रावसाहब—‘बात तो ठीक कह रही हैं, बाई साहब। आप भी सोचिए, नवाब साहब। क्यों तात्या?’

नवाब—‘मैं रानी साहब की राय मानने के लिए तैयार हूँ; लेकिन ग्वालियर की सेना या कुछ सरदारों को चढ़ाई के पहले ही मिला लेना चाहिए।’

तात्या—‘वहाँ का हाल मुझको मालूम है। माहुकर, बलवंतराव और दिनकरराव दीवान के सिवाय और सब सरदार स्वराज्य-स्थापना के पक्ष में हैं। सेना का काफी अंश हमारा साथ देगा।’

रानी—‘एक बार फिर जाओ और पूरा पता लगाकर शीघ्र आओ।’

रावसाहब—‘शीघ्रता के लिए तो तात्या शेरों का शेर है।’

आज्ञा पाकर तात्या तुरंत ग्वालियर की ओर रवाना हुआ।

ग्वालियर स्थित अंग्रेजी सेना में विद्रोह फैल चुका था। तात्या को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ा।

उसके लौटने पर रावसाहब का दल ग्वालियर पहुँच गया। ग्वालियर की सेना इस दल से आ मिली। ग्वालियर-नरेश की छोटी सी सेना लड़ी और हार गई। राजा को अपने दो-एक सरदारों के साथ अंग्रेजों के पास आगरा भाग जाना पड़ा। ग्वालियर पर पेशवा का अधिकार हो गया। रावसाहब ने तीसरी जून को एक विशाल दरबार किया। पेशवाई का राजतिलक करवाया। उत्सवों का प्रवाह-सा आ गया। भंग-बूटी, लड्डू-मिठाई, श्रीखंड इत्यादि की मानो वर्षा हो उठी।

आनंद के इस तूफान में यदि कोई नहीं पड़ा तो लक्ष्मीबाई और उनके पाँच नायक—उनकी लालकुरती सेना अवश्य इनाम की भागी बनी।

ग्वालियर का गायन-वादन शताब्दियों से प्रसिद्ध रहा है। इसलिए उसका अखंड उपयोग किया जाने लगा। नृत्य और गायन से दिन और रात ओत-प्रोत हो गए। ग्वालियर की ऐसी कोई भी नर्तकी और गायिका न थी जिसको अपने कला-कौशल दिखाने का काफी अवसर और समय न मिला हो। कवि सम्मेलन और मुशायरे भी हुए, जिनमें कवि की कल्पना ने शब्दों के पुल बाँध-बाँधकर जमीन-आसमान एक कर दिए। कोई पेशवा की तुलना रामचंद्रजी के साथ कर रहा था और कोई इंद्र के साथ। दूसरी ओर भाँड़ों की नकलें जारी थीं, जिनमें परिहास और अट्टहास के फव्वारे छूट रहे थे।

रानी किसी उत्सव में शामिल नहीं होती थीं। इस वैराग्य-वृत्ति के कारण उनको उत्सवों में बुलाया भी नहीं जाता था।

इन उत्सवों का प्रतिरोध करने के लिए रानी ने पेशवा से भेंट करने का प्रयत्न किया; परंतु वहाँ नाच से छुट्टी मिली तो भंग और निद्रा, और भंग तथा निद्रा से निस्तार पाया तो नाच-रंग। तात्या इस नाच-रंग में डूब तो गया ही था, उसको यह घमंड भी हो गया कि कोई भी अंग्रेज जनरल उसका मुकाबला नहीं कर सकता।

निदान एक दिन तीसरे पहर रानी को ऐश्वर्य-प्रमत्त पेशवा से थोड़ी देर की भेंट प्राप्त हो गई। रानी उदास और क्षुब्ध थीं। पेशवा सोकर उठा था। रात की खुमारी और भंग की छाया अब भी शेष थी। आँखें लाल थीं और शरीर अँगड़ाइयाँ चाहता था। रानी ने बहुत समझाया, परंतु रावसाहब की समझ में कुछ न आया।

❑

: ४५ :

भंग और नाच-रंग का वही क्रम जारी रहा। लड्डुओं और श्रीखंड के लिए इतनी शक्कर खर्च होने लगी कि सिपाहियों को भंग के लिए उसका मिलना दुर्लभ हो गया। श्रीखंड के लिए दही की इतनी माँग हो गई कि मट्ठा अप्राप्य हो गया।

ब्राह्मण-भोजन और दान-पुण्य की आड़ में बेहिसाब भिखमंगी बढ़ गई। कोई प्रतिबंध न था, इसलिए अनेक सिपाही भी इस मुफ्तखोरी में सन गए।

रानी लक्ष्मीबाई ने महसूस किया कि जब वह अपने किले में घिर गई थीं तब स्वतंत्र थीं और अब ग्वालियर में स्वच्छंद होते हुए भी उनकी दशा एक कैदी की-सी है।

रानी का स्वभाव था कि वह जहाँ जाती थीं उसके चौगिर्द का बारीकी के साथ निरीक्षण करती थीं। इस निरीक्षण से उनको युद्ध के लिए मोरचे बनाने में बड़ी सुविधा होती थी। उनकी रणनीति में इस क्रिया का विशेष स्थान था।

उन्होंने देखा—ग्वालियर का किला और पश्चिम-दक्षिण की पहाड़ियाँ ग्वालियर की बस्ती और लश्कर की अच्छी रक्षा कर सकती हैं। पूर्व की ओर पहाड़ियों का सिलसिला लश्कर से लगभग दो मील पड़ता था—यह भी रक्षा का साधन हो सकता था; परंतु उत्तर-पूर्व में मुरार की ओर दिशा खुली पड़ी थी। उसको ढकने के लिए सोनरेखा नाम का केवल एक नाला था, जो लश्कर को तीन ओर से घेरकर कतराता हुआ मुरार की ओर चला गया था। परंतु यह कोई बड़ा साधन न था, उलटे कुछ अड़चनें डाल सकता था। इसके सिवाय दक्षिणवर्ती पहाड़ियों का क्रम, जिसके अगले भाग पर दुर्गा का मंदिर था, शत्रुओं के लिए भी लाभदायक हो सकता था, और पूर्व की ओर की पहाड़ियाँ यदि शत्रु की तोपों के लिए मिल जाएँ तो लश्कर का नगर और ग्वालियर तथा मुरार की बस्तियाँ पूरे संकट में आ जाएँ। उनकी इच्छा थी कि यदि पेशवा की सेना के दस्ते सब ओर से बढ़ती हुई आनेवाली अंग्रेजी सेनाओं का आगे जाकर मुकाबला न करें तो कम-से-कम इन पहाड़ियों पर यथास्थान तोपखाने तो लगा लें। परंतु वहाँ भंग की तरंग और श्रीखंड की अखंडता में उनकी सुनता ही कौन था?

इस निरीक्षण के सिलसिले में उनको एक बाबा गंगादास का पता चला। इनकी कुटी सोनरेखा नाले से उत्तर की ओर कुछ दूरी पर हटकर थी—किले के दक्षिणी छोर से पूर्व की दिशा में। बाबा गंगादास की कुटी फूस और लकड़ी की छान-छप्पर थी। निरीक्षण करते-करते रानी को प्यास लगी। बाबा ने पानी पिलाया। उस समय उनको मालूम हुआ कि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई हैं। उन्होंने बाबा की आँखों में शक्ति का एक अद्भुत आकर्षण देखा।

पेशवा के अनसुनी कर देने के दिन से उनका मन खिन्न-सा रहने लगा था। निरीक्षण करती थीं, लड़ाई के नक्शे बनाती थीं, अपने सिपाहियों को कवायद-परेड कराती थीं और समय पर पूजन-ध्यान करती थीं; परंतु मन का अनमनापन नहीं जाता था।

संध्या होने में विलंब था। लू तेज चल रही थीं। रानी मुंदर के साथ स्त्री-वेश में बाबा गंगादास की कुटी पर पहुँचीं। घोड़े एक पेड़ से बाँध दिए। बाबा के सामने पहुँचकर नमस्कार किया। बाबा ने आसन दिया। ठंडा पानी पिलाया।

रानी ने कहा, 'मैं आपसे कुछ पूछने आई हूँ। मेरा मन अशांत है। आपके उत्तर से शांति मिलने की आशा है।'

बाबा बोले, 'मैं राम भजन के सिवाय कुछ जानता ही नहीं हूँ।'

रानी—'आप ब्राह्मण-भोजन में गए?'

बाबा—'नहीं गया। यहीं बहुत खाने को मिल जाता है।'

रानी—'इसीलिए आपके पास आई। आप टाल नहीं सकेंगे। बताना होगा। आपने अकेले अपने मन को शांत कर लिया तो क्या हुआ? हम लोगों को भी शांति दीजिए।'

बाबा—'पूछो बेटी, यदि समझ में आ जाएगा तो बता दूँगा।'

रानी—'यहाँ थोड़े दिनों में युद्ध होनेवाला है। आपकी कुटी का स्थान रक्षित नहीं है। किसी सुरक्षित स्थान में चले जाइए।'

बाबा—'सुरक्षित है। बात पूछो।'

रानी—'इस देश को स्वराज्य कैसे प्राप्त होगा?'

बाबा—'इस प्रश्न का उत्तर राजा लोग दे सकते हैं।'

रानी—'नहीं दे सकते, तभी आपसे पूछने आई हूँ।'

बाबा—'जैसे प्राप्त होता आया है वैसे ही प्राप्त होगा।'

रानी—'कैसे बाबाजी?'

बाबा—'सेवा, बलिदान, तपस्या से।'

रानी—'हम लोग स्वराज्य कैसे स्थापित कर पावेंगे?'

बाबा—'गड्ढे कैसे भरे जाते हैं। नींव कैसे पूरी की जाती है? एक पत्थर गिरता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा और चौथा, इसी प्रकार और। तब उसके ऊपर भवन खड़ा होता है। नींव के पत्थर भवन को नहीं देख पाते। परंतु भवन खड़ा होता है उन्हींके भरोसे, जो नींव में गड़े हुए हैं। वह गड्ढा या नींव एक पत्थर से नहीं भरी जाती और, न एक दिन में। अनवरत प्रयत्न, निरंतर बलिदान आवश्यक है।'

रानी—'हम लोगों के जीवनकाल में स्वराज्य स्थापित हो जाएगा?'

बाबा—'यह मोह क्यों? तुमने आरंभ किए हुए कार्य को आगे बढ़ा दिया है। अन्य लोग आएँगे। वे बढ़ाते जाएँगे। अभी कसर है। स्वराज्य स्थापना के आदर्शवादी अपने-अपने छोटे-छोटे राज्य बनाकर बैठ जाते हैं। जनता और उनके बीच का अंतर नहीं मिटता—घटता ही बहुत कम है। जनता त्रस्त बनी रहती है। जब जनता का पूरा सहयोग राज्य को प्राप्त हो जाए और राजा टीम-टाम तथा विलासिता का दासत्व छोड़कर प्रजा का सेवक बन जाए तब मानो स्वराज्य की नींव भर गई और भवन बनना आरंभ हो गया। शाश्वत धर्म का रूप बिगड़ गया है। इसके सुधार के बिना वह भवन खड़ा न हो पाएगा।'

रानी—'हम लोग यत्न करते रहें?'

बाबा—'अवश्य, तुम तो भगवान् कृष्ण और गीता की भक्त हो।'

रानी—'आपने कैसे जाना?'

बाबा मुसकराकर बोले, 'सब कहते हैं।'

रानी—'मैं पाठ करती हूँ, परंतु समझते तो आप महात्मा लोग ही हैं।'

बाबा—'गृहस्थ से बढ़कर और कोई साधु नहीं। मुझसे कुछ और नहीं हो सका, इसलिए कुटी बना ली।'

सूर्यास्त होने को आया। रानी को संध्या-ध्यान का स्मरण हुआ। कहा, 'बाबाजी, फिर कभी दर्शन करूँगी। आपकी इतनी बात से चित्त को बहुत शांति मिली।' और नमस्कार करके चली आईं।

मार्ग में मुंदर ने कहा, 'सरकार भी इन्हीं बातों को बताया करती हैं।'

रानी बोलीं, 'परंतु, बाबा के समान होने में बहुत देर है।'



: ४६ :

रावसाहब पेशवा का ऐश-आराम और ब्राह्मण-भोजन जारी रहा। जनरल रोज के उद्योग ने पहले की अपेक्षा और अधिक सबलता पकड़ी।

रोज ने अपनी सेना के कई भाग करके अनुभवी अफसरों के सुपुर्द किया। ब्रिगेडियर स्मिथ को ग्वालियर के पूर्व की ओर पाँच मील पर कोटे की सराय भेजा। एक अफसर को ग्वालियर और आगरे के मार्ग पर, और स्वयं एक प्रबल दल लेकर कालपी से ग्वालियर की ओर ६ जून को बढ़ा। मार्ग में उसको ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ससैन्य मिल गया। १६ जून को जनरल रोज बहादुरपुर ग्राम पर आ गया, जहाँ जयाजीराव की हार हुई थी। जनरल रोज के साथ मध्य भारत और ग्वालियर के पॉलिटिकल एजेंट भी थे। इन्होंने इस बीच में एक चाल खेली—जयाजीराव और दिनकरराव को आगरे से बुलवा लिया।

मुरार में पेशवा की सेना काफी थी, बाकी इधर-उधर बिखरी हुई पड़ी थी। इनमें से अधिकांश सैनिक सिंधिया की सेना के ही नौकर थे। यदि ये बारह-तेरह दिन नष्ट न किए गए होते और यदि इन सैनिकों को विभक्त करके अपने विश्वसनीय दलपतियों की अधीनता में शुरू से ही उनका अनुशासनमय संसर्ग स्थापित कर दिया गया होता तो बात न बिगड़ती।

जनरल रोज ने दो घंटे की कड़ी लड़ाई में पेशवा की मुरारवाली सेना को हरा दिया और मुरार को कब्जे में कर लिया। पेशवा की यह पराजित सेना भागकर ग्वालियर आ गई। अब रावसाहब पेशवा का नशा फरार हुआ।

रोज ने जयाजीराव द्वारा पेशवा के उन सैनिकों को, जो उनकी ग्वालियर फौज के थे, माफी का आश्वासन दिलवाया और यह लिखित घोषणा प्रकाशित करवाई कि अंग्रेज ग्वालियर के राजा को पुन: गद्दी दिलवाने के लिए ही लड़ने के लिए आए हैं। सरदारों और सैनिकों में फूट पड़ गई। उनके मन फिर गए। उत्सवों की रिश्वत बेकार गई।

पेशवा और बाँदा के नवाब किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें?

तब झाँसी की रानी याद आईं; परंतु उनके पास जाने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी—कैसे मुँह दिखाएँ?

तात्या को भेजा।

तात्या कलेजा साधकर उनके सामने गया। उस समय उनके पास जूही और मुंदर थीं। तात्या नमस्कार करने के उपरांत हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

'क्या बात है, सरदार साहब?' रानी ने व्यंग्य किया, 'ये तोपें कहाँ चल रही थीं?'

तात्या ने विनीत भाव से कहा, 'अब क्षमा-प्रार्थना तक का समय नहीं है, बाई साहब।'

रानी बोलीं, 'क्या भंग छानने का भी समय नहीं? एक तान भी सुनने के लिए समय नहीं?'

तात्या उनके पैरों पर गिरने को हुआ, 'रक्षा करो, देवी!'

रानी ने उसको बीच में ही पकड़ लिया।

जूही बोली, 'सरकार, क्षमा कर दीजिए।'

रानी मुसकराईं।

उन्होंने कहा, 'तात्या, तुमसे मुझको बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं। अब भी बहुत कुछ कर सकोगे, परंतु दृढ़ हो जाओ तो।'

तात्या बोला, 'जो-जो आज्ञा होगी, उसका तन-मन से पालन करूँगा। आपको कभी उलाहने का अवसर न दूँगा।'

रानी ने उठती हुई साँस को दबाकर कहा, 'मेरा कदाचित् यह अंतिम युद्ध होगा। क्यों मुंदर, स्मरण है बाबा गंगादास ने क्या कहा था?'

जूही बोली, 'कदापि नहीं, सरकार।'

रानी ने गंभीर स्वर में कहा, 'स्वराज्य के भवन की नींव एक-दो पत्थरों से नहीं भरेगी।'

तात्या अधीर होकर कातरता के साथ मुँह ताकने लगा।

रानी फिर मुसकराईं। तात्या को आश्वासन दिया, 'घबराओ नहीं। पेशवा से कहो कि धैर्य से काम लें। जो योजना बताती हूँ, उसके अनुसार काम करें। कदाचित् विजय प्राप्त हो जाए। न भी हो तो युद्ध-सामग्री और सेना को दक्षिण की ओर ले चलने का प्रबंध रखना। तुम इस क्रिया के आचार्य हो।'

रानी ने तात्या को थोड़े समय में अपनी योजना विस्तारपूर्वक समझा दी और फिर अपने पाँचों सरदारों की बुद्धि में बैठा दी।

१७ जून को सवेरे ब्रिगेडियर स्मिथ ने लड़ाई का बिगुल बजाया। लड़ाई आरंभ हो गई। ब्रिगेडियर स्मिथ का आक्रमण कोटा की सराय से शहर पर होना था, पूर्व दिशा से, जहाँ लक्ष्मीबाई का मोरचा था। जैसे ही अंग्रे्जी सेना रानी की तोपों की मार के भीतर आई, रानी ने गोलंदाजों को संकेत दिया। गोलाबारी होते ही अंग्रेजी सेना की दुर्गति हुई और वह पीछे हटी। रानी के लालकुरती सवारों ने तुरंत छापा मारा। स्मिथ ने एक चतुर चाल खेली—उसने अपनी उस टुकड़ी को और अधिक पीछे खींचा और रानी के सवारों को आगे बढ़ने दिया, इन सवारों के ज्यादा आगे निकल जाने से उनका स्थान खाली हो गया। स्मिथ ने कई दिशाओं से रानी के मोरचों पर आक्रमण किया। घमासान युद्ध हुआ। तलवारें चलीं। लोहे ने लोहे से चिनगारियाँ छिटकाईं। स्मिथ ने रानी के पार्श्व पर अपनी दो पलटनें और फेंकीं जो अभी तक चुपचाप खड़ी थीं। रानी के सवारों को पीछे हटना पड़ा। ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने सामने की पाँतों को फोड़कर रिसाले समेत बढ़ने का संकल्प किया। उद्देश्य था फूलबाग पर अधिकार करने का।

अपने सवारों को पीछे हटता देखकर रानी घोड़े को तेज करके तुरंत उनके समीप पहुँचीं। गुलमुहम्मद दिखाई दिया। उसके पास घोड़ा दौड़ाकर बढ़ाते हुए अंग्रेजों की ओर तलवार की नोक करके बोलीं, 'खान, आज हाथ ढीला क्यों पड़ रहा है?'

गुलमुहम्मद चिल्लाकर बोला, 'हुजूर, हमारा हाथ अब मुलाहिजा करें।'

पठान सरदार चिल्लाता हुआ, रेल-पेल करता हुआ, लालकुरतियों को बढ़ावा देता हुआ आगे बढ़ा। रानी साथ में।

गुलमुहम्मद ने प्रखर स्वर में रानी से प्रार्थना की, 'हुजूर, जूही सरदार का तोपखाना ठीक करें।'

रानी लौट पड़ीं। एक टौरिया के पीछे जूही तोपखाने की मार को जारी किए थी, परंतु लालकुरती को पीछे हटता देखकर हड़बड़ा गई थी। गोरा रिसाला उसकी ओर बढ़ रहा था।

'जूही', रानी ने अदेश दिया, 'तोप का मोहरा एक अंगुल नीचा कर।'

'जो आज्ञा।' उसने उत्साहित होकर कहा और अपने साथियों की सहायता से तुरंत वैसा ही किया।

'मार', रानी ने दूसरा आदेश दिया। तोप ने धाँय किया। गोरे सवार बिछ गए। लौट पड़े।

रानी दूसरे स्थल पर पहुँचीं। वह जहाँ पहुँचतीं वहीं अपने सिपाहियों पर तेज छिड़क देतीं।

यद्यपि उनके योद्धाओं की संख्या कम थी; परंतु वे उनके प्रति अटल विश्वास रखते थे। फिर बढ़े। उनकी रानी उनके साथ—दोनों हाथों से एक समान कौशल और शक्ति के साथ तलवार चलानेवाली।

अंग्रेज वीरता के साथ लड़े और बहुत मरे। रानी के उन थोड़े से लालकुरती सवारों ने तो कमाल ही कर दिया। यथावत् आज्ञा का पालन करते हुए उन लोगों ने अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए। ब्रिगेडियर स्मिथ को रानी ने उस दिन की चालों में और शूरवीरी में मात दी। स्मिथ उनके व्यूह को न भेद सका। उसको लक्ष्मीबाई के मुकाबले में हारकर लौटना पड़ा। अंग्रेजों ने उस दिन का युद्ध बंद करके दम लिया।

रानी ने उस दिन निरंतर परिश्रम किया था और उनके सरदारों ने भी। इसपर भी उन्होंने रात को काफी समय तक अथक परिश्रम किया—योजनाएँ सुधारीं, परिवर्तित कीं, सलाह सम्मति दी, उनके जिन योद्धाओं ने उस दिन के युद्ध में कोई विशेष कार्य किया था, उनको शाबाशी दी और पुरस्कार दिए; गुलमुहम्मद को कुँवर की उपाधि प्रदान की।

ग्वालियर की सेना पर जयाजीराव की उस घोषणा के कारण प्रभाव पड़ चुका था; परंतु उस दिन उस सेना ने कोई ऐसा स्पष्ट काम नहीं किया जिससे उसपर तात्या या पेशवा को अविश्वास होता, परंतु रानी को संदेह था। तात्या और रावसाहब ने निवारण किया। अविश्वास करने से अब होता भी क्या था? लाचार होकर दूसरे दिन के युद्ध में वे ही साधन काम में लाने पड़े जो उनको उपलब्ध थे।



: ४७ :

१८ जून आई। ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी। शुक्रवार। सफेद और पीली पौ फटी। उषा ने अपनी मुसकान बिखेरी। रानी स्नान-ध्यान और गीता के अठारहवें अध्याय के पाठ से निपट चुकीं। झींगुरों की झंकार पर एकाध चिड़िया ने चहक लगाई। रानी ने नित्यवत् अपने रिसाले की लालकुरती की मर्दाना पोशाक पहनी। दोनों ओर एक-एक तलवार बाँधी और पिस्तौलें लटकाईं। गले में मोतियों और हीरों की माला—जिससे संग्राम के घमासान में उनके सिपाहियों को उन्हें पहचानने में सुविधा रहे। लोहे के कुले पर चंदेरी का जरतारी लाल साफा बाँधा। लोहे के दस्ताने और भुजबंद पहने। इतने में उनके पाँचों सरदार आ गए।

मुंदर ने कहा, 'सरकार, घोड़ा लँगड़ाता है। कल की लड़ाई में या तो घायल हो गया है या ठोकर खा गया है।'

रानी ने आज्ञा दी, 'तुरंत दूसरा अच्छा और मजबूत घोड़ा ले आ।'

मुंदर घोड़ा लेने गई और उसने अस्तबल में से एक बहुत तगड़ा और देखने में पानीदार घोड़ा चुना।

अस्तबल के प्रहरी ने कहा, 'हमारे सिंधिया सरकार का यह खास घोड़ा है।'

मुंदर बोली, 'खास ही चाहिए। हमारी सरकार की सवारी में आएगा।'

प्रहरी—'झाँसी की रानी साहब की सवारी में?'

मुंदर—'हाँ।'

प्रहरी—'खैर ठीक है। हमारे सरकार जब इसपर बैठते थे, बहुत फबते थे। इसके जाने में कुछ रंज होता है।'

मुंदर—'क्यों?'

प्रहरी—'जब सरकार इसको न पावेंगे, दुखी होंगे।'

मुंदर जल्दी में थी। घोड़ा लेकर चली आई।

रानी ने अपने सरदारों को हिदायतें दीं।

रानी ने कहा, 'कुँवर गुलमुहम्मद, आज तुमको अपने जौहर का जौहर दिखाना है। कल की लड़ाई का हाल देखकर आज जीत की आशा होती है। परंतु यदि पश्चिम या उत्तर का मोरचा उखड़ जाए तो उसको सँभालना और दक्षिण चल पड़ने की तैयारी में रहना।'

'सरकार', गुलमुहम्मद बोला, 'अम सब पठान आज कट जाने की कसम खाया है। जो बचेगा वो दखन जायगा। आप दखन जाना, सरकार। अमारा राहतगढ़ लेना। अमारा भौत पठान वहाँ मारा गया। उनका यादगार बनवाना।'

'नहीं कुँवर साहब, हम जीतेंगे', रानी ने कहा, 'दक्षिण जाने की बात तो तब उठेगी जब यहाँ कुछ हाथ न रहे। फौजदार के विचार में जीतने की बात पहले उठनी ही चाहिए; परंतु दूसरी बात जो तय की जाए वह बच निकलने और फिर जमकर युद्ध करने की है।'

मुंदर बोली, 'सरकार, कुछ जलपान कर लें। इसी समय से हवा में कुछ गरमी है। लगता है लू बहुत चलेगी।'

रानी ने कहा, 'तुम लोग कुछ खा लो। दामोदरराव को खूब खिला-पिला लो। पीठ पर पानी का प्रबंध रखना। मैं केवल शरबत पीऊँगी।'

जूही—'मैं भी शरबत ही पीऊँगी।'

रानी—'देशमुख, तुम?'

देशमुख—'मैं तो कुछ खा-पी आया।'

रानी—'रघुनाथसिंह ?'

रघुनाथसिंह—'मैं कुछ खाऊँगा।'

रानी—'तुम और मुंदर कुछ खा-पीकर झटपट शरबत बना लाओ।'

मुंदर और रघुनाथसिंह गए। दामोदरराव आ गया। रानी ने उसको खिलाया-पिलाया।

रानी ने जूही से कहा, 'आज तेरी सुगंधि ऐसी बरसे कि बैरी बिछ जाएँ।'

जूही प्रसन्न होकर बोली, 'आज मैं जो कुछ कर सकूँ, कह नहीं सकती; परंतु आँख खुलते ही जो कुछ प्रण किया है उसके अनुसार अवश्य काम करूँगी।'

रानी—'परंतु जो कुछ करे, ठंडक के साथ करना। केवल उत्तेजना से बहुत सहायता नहीं मिलेगी।'

जूही—'तभी तो, सरकार, मैं हँस रही हूँ। एक हसरत मन में रही जाती है—आपको गाना न सुना पाई।'

रानी—'किसी दिन सुनूँगी।'

जूही—'हाँ सरकार, अवश्य।' जूही जरा ज्यादा हँस पड़ी।

रानी—'तेरी हँसी आज कुछ भीषण है।'

जूही—'काम इससे अधिक भीषण होगा, सरकार।'



: ४८ :

मुंदर और रघुनाथसिंह ने कुछ भी न खाकर जेबों में कलेवा डाला और पीठ पर पानी का बरतन कस लिया। झटपट शरबत बनाया।

'मुंदरबाई', रघुनाथसिंह ने कहा, 'रानी साहब का साथ एक क्षण के लिए भी न छूटने पावे। वह आज अंतिम युद्ध लड़ने जा रही हैं।'

मुंदर—'आप कहाँ रहेंगे?'

रघुनाथसिंह—'जहाँ उनकी आज्ञा होगी। वैसे आप लोगों के समीप ही रहने का प्रयत्न करूँगा।'

दूर से दुश्मन के बिगुल के शब्दों की झाँई कान में पड़ी। मुंदर ने रघुनाथसिंह को मस्तक नवाकर प्रणाम किया और उसने ओट में जल्दी-जल्दी आँसू पोंछ डाले। रघुनाथसिंह ने मुंदर को नमस्कार किया। फिर तुरंत दोनों शरबत लिये रानी के पास पहुँचे।

मुंदर ने जूही को पिलाया, रघुनाथसिंह ने रानी को। अंग्रेजों के बिगुल का शब्द साफ सुनाई दिया। तोप का धड़ाका हुआ, गोला सन्नाकर ऊपर से निकल गया। रानी दूसरा कटोरा नहीं पी सकीं।

रानी ने रामचंद्र देशमुख को आदेश किया, 'दामोदर को आज तुम पीठ पर बाँधो। यदि मैं मारी जाऊँ तो इसको किसी तरह दक्षिण सुरक्षित पहुँचा देना। तुमको आज मेरे प्राणों से बढ़कर अपनी रक्षा की चिंता करनी होगी। दूसरी बात यह है कि मारी जाने पर ये विधर्मी मेरी देह को न छूने पाएँ। बस। घोड़ा लाओ।'

मुंदर घोड़ा ले आई। उसकी आँखें छलछला रही थीं। पूर्व दिशा में अरुणिमा फैल गई। अबकी बार कई तोपों का धड़ाका हुआ।

रानी मुसकराईं। बोलीं, 'यह तात्या की तोपों का जवाब है।'

मुंदर की छलछलाती हुई आँखों को देखकर कहा, 'यह समय आँसुओं का नहीं है, मुंदर। जा, तुरंत अपने घोड़े पर सवार हो।'

अपने लिए आए हुए घोड़े को देखकर बोलीं, 'यह अस्तबल को प्यार करनेवाला जानवर है। परंतु अब दूसरे को चुनने का समय ही नहीं है। इसीसे काम निकालूँगी।'

जूही के सिर पर हाथ फेरकर कहा, 'जा जूही अपने तोपखाने पर। छका तो दे इन बैरियों को आज।'

जूही ने प्रणाम किया। जाते हुए कह गई, 'इस जीवन का यथोचित अभिनय आपको न दिखला पाई। खैर!'

अंग्रेजों के गोलों की वर्षा हो उठी। रानी के सब सरदार और सवार घोड़ों पर जम गए और जूही का तोपखाना आग उगलने लगा।

इतने में सूर्य का उदय हुआ।

सूर्य की किरणों ने रानी के सुंदर मुख को प्रदीप्त कर दिया। उनके नेत्रों की ज्योति दुहरे चमत्कार से भासमान हुई। लाल वरदी के ऊपर मोती-हीरों का कंठा दमक उठा और चमक पड़ी म्यान से निकली हुई तलवार!

रानी ने घोड़े को एड़ लगाई। पहले जरा हिचका, फिर तेज हो गया। रानी ने सोचा, कई दिन का बँधा होगा, थोड़ी देर में गरम हो जाएगा।

उत्तर और पश्चिम की दिशाओं में तात्या और रावसाहब के मोरचे थे, दक्षिण में बाँदा के नवाब का। रानी ने पूर्व की ओर झपट लगाई।

गत दिवस की हार के कारण अंग्रेज जनरल सावधान और चिंतित हो गए थे। इन लोगों ने अपनी पैदल पलटनें पूर्व और दक्षिण के बीहड़ में छिपा लीं और हुजर (Hussars) सवारों द्वारा कई दिशाओं से आक्रमण करने की योजना थी। तोपें पीठ पर रक्षा के लिए थीं ही। हुजर सवारों ने हमला कड़ाबीन बंदूकों से किया। बंदूकों का जवाब बंदूकों से दिया गया। रानी ने आक्रमण-पर-आक्रमण करके हुजर सवारों को पीछे हटाया। दोनों ओर के सवारों की बेहिसाब दौड़ से धूल के बादल छा गए। रानी के रणकौशल के मारे अंग्रेज जनरल थर्रा गए। काफी समय हो गया, परंतु अंग्रेजों को पेशबाई मोरचों में से निकल जाने की गुंजाइश न मिली।

जूही की तोपें गजब ढा रही थीं। अंग्रेज नायक ने इन तोपों का मुँह बंद करना तय किया। हुजर सवार बढ़ते जाते थे, मरते जाते थे; परंतु उन्होंने इस तरफ की तोपों को चुप करने का निश्चय कर लिया था। रानी ने जूही की सहायता के लिए कुमुक भेजी। उसी समय उनको खबर मिली कि पेशवा की अधिकांश ग्वालियरी सेना और सरदार अपने महाराज की शरण में चले गए।

मुंदर ने रानी से कहा, 'सवेरे अस्तबल का प्रहरी रिस-रिसकर 'अपने सरकार' का स्मरण कर रहा था। मुझे संदेह हो गया था कि ग्वालियरी कुछ गड़बड़ी करेंगे।'

'गाँठ में समय न होने के कारण कुछ नहीं किया जा सकता था', रानी बोलीं, 'अब जो कुछ संभव है, वह करो।'

इनकी लालकुरती अब तलवार खींचकर आगे बढ़ी। उस धूल-धूसरित प्रकाश में भी तलवारों की चमचमाहट ने चकाचौंध पैदा कर दी।

कुछ ही समय उपरांत समाचार मिला कि ग्वालियरी सेना के परपक्ष में मिल जाने के कारण रावसाहब के दो मोरचे छिन गए और अंग्रेज उसमें घुसने लगे हैं। रानी के पीछे पैदल पलटन थी। उसको स्थिति सँभालने की आज्ञा देकर वह एक ओर आगे बढ़ीं। उधर हुजर सवार जूही के तोपखाने पर जा टूटे। जूही तलवार से भिड़ गई। घिर गई और मारी गई। मरते समय उसने आह तक न की। घिर गई थी, परंतु शत्रु की तलवार चीरने में जिस बात में असमर्थ रही, वह थी जूही की क्षीण मुसकराहट, जो उसके होंठों पर अनंत दिव्यता की गोद में खेल गई।

वरदी के कट जाने पर हुजरों ने देखा कि तोपखाने का अफसर गोरे रंग की एक सुंदर युवती थी! और उसके होंठों पर मुसकराहट थी!!

समाचार मिलते ही रानी ने इस तोपखाने का प्रबंध किया।

इतने में ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने छिपे हुए पैदलों को छिपे हुए स्थानों से निकाला। वे संगीनें सीधी किए रानी के पीछेवाली पैदल पलटन पर दो पार्श्वों से झपटे। पेशवा की पैदल पलटन घबरा गई। उसके पैर उखड़े। भाग उठी। रानी ने प्रोत्साहन, उत्तेजन दिया। परंतु उनके और उस भागती हुई पलटन के बीच में गोरों की संगीनें और हुजरों के घोड़े आ चुके थे।

अंग्रेजों की कड़ाबीनें, संगीनें और तोपें पेशवाई सेना का संहार कर उठीं। पेशवा की दो तोपें भी उन लोगों ने छीन लीं। अंग्रेजी सेना बाढ़ आई हुई नदी की तरह बढ़ने और फैलने लगी।

रानी की रक्षा के लिए लालकुरती सवार अटूट शौर्य और अपार पराक्रम दिखाने लगे। न कड़ाबीन की परवाह, न संगीनों का भय और तलवार तो मानो उनकी ईश्वरीय देन थी। उस तेजस्वी दल ने घंटों अंग्रेजों का प्रचंड सामना किया। रानी धीरे-धीरे पश्चिम-दक्षिण की ओर अपने मोरचे की शेष सेना से मिलने के लिए मुड़ीं। यह मिलान लगभग असंभव था, क्योंकि उस भागती हुई पैदल पलटन और रानी के बीच में बहुसंख्यक हुजर सवार तथा संगीनबरदार पैदल थे। परंतु उन बचे-खुचे लालकुरती वीरों ने अपनी तलवारों की आड़ बनाई।

रानी ने घोड़े की लगाम अपने दाँतों में थामी और दोनों हाथों से तलवार चलाकर अपना मार्ग बनाना आरंभ कर

दिया। दक्षिण–पश्चिम की ओर सोनरेखा नाला था। आगे चलकर बाबा गंगादास की कुटी थी। कुटी के पीछे दक्षिण और पश्चिम की ओर हटती हुई पेशवाई पैदल पलटन।

मुंदर रानी के साथ थी। अगल–बगल रघुनाथसिंह और रामचंद्र देशमुख। पीछे कुँवर गुलमुहम्मद और केवल बीस–पच्चीस अवशिष्ट लाल कुरती सवार। अंग्रेजों ने थोड़ी देर में इन सबके चारों तरफ घेरा डाल दिया। सिमट–सिमटकर उस घेरे को कम करते जा रहे थे।

परंतु रानी की दुहत्थू तलवारें आगे का मार्ग साफ करती चली जा रही थीं। पीछे के वीर सवारों की संख्या घटते–घटते नगण्य हो गई। उसी समय तात्या ने रुहेली और अवधी सैनिकों की सहायता से अंग्रेजों के व्यूह पर प्रहार किया। तात्या कठिन–से–कठिन व्यूह में होकर बच निकलने की रणविद्या का पारंगत पंडित था। अंग्रेज थोड़े से सवारों को लालकुरती का पीछा करने के लिए छोड़कर तात्या की ओर मुड़ गए। सूर्यास्त होने में कुछ विलंब था।

लालकुरती का अंतिम सवार मारा गया। रानी के साथ केवल चार सरदार और उनकी तलवारें रह गईं। पीछे से कड़ाबीन और तलवारवाले दस–पंद्रह गोरे सवार। आगे कुछ संगीनोंवाले गोरे पैदल।

रानी ने पीछे की तरफ देखा, रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद तलवार से अंग्रेजों की संख्या कम कर रहे थे। एक ओर रामचंद्र देशमुख दामोदरराव की रक्षा की चिंता में बरकाव कर–करके लड़ रहा था। रानी ने देशमुख की सहायता के लिए मुंदर को इशारा किया और वह स्वयं संगीनबरदारों को दोनों हाथों की तलवारों से खटाखट साफ करके आगे बढ़ने लगीं। एक संगीनबरदार की हूल रानी के सीने के नीचे पड़ी। उन्होंने उसी समय तलवार से उस संगीनबरदार को खतम किया। हूल करारी थी, परंतु आँतें बच गईं।

रानी ने सोचा, 'स्वराज्य की नींव का पत्थर बनने जा रही हूँ।' रानी के खून बह निकला।

उस संगीनबरदार के खतम होते ही बाकी भागे। रानी आगे निकल गईं। उनके साथी भी दाएँ–बाएँ और पीछे। आठ–दस गोरे घुड़सवार उनको पछियाते हुए।

रघुनाथसिंह पास था। रानी ने कहा, 'मेरी देह को अंग्रेज न छूने पावें।'

गुलमुहम्मद ने भी सुना—और समझ लिया। वह और भी जोर से लड़ा।

एक अंग्रेज सवार ने मुंदर पर पिस्तौल दागी। उसके मुँह से केवल ये शब्द निकले, 'बाई साहब, मैं मरी। मेरी देह... भगवान्।'

अंतिम शब्द के साथ उसने एक दृष्टि रघुनाथसिंह पर डाली और लटक गई।

रानी ने मुड़कर देखा।

रघुनाथसिंह से कहा, 'सँभालो उसे। उसके शरीर को वे न छूने पावें।' और वह घोड़े को मोड़कर अंग्रेज सवारों पर तलवारों की बौछार करने लगीं। कई कटे। मुंदर को मारनेवाला मारा गया।

रघुनाथसिंह फुरती के साथ घोड़े से उतरा। अपना साफा फाड़ा। मुंदर के शव को पीठ पर कसा और घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ा।

गुलमुहम्मद बाकी सवारों से उलझा। रानी ने फिर सोनरेखा नाले की ओर घोड़े को बढ़ाया। देशमुख साथ हो गया।

अंग्रेज सवार चार–पाँच रह गए थे। गुलमुहम्मद उनको बहकावा देकर रानी के साथ हो लिया। रानी तेजी के साथ नाले की ढी पर आ गईं।

घोड़े ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया—बिलकुल अड़ गया। रानी ने पुचकारा। कई प्रयत्न किए परंतु सब व्यर्थ।

वे अंग्रेज सवार आ पहुँचे।

एक गोरे ने पिस्तौल निकाली और रानी पर दाग दी। गोली उनकी बाईं जँघा में पड़ी। वह गले में मोती-हीरों का दमदमाता हुआ कंठा पहने हुए थीं। उस अंग्रेज सवार ने रानी को कोई बड़ा सरदार समझकर विश्वास कर लिया कि अब वह कंठा मेरा हुआ। रानी ने बाएँ हाथ की सहायता से अपना आसन सँभाला। इतने में वह सवार और भी निकट आया। रानी ने दाएँ हाथ के वार से उसको समाप्त कर दिया। उस सवार के पीछे से एक और सवार आगे निकल पड़ा।

रानी ने आगे बढ़ने के लिए फिर एक पैर की एड़ लगाई।

घोड़ा बहुत प्रयत्न करने पर भी अड़ा रहा। दोनों पैरों से खड़ा हो गया। रानी को पीछे खिसकना पड़ा। एक जाँघ काम नहीं कर रही थी। बहुत पीड़ा थी। पेट और जाँघ के घाव से खून के फव्वारे छूट रहे थे।

गुलमुहम्मद आगे बढ़े हुए अंग्रेज सवार की ओर लपका।

परंतु अंग्रेज सवार ने गुलमुहम्मद के आ पहुँचने के पहले ही तलवार का वार रानी के सिर पर किया। वह उनकी दाईं ओर पड़ा। सिर का वह हिस्सा कट गया और दाईं आँख बाहर निकल पड़ी। इसपर भी उन्होंने अपने घातक पर तलवार चलाई और उसका कंधा काट दिया।

गुलमुहम्मद ने उस सवार के ऊपर कसकर भरपूर हाथ छोड़ा। उसके दो टुकड़े हो गए।

बाकी दो-तीन अंग्रेज सवार बचे थे। उनपर गुलमुहम्मद बिजली की तरह टूट पड़ा। उसने एक को घायल कर दिया, दूसरे के घोड़े को लगभग अधमरा। वे तीनों मैदान छोड़कर भाग गए। अब वहाँ कोई शत्रु न था। जब गुलमुहम्मद मुड़ा तो उसने देखा—रामचंद्र देशमुख घोड़े से गिरती हुई रानी को साधे हुए है।

दिन भर के थके-माँदे, भूखे-प्यासे, धूल और खून में सने हुए गुलमुहम्मद ने पश्चिम की आरे मुँह फेरकर कहा, 'खुदा, पाक परवरदिगार रहम, रहम!'

उस कट्टर सिपाही की आँखें आँसुओं को मानो बरसाने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक-हिलककर रोने लगा।

रघुनाथसिंह और देशमुख ने रानी को घोड़े से सँभालकर उतारा। आवेश में आकर उसने अड़ियल घोड़े को एक लात मारी। वह अपने अस्तबल की दिशा में भाग गया।

रघुनाथसिंह ने देशमुख से कहा, 'एक क्षण का भी विलंब नहीं होना चाहिए। अपने घोड़े पर इनको होशियारी के साथ रखो और बाबा गंगादास की कुटी पर चलो। सूर्यास्त होना ही चाहता है।'

देशमुख का गला रुँधा हुआ था। बालक दामोदरराव अपनी माता के लिए चुपचाप रो रहा था।

रामचंद्र ने पुचकारकर कहा, 'इनकी दवा करेंगे, अच्छी हो जाएँगी, रोओ मत।'

रामचंद्र ने रघुनाथसिंह की सहायता से रानी को सँभालकर अपने घोड़े पर रखा।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुँवर साहब, इस कमजोरी से काम और बिगड़ेगा। याद करिए, अपने मालिक ने क्या कहा था? अंग्रेज अब भी मारते-काटते दौड़-धूप कर रहे हैं। यदि आ गए तो रानी साहब की देह का क्या होगा?'

गुलमुहम्मद चौंक पड़ा। साफे के छोर से आँसू पोंछे। गला बिलकुल सूख गया था। आगे बढ़ने का इशारा किया। वे सब द्रुतगति से बाबा गंगादास की कुटी पर पहुँचे।



: ४१ :

बिसूरते हुए दामोदरराव को एक ओर बैठाकर रामचंद्र ने अपनी वरदी पर रानी को लिटाया और बचे हुए साफे के टुकड़े से उनके सिर के घाव को बाँधा। रघुनाथसिंह ने अपनी वरदी पर मुंदर के शव को रख दिया। गुलमुहम्मद ने अपने घोड़े को जरा दूर पेड़ों से अटकाया।

बाबा गंगादास ने पहचान लिया। बोले, 'सीता और सावित्री के देश की लड़कियाँ हैं ये।'

रानी ने पानी के लिए मुँह खोला। बाबा गंगादास तुरंत गंगाजल ले आए। रानी को पिलाया। उनको कुछ चेत आया।

मुँह से पीड़ित स्वर में धीरे से निकला, 'हर हर महादेव!' उनका चेहरा कष्ट के मारे बिलकुल पीला पड़ गया। अचेत हो गईं।

बाबा गंगादास ने पश्चिम की ओर देखकर कहा, 'अभी कुछ प्रकाश है। परंतु अधिक विलंब नहीं। थोड़ी दूर घास की एक गंजी लगी हुई है। उसीपर चिता बनाओ।'

मुंदर की ओर देखकर बोले, 'यह कुटी में रानी लक्ष्मीबाई के साथ कई बार आई थी। इसका तो प्राणांत हो गया।'

रघुनाथसिंह के रुद्ध कंठ से केवल 'जी' निकला।

उसके मुँह में भी बाबा ने गंगाजल की कुछ बूँदें डालीं।

रानी फिर थोड़े से चेत में आईं। कम-से-कम रघुनाथसिंह इत्यादि को यही जान पड़ा। दामोदरराव पास आ गया। उसको अवगत हुआ कि उसकी माँ बच गईं और फिर खड़ी हो जाएँगी। उत्सुकता के साथ उनकी ओर टकटकी लगाई।

रानी के मुँह से बहुत टूटे स्वर में निकला, 'ओ३म् वासुदेवाय नमः।'

इसके उपरांत उनके मुँह से जो कुछ निकला, वह अस्पष्ट था। होंठ हिल रहे थे। वे लोग कान लगाकर सुनने लगे। उनकी समझ में केवल तीन टूटे हुए शब्द आए।

'द...ह...ति नै...नं पावकः' मुखमंडल प्रदीप्त हो गया।

सूर्यास्त हुआ। प्रकाश का अरुण पुंज दिशा के भाल पर था। उसकी अगणित रेखाएँ गगन में फैली हुई थीं।

देशमुख ने बिलखकर कहा, 'झाँसी का सूर्य अस्त हो गया।'

रघुनाथसिंह बिलख-बिलखकर रोने लगा।

दामोदर ने चीत्कार दिया।

बाबा गंगादास ने कहा, 'प्रकाश अनंत है। वह कण-कण को भासमान कर रहा है। फिर उदय होगा। फिर प्रत्येक कण मुखरित हो उठेगा।'



: ५० :

बाबा गंगादास ने सचेत किया, 'झाँसी की रानी के सिधार जाने को अस्त होना कहते हो। यह तुम्हारा मोह है। वह अस्त नहीं हुईं। वह अमर हो गईं। कायरता का त्याग करो। उस घास की गंजी पर इन दोनों देवियों के शव का दाह-संस्कार करो। अंग्रेज इन लोगों की खोज में आते होंगे। शीघ्रता करो।'

वे दोनों सँभले।

देशमुख ने कहा, 'घास की गंजी बड़ी है?'

बाबा गंगादास ने उत्तर दिया, 'गंजी तो छोटी सी है।'

देशमुख कष्टपूर्ण स्वर में बोला, 'झाँसी की रानी के दाह के लिए आज लकड़ी भी सुलभ नहीं! घास की अग्नि तो इन दो शवों को केवल झोंस देगी। सवेरे शत्रु इनके अर्धदग्ध शरीर देखेंगे, हँसेंगे और शायद कहीं फेंक देंगे।'

बाबा ने सिर उठाकर अपनी कुटिया को देखा।

बोले, 'इस कुटिया में काफी लकड़ी है। उधेड़ डालो। अंत्येष्टि का आरंभ करो।'

रघुनाथसिंह ने प्रार्थना की, 'आपकी कुटी की लकड़ी! आप एक कृपा करें तो।'

बाबा ने पूछा, 'क्या?'

रघुनाथसिंह ने उत्तर दिया, 'फिर से कुटी बनाने में आपको असुविधा होगी, इसलिए कुछ भेंट ग्रहण कर लीजिए।'

बाबा मुसकराए।

बोले, 'यह लकड़ी मेरी नहीं है। जिन्होंने पहले दी थी वे फिर दे देंगे। देर मत करो। कुटिया को उधेड़ो।'

देशमुख ने कहा, 'उसमें का सामान बाहर निकाल लिया जाए।'

बाबा भीतर से एक कंबल, तूंबी, चटाई और लँगोटी उठा लाए। बोले, 'बस और कुछ नहीं है। जल्दी करो।'

दोनों शवों को बाहर रखकर, दामोदरराव को एक ओर बिठाया और वे तीनों सिपाही कुटी को उधेड़ने में लग गए। बात-की-बात में कुटी को तोड़कर लकड़ी इकट्ठी कर ली।

गंजी की कुछ घास घोड़ों को डाल दी और कुछ से चिता का काम लिया।

रानी का कंठा उतारकर दामोदरराव के पास रख दिया। मोतियों की एक छोटी कंठी उनके गले में रहने दी। उनका कवच और तवे भी।

चिता चुनने के पश्चात् देशमुख ने रानी लक्ष्मीबाई और मुंदरबाई के शवों को चिता पर रख दिया और अग्नि-संस्कार कर दिया। अपनी और रघुनाथसिंह की वरदियाँ भी चिता पर रख दीं।

आधी घड़ी में चिता प्रज्वलित हो गई।

उस कुटी की भूमि पर रक्त बह गया था। उसको देशमुख ने धो डाला।

परंतु उन रक्त की बूँदों ने पृथ्वी पर जो इतिहास लिख दिया था, वह अमिट रहा।

❑

: ५१ :

कुछ दूरी पर रिसाले की टापों का शब्द सुनाई पड़ा। वह रिसाला अंग्रेजों का था।

देशमुख—'रानी साहब की तलाश में बैरी घूम रहे हैं।'

रघुनाथसिंह—'आप दामोदरराव को लेकर तुरंत निकल जाइए।'

देशमुख—'दीवान साहब, आप क्या झाँसी की ओर जाएँगे?'

रघुनाथसिंह—'झाँसी में मेरा अब क्या रखा है। मैं इन सवारों को मारकर मरूँगा। ये लोग चिता की ओर आएँगे। इसे उठा लेंगे। जाइए, तुरंत जाइए। रात को कहीं छिप जाना। विश्राम करना।'

देशमुख—'कंठे का क्या होगा?'

रघुनाथसिंह—'मृत सिपाहियों के बाल-बच्चों में बाँट देना या कुछ भी करना।'

देशमुख ने दामोदरराव को पीठ पर बाँधा और घोड़े पर सवार होकर चल दिया।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुँवर साहब, आप भी जाइए। मेरे घोड़े को छोड़ दीजिए, उस बेचारे को कोई-न-कोई रख लेगा। आबरे में से मेरी बंदूक और गोली-बारूद का झोला लाने की कृपा करिए।'

गुलमुहम्मद घोड़े के पास गया। दोनों के आबरों में से गोली-बारूद तथा बंदूकें निकाल लीं और दोनों घोड़ों को जीन सहित छोड़ दिया।

गुलमुहम्मद ने रघुनाथसिंह को बंदूक और गोली-बारूद देते हुए कहा, 'दीवान साहब, अम कहाँ जाएगा? अम राहतगढ़ से जब चला तब पाँच सौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहाँ जाएगा? अम भी मरेगा और मारेगा। बाई, हमको मत हटाओ।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'मैं चाहता हूँ आप जिंदा रहें और इनकी पवित्र हड्डियों और भस्म को किसी गैर को न छूने दें। रहा मैं, सो जाने की बहुत जल्दी पड़ रही है। वे अभी रास्ते में होंगी। उनसे जल्दी मिलना है।' और बंदूकें भरने लगा।

रघुनाथसिंह पागलों की तरह हँसा।

गुलमुहम्मद ने एक क्षण सोचा। बोला, 'यह फकीर साहब हड्डियों की हिफाजत करेगा।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'फकीर नहीं करेगा। आप चाहें तो कर सकते हैं।'

'अच्छा', गुलमुहम्मद बोला, 'अम जिंदा रहेगा। खाक और हड्डियों पर चबूतरा बना देगा।'

'अपनी बंदूक भी मुझको दे दो, कुँवर साहब', रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया।

गुलमुहम्मद ने प्रतिवाद किया, 'अम कुँवर साहब नहीं। अम फकीर बनकर रहेगा। गुलसाँई नाम होगा।'

उसने अपनी बंदूक दे दी।

'इसको भर दीजिए', रघुनाथसिंह ने अनुरोध किया।

'बस बाई, अम बंदूक या कोई हथियार नहीं छुएगा। अम खुदापाक की याद में बाकी जिंदगी खतम करेगा।'

एक तरफ जाकर गुलमुहम्मद ने अपनी वरदी जलती हुई चिता पर फेंककर खाक कर दी—केवल साफा रखा। उसके एक टुकड़े की लँगोटी लगाई। बाकी ओढ़ने-बिछाने को रख लिया।

खूब हँसकर बोला, 'अब अम बिलकुल आजाद हो गया बाई।'

रघुनाथसिंह ने दोनों बंदूकें भर लीं। गोली-बारूद के झोले लटकाए गुलमुहम्मद के पास गया। उसको देखकर

विस्मित हुआ।

बोला, 'आप तो सचमुच फकीर हो गए! अच्छा सलाम कुँवर, साँई साहब। भूल-चूक, गलती माफ कीजिए।'

'सलाम', गुलमुहम्मद ने कहा।

जिस ओर से टापों का शब्द आ रहा था, रघुनाथसिंह उसी दिशा में गया। पास जाकर एक आड़ ली। लेट गया। प्रतीति कर ली कि अंग्रेजों का रिसाला है और कुटी की ओर आ रहा है।

'धाँय-धाँय' बंदूक चलाई।

'धाँय-धाँय' अंग्रेजी रिसाले का जवाब आया।

रघुनाथसिंह काफी समय तक रिसाले के सैनिकों को हताहत करता रहा। फिर एक गोली से मारा गया।

चिता साँय-साँय जलती रही।

गुलमुहम्मद चिता से कुछ दूर जाकर लेट गया। साफे के टुकड़े से अपने को ढका। बेहद थका था, सो गया। सवेरे जब आँख खुली तो देखा कि चिता के स्थान पर कुछ जली हड्डियाँ बाकी रह गई हैं।

उसके मुँह से निकल पड़ा, 'ओफ! रानी साहब का सिर्फ यह हड्डी रह गया है। और उस हसीन लड़की का!'

फिर तुरंत उसने अपने मन में कहा, 'ओ! कबी नहीं। वो मरा नहीं। वो कबी नहीं मरेगा। वो मुर्दों को जान बख्शता रहेगा।'

चिता के ठंडे हो जाने पर गुलमुहम्मद ने उस स्थान पर एक चबूतरा बाँधा और कहीं से फूल लाकर उसपर चढ़ाए।

अंग्रेजी सेना का एक दल रानी की ढूँढ़-खोज में वहाँ पर आया। गुलमुहम्मद साँई से उसने पूछा, 'यह किसका मजार है, साँई साहब?'

गुलमुहम्मद ने उत्तर दिया, 'हमारे पीर का, बौ बौत बड़ा बली था।'

❑❑❑

Notes

[←1] इनकी संख्या लगभग आठ सहस्र थी। बाजीराव की पेंशन का एक बड़ा भाग इन लोगों पर खर्च होता था।

[←2]
चरखा। चरखा चलाने की प्रथा बुंदेलखंड में ऊँचे घरानों तक में, घर-घर थी।

[←3]

शिवराव भाऊ गंगाधरराव के पिता थे।

[←4]

यह बाग अब हार्डींगंज हो गया है।

[← 5]

Guirella Warfare.

[←6]

अब इसपर मैकडॉनैल हाई स्कूल और बोर्डिंग हाउस बन गए हैं।

[←7]

अब यहाँ सदर अस्पताल है। अस्पताल के उत्तर में टकसाल मुहल्ला।

[←8]

यह फाटक पिचहत्तर वर्ष तक ज्यों-का-त्यों बंद रहा। १९३३ की सर्दियों में खोला गया।